BIHAR YOGA

श्रीरामचरितमानस

सुन्दरकाण्ड

संकलन एवं सम्पादन

अवलोकितेश्वर



योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत

श्रीरामचरितमानस

सुन्दरकाण्ड

ॐ, प्रेम, मंगलम्

स्वामी निरंजन

श्रीरामचरितमानस

सुन्दरकाण्ड

गोस्वामी तुलसीदास रचित श्रीरामचरितमानस के सुन्दरकाण्ड की 16 शीर्षकों के माध्यम से प्रस्तुति

संकलन एवं सम्पादन

अवलोकितेश्वर

(सुबोध अग्रवाल, सतना)

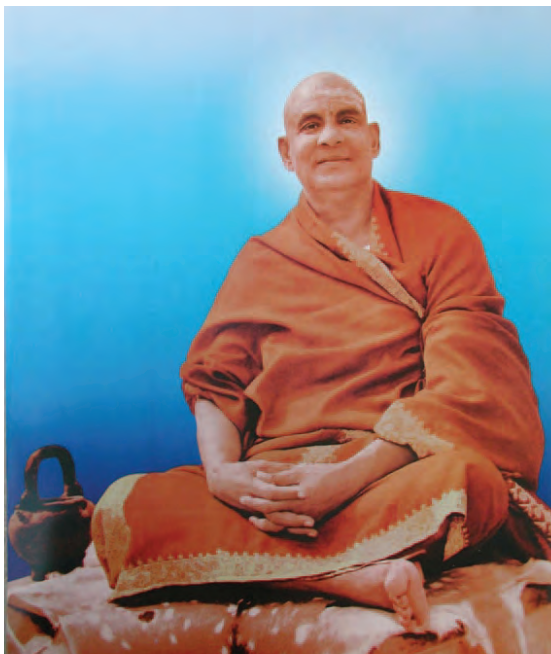


योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट द्वारा प्रथम प्रकाशन 2014

प्रकाशक एवं वितरक—योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट,
मुंगेर, बिहार, भारत
मुद्रक—एजीएन ऑफसेट प्रिंटर्स,
ग्रेटर नोएडा

वेबसाइट : www.biharyoga.net
www.rikhiapeeth.in



सविनय समर्पण

स्वामी शिवानन्द सरस्वती के चरणों में
जिन्होंने स्वामी सत्यानन्द सरस्वती को योग के रहस्यों की शिक्षा दी



नमो नारायण

योगविद्या भारतवर्ष की सबसे प्राचीन संस्कृति और जीवन-पद्धति है तथा इसी विद्या के बल पर भारतवासी प्राचीनकाल में सुखी, समृद्ध और स्वस्थ जीवन बिताते थे। जब से भारत में योग विद्या का ह्रास हुआ, तभी से भारतवासी गरीब, दुःखी और अस्वस्थ हैं। पूजा-पाठ, धर्म-कर्म से शान्ति मिलती है और योगाभ्यास से धन-धान्य, समृद्धि और स्वास्थ्य। भारत में सुख, समृद्धि, शक्ति और स्वास्थ्य के लिए हर व्यक्ति को योगाभ्यास करना चाहिए।

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
रिखियापीठ, 2005

विषय सूची

परिचय

श्रीरामचरितमानस को मेरे पिताजी अपने माता-पिता के समान ही मानते थे, क्योंकि उनके माता-पिता बचपन से ही नहीं थे। उन्होंने अपना सारा जीवन इस ग्रंथ के आधार पर ही प्रेम, आनंद व संतोष के साथ जिया। मुझे बचपन से ही इस ग्रंथ से बहुत लगाव रहा है। मैंने इसकी जीवंतता को नजदीक से देखा है।

मेरे गुरु, श्री स्वामी सत्यानन्द जी की भी इस ग्रंथ के प्रति अगाध श्रद्धा है। रिखिया में उनके सत्संगों के अनुपम संग्रह, भक्ति योग सागर भाग-1 से 7 तक मैंने पढ़े हैं और उन्हें पढ़कर लगा, वे चाहते हैं कि श्रीरामचरितमानस का शब्दानुवाद हो। यह बात मेरे मन में बैठ गयी। 5 दिसंबर 2009 की मध्य रात्रि को जब गुरुदेव महासमाधि में लीन हुए, रात्रि में 2 बजे मेरी नींद अचानक खुल गई। उठकर थोड़ी देर ध्यान किया। उसके बाद यह कार्य मेरे लिये श्री गुरुदेव का सेवा कार्य बन गया।

स्वामी चिन्मयानन्द जी के वरिष्ठ शिष्य स्वामी शंकरानन्द जी, कानपुर आश्रम में रामचरितमानस के एक-एक दोहे पर एक घंटे का प्रवचन दिया करते थे। उनके उपलब्ध प्रवचनों को आधार बनाकर मैंने नोट तैयार किया। स्वामी निरंजनानन्द जी से जब आशीर्वाद और मार्गदर्शन का निवेदन किया तो उन्होंने कहा, कार्य अच्छा है, इसे इतना सरल लिखो कि अनपढ़ व्यक्ति भी समझ जाये। बस फिर क्या था! स्वामीजी की प्रेरणा से सरलीकरण, संपादन, शीर्षक, उपशीर्षक बनते चले गये। स्वामीजी ने कहा कि एक-एक काण्ड लिखते जाओ, हम प्रकाशित करते जायेंगे। सबसे पहले सुंदरकाण्ड तैयार हुआ जिसमें हुनमान जी के सुंदर सेवा कार्य का वर्णन है।

गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचित श्रीरामचरितमानस महाकाव्य है। यह सरस है, इसमें मधु की मिठास है। हम अपनी कार्य सिद्धि के लिए बिना मिठास के जल्दी-जल्दी पाठ कर लेते हैं। राग से, भाव से, रस लेते हुए इसे पढ़ें। आँखों में प्रेम के अश्रु आयेंगे, शरीर रोमांचित हो जाएगा। यह मात्र पुस्तक नहीं है, इसमें अध्यात्म, ज्ञान, भक्ति और प्रेम के साथ-साथ पारिवारिक, व्यवहारिक एवं सामाजिक शिक्षा भी है। यह इतिहास भी है, भूगोल भी है, राजनीति और कूटनीति की शिक्षा भी है। यह हिंदी साहित्य की उच्चतम प्रस्तुति है।

–*अवलोकितेश्वर*

श्रीरामचरितमानस की महिमा

श्री स्वामी सत्यानंद जी के रिखिया सत्संगों से

श्रीरामचरितमानस पाठ से घर में भगवान का निवास

श्रीरामचरितमानस के पाठ से घर में भगवान का निवास हो जाता है। घर में तो भगवान को रहना चाहिये न? हम लोगों के घर में बहुत-से लोग रहते हैं, शैतान भी रहते हैं। इसलिये भगवान का थोड़ा अभाव रहता है। भगवान को अपने घर में लाने के लिये, रखने के लिये रामचरितमानस जितना हो सके पढ़ो, कम-से-कम दो दोहे की चौपाइयाँ ही पढ़ लो। कितने मिनट लगते हैं? बीस ही मिनट तो लगते हैं। इस बात को याद रखना।

साकार ईश्वर की प्राप्ति सबसे बड़ी उपलब्धि

साकार वह है जिसका एक आकार है, एक रूप है और निराकार वह है जो आकार रहित है। तुम एक निराकार अस्तित्व को कैसे देख सकते हो? तुम एक अनाम अस्तित्व को कैसे नाम दे सकते हो? जो कहीं रहता नहीं उसे कैसे खोज सकते हो? मैं तो ऐसे ईश्वर की चाह करता हूँ, जिसका एक नाम हो, एक रूप हो, जिसका घर हो, पता हो। इसलिये मैंने उन्हें रघुनाथ कुटीर में प्रतिष्ठित कर रखा है। मैं प्रतिदिन उस कुटीर का ध्यान और उनकी पूजा-अर्चना करता हूँ। मैं सच्चाईपूर्वक कह सकता हूँ कि मेरे भगवान वहाँ निवास करते हैं। रामचरितमानस से मैंने यह सीखा है कि ईश्वर सर्वत्र विद्यमान है, किंतु तुम्हें उन्हें किसी एक स्थान पर स्थापित करना है। जैसे पानी तो सभी जगह उपलब्ध होता है, पर तुम पीते अपने कुएँ से ही हो।

मेरे जीवन को दिशा प्रदान की

वेद, उपनिषद, बाइबिल, कुरान और अन्य अनेक आध्यात्मिक ग्रंथ, जिनके प्रति मेरे मन में अपार श्रद्धा है, उनके गहन अध्ययन के उपरांत मैंने उनका पाठ रामचरितमानस के पाठ के बाद बन्द कर दिया है। इस एक ग्रंथ ने मेरे जीवन को दिशा प्रदान की है। मेरे जीवन का सबसे बड़ा व्यवधान यह था कि मैं ईश्वर के विषय में कुछ अधिक ही जान गया था। मैं उनके विषय में गहन चिंतन कर सकता था, परंतु वे केवल मेरे मन की परिधि में ही सीमित रहे, उससे आगे मैं नहीं बढ़ सका। यह ग्रंथ मुझे मन और बुद्धि की गुरुत्वाकर्षण शक्ति से बाहर ले गया। अब तो मात्र मैं इसी ग्रंथ का पाठ करता हूँ। मैं सोचता हूँ कि आध्यात्मिक लोगों को, जो कुछ अनुभव करना चाहते हैं, उन्हें रामायण अवश्य पढ़नी चाहिये।

इसमें मधु की मिठास है

मैंने रामचरितमानस जैसा सरस ग्रंथ नहीं देखा है। भगवद्गीता ज्ञान का भंडार है, परंतु रामचरितमानस में मधु की मिठास है। मैं सदा एकांत में रहा हूँ। मेरा जीवन नीरस रहा है। रामचरितमानस हमारे इस नीरस जीवन में अमृत की मिठास लेकर आया।

जीवनोपयोगी उपदेश इसकी विशेषता है

वास्तविक ज्ञान तो जीवनोपयोगी उपदेश है। इस ग्रंथ में जीवन दर्शन की जो शिक्षा है, वह मानवीय संबंधों पर आधारित है। वह संबंध पति-पत्नी का प्रेम हो, या दो भाइयों का परस्पर प्रेम हो, या फिर पिता-पुत्र का प्रेम हो, कैसे इन संबंधों को जीना चाहिये और कैसे ये संबंध बिगड़ते हैं, इन सभी पर उदाहरणों का भंडार है इसमें। यही रामचरितमानस की विशेषता है।

जीवन की संपूर्ण रूपरेखा है

रामचरितमानस मात्र धर्मग्रंथ नहीं है। इसमें हमारे जीवन के द्वन्द्वों, हताशाओं और निराशाओं का चित्रण है। जिस दिन तुम माँ के गर्भ में आये, उस दिन से तुम्हारे कब्र में दफन होने के दिन तक का संपूर्ण चित्र प्रस्तुत करने वाला यह ग्रंथ है। इस जीवन के कई पहलू होते हैं, कई रिश्ते होते हैं, मन होता है, कार्य व्यापार होते हैं, विश्वास, अविश्वास, झूठ, सच और न जाने कितने

रूप होते हैं। इस ग्रंथ में इन सबके समाधान की रूपरेखा मिलेगी। यह जीवन की एक समयसारिणी है। जीवन एक सतत् यात्रा है। इसके लिये एक समय सारिणी अवश्य होनी चाहिये।

पात्रों को प्रतीक मानने से साधना नष्ट होती है

पहले मैं रावण, वनवास, अयोध्या, जनकपुरी, सबको प्रतीक मानता था, अलंकारिक ढंग से समझता था पर अब नहीं। अब मैं मानने से इंकार करता हूँ क्योंकि इससे मेरी साधना नष्ट होती है। मैं राम को उसी रूप में मानता हूँ, जिस रूप में तुलसीदास जी ने उन्हें प्रस्तुत किया है। मैं राम को उस रूप में नहीं मानता हूँ जिस रूप में उनको आध्यात्मिक रामायण में प्रस्तुत किया गया है।

राम जी के सुंदर शरीर का मन में दर्शन हो

भगवान श्रीराम की कृपा रहे, उनके सुंदर शरीर का मन में भक्तिपूर्वक दर्शन होता रहे, उनके प्रति अपनी श्रद्धा नित्य निरंतर बढ़ती जाये और सीता जी के सुंदर चरित्र को देखकर हृदय गद्‌गद् हो जाये, आँखों में आँसू भर जाएँ, दिल एकदम आह्लादित हो जाये। और फिर उसी में अपना सुंदर मन धीरे-धीरे निराकार में लीन हो जाता है। रामचरितमानस में सीधे-सीधे जो लिखा है उतना ही पकड़ो, उसके अलावा अपना दिमाग मत लगाओ। दिमाग लगाने से भगवान मिलते नहीं बल्कि भागते हैं।

ग्रामीण साक्षरता का सर्वोत्तम उपाय

यहाँ गाँव की एक स्त्री से हमने पूछा, पढ़ना-लिखना क्यों नहीं सीखती हो? उसने कहा, क्या करें स्वामीजी, गोबर ही तो उठाना है, घर-गृहस्थी ही तो देखनी है। हमने सोचा ठीक तो है, उसको बैंक में कोई खाता तो खोलना नहीं है उसकी तो सीमित आवश्यकता है। कुछ दिनों के बाद हम दूसरे लोगों को रामायण दे रहे थे, तो उसने कहा हमको भी दीजिये न। हमने कहा पढ़ोगी? तो बोली, हाँ पढ़ेंगे। सच में दुबारा जब आई तो रामायण पढ़ने लग गयी थी। मुझे तो उस स्त्री के माध्यम से अचानक अनुभूति हुई। यह भारतीय मनोविज्ञान है, क्योंकि भारत का आदमी कहता है मैं पढ़ूँ क्यों? हम गाँव के लोगों के बीच साक्षर शब्द का प्रयोग नहीं करते। हम इनसे कहते हैं रामचरितमानस सीखो। और ये वाकई रोज रामचरितमानस पढ़ने लगे। अत: साक्षरता के लिये केवल रामचरितमानस ले लीजिये।

गाँवो में समृद्धि भी आयेगी

रामचरितमानस रोज पढ़ने से मन पर असर होगा, राम का आदर्श आयेगा, सीता का आदर्श आयेगा, रावण के बारे में पता चलेगा और वह असर उनके बच्चों में जायेगा। बच्चों की अनुवांशिक संरचना सुधरेगी, उनके संस्कार सुधरेंगे। और जहाँ रामचरितमानस आयेगा वहाँ समृद्धि भी आयेगी। आज एक झोपड़ी बन गयी, कल एक मकान और जोड़ दिया, परसों एक शौचालय जोड़ दिया। लोग कहेंगे समृद्ध हो रहे हैं। समृद्धि व्यक्ति को नियंत्रण में रखती है, उसे भटकने नहीं देती। लेकिन संपत्ति आदमी को भटका देती है, क्योंकि संपत्ति के साथ अवगुण आते हैं।

राम जी हमारे पूर्वज

श्रीराम वास्तव में हुए हैं। मैं इसलिये नहीं कह रहा हूँ कि वे भगवान हैं बल्कि इसलिये कह रहा हूँ कि वे 'मेरे पूर्वज हैं'। मैंने इक्ष्वाकु वंश में जन्म लिया है। यही सूर्य वंश है जो आगे जाकर रघुवंश बना। उस रघुवंश में राम पैदा हुए हैं। जब हम पैदा हुए, तब पहला मंत्र जो हमारी माँ ने कान में दिया, वह राम था। इसलिये नहीं कि राम भगवान का नाम था बल्कि इसलिये कि राम हमारे पूर्वज का नाम था। राम इस संन्यासी के पूर्वज हैं। हम अपने पूर्वजों को कभी अस्वीकार नहीं कर सकते, चाहे हमारे पास उसके प्रमाण हों या न हों। आज से पन्द्रह पीढ़ी पहले तुम्हारे दादा कहाँ रहते थे, कोइ साक्ष्य दे सकते हो क्या? साक्ष्य नहीं है तो क्या तुम्हारे परदादा थे ही नहीं? आपके पास यदि अपने दादा का प्रमाण नहीं है तो आप उनको नकार दोगे क्या? नहीं। अपने हर पूर्वज को याद करना हमारा धर्म होता है।

राम जी हमेशा पूज्य हैं

श्रीराम का अस्तित्व एक ऐतिहासिक सत्य नहीं था, यह कहना पूरी की पूरी संस्कृति को नकारने के बराबर है। जिस व्यक्ति को लाखों साल से पूजते आये हैं, उसको अस्वीकार नहीं किया जा सकता। जो वस्तु तुमको सुख देती है, वह हमेशा पूज्य है। जो व्यक्ति तुमको रास्ता बतलाता है वह हमेशा पूज्य है। जिस व्यक्ति को लोग निर्भय होकर याद कर सकते हैं वह हमेशा पूज्य है।

भगवान राम का अवतार हुआ है

भगवान युग-युग में अवतार लेते हैं। हर युग में भगवान का एक प्रमुख अवतार होता है और भगवान के अंशावतार तथा अर्चावतार भी होते हैं। पर उनका पूर्णावतार युग में एक बार होता है। राम उनमें से एक थे। मनुष्य भगवान की लीला को नहीं समझ सकता है। भगवान जिस युग में जन्म लेते हैं उस युग के लोगों के लिये लेते हैं। भगवान का अवतार मजाक में नहीं होता है। जब राजा असमर्थ हो जाये, विधि व्यवस्था असफल हो जाये, अच्छे लोगों को कहीं भी रास्ता न मिले, अच्छे लोगों पर अत्याचार होने लगे, भले लोग परेशान हों, तब भगवान का अवतरण होता है।

रामचरितमानस उच्चतम साहित्य

अगर तुम रामचरितमानस को धार्मिक पुस्तक नहीं मानो, सिर्फ साहित्य ही मानो, तो भी इसकी गणना उच्चतम साहित्य में की जायेगी। इसमें जो शब्द हैं, अलंकार हैं, अभिव्यक्तियाँ हैं, सब बहुत अच्छे हैं। तुलसीदास जी ने साहित्य के नौ रसों का वर्णन किया है, पर समाज की मर्यादा नहीं तोड़ी है। बगीचे में सीता जी और राम जी के बीच जो आमना-सामना तुलसीदास जी ने कराया है, उसे कितनी अच्छी तरह से लिखा है – *लोचन मग रामहि उर आनी, दीन्हे पलक कपाट सयानी।* रामचरितमानस में एक युवा लड़की और एक युवा लड़का आँख से आँख मिला रहे हैं, हृदय में भाव आ रहे हैं, उनके मन में मनोरथ उत्पन्न हो रहे हैं, सहेलियाँ मजाक भी कर रही हैं, मगर तुलसीदास जी ने मर्यादा बनाये रखी है। यह बहुत मुश्किल है। *चितवति चकित चहूँ दिसि सीता, कहँ गए नृप किसोर मनु चिंता।* शुरू से आखिरी तक रामचरितमानस साहित्य के दृष्टिकोण से बहुत अच्छा है।

कई भाषाओं का मिश्रण है

इसकी भाषा बुंदेलखण्डी है। उत्तरप्रदेश के दक्षिण में एक जिला है झांसी। वहाँ राजापुर नाम का एक गाँव है। राजापुर तुलसीदास जी का जन्म स्थान है। यह बुंदेलखंडी वहाँ की भाषा है। पन्ना, झांसी, कटनी यहाँ बुंदेलखण्डी है, और इधर रीवां वगैरह में बघेलखंडी है। उन्नीस-बीस का फर्क है दोनों में। इसमें मैथिली भी है, उर्दू भी है, पुरानी अंग्रेजी भी है जैसे 'नीयरे' यानि नजदीक। फारसी भी है और कुमाऊँनी भी है। जब हनुमान जी पेड़ पर बैठे थे और रावण

वहाँ पर आया तो लिखा है *'तरु पल्लव महुँ रहा लुकाई'* कुमाऊँनी में लुकना मतलब छिपना। इसलिये इसमें कई भाषाओं का मिश्रण है।

शिव जी व राम जी के भक्तों के बीच प्रेम करा दिया

तुलसीदास जी की रामचरितमानस ने जो काम किया उसकी वजह से शिवजी के भक्तों और राम जी के भक्तों के बीच प्यार हो गया। नहीं तो पहले इन दोनो में भीं हिंदू-मुसलमान की तरह झंझट था। तिरुपति के मंदिर में शिव जी के भक्तों को घुसने की अनुमति नहीं थी। शिव जी के मंदिर में विष्णु पूजा नहीं होती थी। उन्होंने रामचरितमानस में ऐसा सुंदर उपाय निकाला कि शिव जी राम जी की पूजा करते हैं और राम जी शिवजी की। दोनों को एक दूसरे का दोस्त बना दिया। तो उनके भक्त लोग भी एक दूसरे के दोस्त बन गये। अब वह फर्क खत्म हो गया। ऐसा ही हिंदू-मुसलमान के झगड़े को मिटाने के लिये करना पड़ेगा। संसद और विधान सभा से यह समस्या हल होने वाली नहीं है। इसको हल करेगा तो संत करेगा, दूसरा कोई नहीं कर सकता है।

इसकी ध्वनि भी विशेष है

रामचरितमानस का यदि अर्थ समझ में न आये तो कोई बात नहीं। इसकी ध्वनि का भी बहुत महत्त्व है। मैंने देखा है, लोग केवल पढ़ते-पढ़ते, गाते-गाते रोने लगते हैं। इसकी ध्वनि ही ऐसी है। जो रामचरितमानस पढ़ते हैं वे बतायेंगे कि रामायण पढ़ते-पढ़ते आँखों में आँसू आ जाते हैं या शरीर गर्म हो जाता है।

रामचरितमानस के अनुष्ठान

मैने रामचरितमानस के कई अनुष्ठान किये हैं। नौ दिनों में पूरी रामायण करना, सात दिनों में, फिर एक दिन में। नवरात्रि के समय में तो रोज पूरी रामायण करता था। रात्रि में 12 बजे उठना, स्नान करना और बैठ जाना– *'वर्णानामर्थसंघानाम्'* से *'दह्यन्ति नो मानवः'* तक। संध्या 4 बजे तक खाना नहीं, पीना नहीं, सोना नहीं, कुछ नहीं करना, केवल रामायण। 12 बजे रात्रि से अगले दिन शाम 4 बजे तक, प्रतिदिन 9 दिनों तक।

मेरी इच्छा है इस पर लिखूँ पर आदेश नहीं मिला

रामचरितमानस भगवान राम की कहानी है। यह कथा भगवान शिव ने माता पार्वती से कही है। मेरी इच्छा थी कि मैं इसका अंग्रेजी में अनुवाद करूँ। अभी तक इस ग्रंथ के अंग्रेजी में जो अनुवाद हुए हैं, वे उत्तम कोटि के नहीं है, क्योंकि वे सभी विद्वानों, शिक्षकों और व्याख्याताओं द्वारा लिखे गये हैं, किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा नहीं जो उसकी अनुभूति कर सकता हो। लेकिन मुझे अभी तक ऐसा आदेश प्राप्त नहीं हुआ है। यदि मुझे आदेश मिलेगा तो मैं उसका पालन करूँगा। निश्चय ही, मैंने लिखना त्याग दिया है। मैं अब हाथ में कलम नहीं पकड़ता, परंतु यदि अब मैं कोई पुस्तक अपने हाथ से लिखूँगा, जैसा मैंने पूर्व में किया है तो वह रामचरितमानस का शब्दानुवाद होगा। इसे किसी व्याख्या की आवश्यकता नहीं होगी, क्योंकि यह ग्रंथ तो स्वयं ही श्रद्धा की व्याख्या है।

गोस्वामी तुलसीदास जी

तुलसीदास जी संस्कृत के महान् विद्वान थे, पर उन्होंने रामचरितमानस ग्रामीण हिंदी भाषा बुंदेलखण्डी में लिखा है और इसकी अभिव्यक्ति संस्कृत से भी बेहतर है। इस पुस्तक ने भारत के लाखों लोगों की आत्मा को हिलाकर रख दिया, और राम जी की पूर्ण अभिव्यक्ति एवं उनकी नई परिभाषा दी। सन्त तुलसीदास गंभीर थे, वे ऐसे ही सड़कछाप साधु नहीं थे। जीवन को, सृष्टि को, वेदांत दर्शन, अद्वैत वेदांत दर्शन, विशिष्ट अद्वैत दर्शन को उन्होंने गंभीरता से लिया, ऐसे ही बच्चों की तरह नहीं लिया। बहुत सुंदर ढंग से समझाया उन्होंने। हमारे संत-महात्मा कपोल-कल्पित गप्प नहीं लगाते थे। तुलसीदास जी एक भक्त थे, धर्मपरायण थे और उन्हें श्रीराम के साक्षात् दर्शन प्राप्त थे।

सुंदरकाण्ड

16 मुख्य शीर्षकों द्वारा संक्षिप्त प्रस्तुतीकरण

1. राम जी व हनुमान जी की वंदना *(श्लोक 1 से 3)*

तुलसीदास जी पहले श्लोक में राम जी की वंदना करते हैं, दूसरे में निर्भरा भक्ति माँगते हैं, तीसरे में हनुमान जी की वंदना करते हैं। वंदना करते हुए भगवान का स्वरूप, वे कैसे हैं, उनके सगुण व निर्गुण दोनों रूपों को बताते हैं। श्रीराम सदा हैं। वंदना से इनके गुण-प्रकाश हमारे अंदर जागृत होते हैं। जो श्रद्धावान् हैं उनके लिये भगवान एकदम निकट हैं, वे तो हृदय में ही बैठे हैं। श्रद्धाविहीन व्यक्ति के लिये परमात्मा तो सूर्य, नक्षत्र व तारों से भी दूर है।

2. चार बाधाओं से निपटते हुए हनुमान जी का लंका में प्रवेश

(दोहा 1 से 5)

इन दोहों व चौपाइयों में तुलसीदास जी बताते हैं कि कैसे हनुमान जी श्री राम का स्मरण करते हुए, अपने बल और बुद्धि से लंका में प्रवेश के पहले चार प्रकार की बाधाओं से निपटते हैं। बाधायें अलग-अलग हैं, इसलिये उनसे निपटने के तरीके भी अलग हैं–

1. मैनाक पर्वत– यह प्रेमवश विश्राम के लिये आग्रह करता है, हनुमान जी उसे प्रणाम करते हुए कहते हैं, नहीं, अभी राम कार्य पूरा नहीं हुआ इसलिये विश्राम नहीं।

2. सुरसा– यह कहती है कि हम तो तुम्हें खा ही जायेंगे। हनुमान जी समझ जाते हैं यह नुकसान नहीं पहुँचायेगी, उसे विशाल रूप दिखाकर फिर छोटे-से बनकर मुँह में प्रवेश कर बाहर आकर उसे प्रणाम करते हैं।

3. समुद्र की निशाचरी– यह तो छल से हनुमान जी की छाया ही पकड़ लेती है, जिससे वे उड़ नहीं पाते। इसे मारकर वे आगे बढ़ते हैं।
4. लंकिनी– लंका के प्रवेश द्वार में हनुमान जी को जाने से रोक देती है। उसे वे केवल एक मुक्का मारकर घायल कर देते हैं। वह समझ जाती है कि ये रामदूत हैं, इन्हें अंदर जाने देना है।

हमारे जीवन में भी इसी प्रकार की बाधायें या रुकावटें आती रहती हैं, हमेशा सब से उलझना नहीं चाहिये। जहाँ चुपचाप काम चले वहाँ शांति से अपना काम करना चाहिये। इस प्रसंग के पाठ के समय हनुमान जी से प्रार्थना करें कि वे हमें बुद्धि व बल प्रदान करें, जिससे जीवन में आने वाली समस्याओं से हम कुशलता से निपट सकें।

3. हनुमान जी विभीषण से मिलते हैं

(दोहा 6 से दोहा 8)

इस प्रसंग में हनुमान जी विभीषण को नींद से जगाकर उन्हें श्रीराम की शरण में जाने के लिये प्रेरित कर देते हैं। हनुमान जी के सत्संग से विभीषण में तत्काल परिवर्तन आ जाता है, वे सीता जी के बारे में समस्त जानकारी देकर, अशोकवाटिका तक पहुँचने का रास्ता बताकर, राम के सेवा कार्य में तुरंत लग जाते हैं। हम सब की मनोदशा भी कुछ-कुछ विभीषण की तरह ही है। हम भगवान के लिए पूजा-पाठ तो करते रहते हैं, राम-राम जपते रहते हैं, पर उनकी शरण में जाने का भाव या सेवा कार्य करने की हिम्मत नहीं जुटा पाते। जैसे विभीषण राम भक्त होकर भी रावण की सुविधाओं का प्रयोग करते हुए उसी की सेवा में लगा रहता है, वैसे हम भी भक्ति तो करते हैं राम की पर सेवा अपने काम, क्रोध व लोभ की ही करते रहते हैं। इस प्रसंग को पढ़ते समय ऐसा भाव रखने का प्रयास करें कि हनुमान जी हमें भी सोते से जगाकर, अच्छा कार्य करने की प्रेरणा दें।

4. पेड़ से हनुमान जी अशोकवाटिका की घटनायें देखते हैं

(दोहा 8 से दोहा 12)

हनुमान जी अशोकवाटिका में पेड़ में छिपकर वहाँ होने वाली घटनाओं को देखते हैं। सीता जी अशोक वृक्ष के नीचे बैठी हैं, राम स्मरण में लीन हैं। रावण आता है, वह प्रलोभन देकर सीता जी को अपनी ओर एक बार देखने

का निवेदन करता है। पर सीता जी उसकी ओर देखती तक नहीं। एक तिनके की ओट बनाकर उसको डांटती हैं। हमारे जीवन में भी कई बार ऐसे मौके आते हैं, जब कोई बुराई प्रलोभन देकर अपनी ओर आकर्षित करती है। एक बार भी हम उस ओर गये तो उससे छूटना मुश्किल हो जाता है। सीता जी से प्रार्थना करें कि हमें सदैव बुराई से बचाकर अच्छे मार्ग में चलने की प्रेरणा दें।

5. हनुमान जी सीता जी से मिलते हैं – माँ-पुत्र का मिलन

(दोहा 13 से दोहा 17)

हनुमान जी के सीता जी से मिलने की कथा को तुलसीदास जी अद्‌भुत तरीके से प्रस्तुत करते हैं। इस प्रसंग में हनुमान जी बार-बार सीता जी को माँ कहते हैं, सीता जी भी उन्हें सुत कहकर संबोधित करती हैं। माँ-पुत्र दोनों गद्‌गद्‌ होते हैं, आँखों में प्रेम के आँसू आते हैं, प्रेम में मग्न होते हैं। माँ के आशीर्वाद से पुत्र कृतकृत्य हो जाता है। जैसे छोटा बच्चा अपनी माँ से कहता है, माँ खूब भूख लगी है, खाना दो। वैसे ही हनुमान जी सीता माँ से कहते हैं, मुझे बहुत तेज भूख लगी है, फल खा लूँ? वे आज्ञा देती हैं, हाँ खा ले। इस प्रसंग की कथा मन को भाव-विभोर करती है। सीता माँ एक ओर अपने प्रभु राम का संदेश सुन उनके प्रेम में मग्न होती हैं, वहीं दूसरी ओर वे पुत्र हनुमान के प्रति स्नेह से भाव-विभोर हो जाती हैं। सीता जी के सुंदर चरित्र व हनुमान जी के माँ के प्रति प्रेम व समर्पण को मन में धारण करने का प्रयास करें। इस प्रसंग का भाव सहित पाठ करने से श्री गुरुदेव की कृपा से सीता माँ के प्रेम की अनुभूति हमें भी होगी व पुत्र हनुमान का समर्पण भाव भी हृदय में प्रकट होगा। जो लोग अपनी माँ के प्रति प्रेम भाव नहीं रख पाते, उनका आदर व सम्मान नहीं करते, वे इसका बार-बार पाठ करके अपने अंदर होने वाले परिवर्तन का स्वयं अनुभव कर सकते हैं।

6. हनुमान जी रावण से मिलकर ज्ञान की बातें समझाते हैं

(दोहा 18 से दोहा 24)

सीता माँ का पता लगाने के बाद हनुमान जी रावण के पास जाने की तैयारी करते हैं। भूख की बात कहते हैं, पर प्रयोजन रावण के पास जाने का है। हनुमान जी दूत हैं, दूत का कार्य है कि पूरी बात का पता लगायें। उन्हें रावण से मिलना है, इसलिये अशोकवाटिका में पेडों को तोड़कर रक्षकों को मारकर उन्हें रावण के पास जाने को मजबूर कर देते हैं। रावण पहले सेना भेजता है,

फिर अक्षय कुमार को भेजता है, अंत में मेघनाद को भेजकर उन्हें बाँधकर लाने के लिये कहता है। बस इसी का हनुमान जी को इंतजार था। वे मेघनाद के बंधन में बंधकर रावण के दरबार में पहुँच जाते हैं। रावण उनसे तरह-तरह के प्रश्न पूछता है। हनुमान जी बड़ी चतुराई से निर्भय होकर जवाब देते हैं। फिर उसे समझाते हैं कि श्रीराम की शरण में जाओ। रावण अहंकार के कारण शिक्षा को उल्टा समझकर हनुमान जी को मारने का आदेश दे देता है। रावण के दरबार की पूरी जानकारी हनुमान जी ले लेते हैं। तुलसीदास जी कहते हैं कि हनुमान जी ज्ञान के सागर हैं। रावण से बातचीत के दौरान उनके इस गुण के बारे में पता चलता है। वे सृष्टि की रचना के गूढ़ रहस्य बताते हुए भक्ति की बात कहते हैं। यह सब हम सबके लिये बहुत बड़ी शिक्षा है।

7. लंका में हनुमान जी आग लगा देते हैं

(दोहा 24 से दोहा 26)

श्रीराम पग-पग पर हनुमान जी की सहायता करते हैं। रावण की बुद्धि पलट जाती है, वह हनुमान जी की पूँछ जलाने का आदेश दे देता है। हनुमान जी की पूँछ में आग लगते साथ ही प्रभु की प्रेरणा से आँधी-तूफान चलने लगता है और आग शीघ्रता से लंका में फैल जाती है। इस प्रसंग का पाठ करते समय हनुमान जी से प्रार्थना कर लें कि हे महाराज, हमारा हृदय तमाम उल्टे-सीधे विचारों और तनावों से भर गया है। सब करके देख लिया, पर मन ठीक ही नहीं होता, तनाव बने रहते हैं। हे हनुमान जी, कभी आग लगी पूँछ हमारे कलुषित हृदय में भी घुमा दीजिए जिससे सारी बुराइयाँ जलकर भस्म हो जायें, मन एकदम निर्मल हो जाये और हदय में अच्छे-अच्छे विचार आने लगें।

8. माँ सीता से निशानी व संदेश ले हनुमान प्रभु तक पहुँचते हैं

(दोहा 27 से दोहा 29)

हनुमान जी बहुत बुद्धिमान और चतुर हैं, वे कच्ची बात नहीं करते। सीता जी से कहते हैं, हे माता! आप ऐसा चिन्ह दें जिससे प्रभु मान लें कि मैं आपसे मिलकर आया हूँ। सीता माँ ने मान लिया–हाँ, ठीक बात है। वे निशानी देकर प्रभु राम के लिये संदेश देती हैं। तब हनुमान जी वापस प्रभु राम के पास जाते हैं। सीता माँ का संदेश हम सबके लिये भी है। हम भी प्रार्थना करें कि हे प्रभु! आप दीनों पर दया करने वाले हैं, हम दीन-हीन अवस्था में

हैं, हमारे ऊपर कृपा करें, हमारे भारी कष्टों को दूर करें। *दीन दयाल बिरिदु संभारी। हरहु नाथ मम संकट भारी॥* यह चौपाई बहुत प्रसिद्ध है, इसे गाते रहना चाहिये।

9. श्रीराम कृतज्ञ हो हनुमान जी को भक्ति का वरदान देते हैं

(दोहा 30 से दोहा 34)

हनुमान जी ने सब कार्य किया पर वे चुप रहते हैं। जाम्बवंत प्रभु राम को हनुमान जी द्वारा किये कार्यों का वर्णन करते हैं। श्रीराम जब उनसे पूछते हैं कि बताओ जानकी कैसे रहती हैं, कैसे प्राणों की रक्षा करती हैं, तब वे वहाँ का सारा हाल बताते हैं। तुलसीदास जी की काव्य कला देखने लायक है। वे कैसे जानकी माँ की दशा का वर्णन करते हैं। एक-एक शब्द की रचना पर ध्यान दें, मन भाव-विभोर हो जायेगा। श्रीराम हनुमान के प्रति कृतज्ञता व्यक्त कर अपने आप को ॠणी मान लेते हैं। तुरन्त हनुमान प्रभु के चरणों में लेट जाते हैं। प्रभु के चरण हैं, हनुमान का सिर है, प्रभु उनके सिर पर हाथ फेर रहे हैं। कथा का यह स्थान इतना महत्त्वपूर्ण है कि शंकर जी को यहाँ पर कथा रोकनी पड़ जाती है। वे कथा सुनाते-सुनाते उस स्थिति में पहुँच जाते हैं जब वे हनुमान बने थे। प्रभु राम के प्रेम में मग्न हो जाते हैं, मन को स्थिर कर फिर से कथा आगे बढ़ाते हैं। हनुमान भक्ति का वरदान माँगकर अपने प्रभु को ॠणमुक्त कर देते हैं। इस प्रसंग को सुनने, पाठ करने से श्रीराम के चरणों में प्रेम उत्पन्न हो जाता है। यह बात शंकर जी स्वयं पार्वती जी से कहते हैं।

10. श्रीराम वानर सेना सहित समुद्र किनारे पहुँचते हैं

(दोहा 34 से दोहा 35)

हनुमान जी से सीता जी की खबर मिलते ही श्रीराम वानर सेना सहित समुद्र की तरफ चलकर रामेश्वरम् तक पहुँचते हैं। पूरी वानर सेना पर प्रभु अपनी कृपा दृष्टि डालते हैं, सेना और शक्तिशाली हो जाती है। इस प्रसंग का पाठ करते समय सोचें कि प्रभु की कृपा दृष्टि हम पर भी है। हम उन्हें न देख पायें पर वे तो हमें देख लें, इतना ही हमारे जीवन के लिये पर्याप्त है। इस प्रसंग में तुलसीदास जी पृथ्वी की स्थिति के वैज्ञानिक तथ्य को पौराणिक तरीके से बड़े ही काव्यात्मक ढंग से प्रस्तुत करते हैं। उनकी काव्य कला के दर्शन कर अपने

मन को गद्‌गद् करें। जब हम सेवा कार्य करें तब अपने मन में यह भाव लाने का अभ्यास करें कि हम श्रीराम की सेना के एक वानर हैं। हमारे ऊपर प्रभु की दृष्टि है, कार्य उन्हीं का है, हम करते जा रहे हैं।

11. मंदोदरी रावण को समझाती है

(दोहा 36 से दोहा 37)

यहाँ से तुलसीदास जी मंदोदरी का चरित्र आरंभ करते हैं। श्रीरामचरितमानस में अनेक स्त्रियों के चरित्रों का वर्णन है। मंदोदरी का नाम साध्वी स्त्रियों में गिना जाता है। वह लंका के राजा रावण की पत्नी है, लंका की महारानी है। उसमें निशाचरी भाव नहीं है, वह धर्मात्मा है। स्त्रियों के जीवन में प्राय: यह समस्या आती है कि यदि पति धर्मविरुद्ध आचरण करने वाला हो तो स्त्री को क्या करना चाहिये। इस प्रसंग में इस समस्या का समाधान है।

12. विभीषण रावण को समझाते हैं, विभीषण को देश निकाला

(दोहा 38 से दोहा 41)

मंदोदरी की बात रावण नहीं मानता, चाटुकार मंत्री उसे गलत सलाह देते हैं। इतने में राजदरबार में विभीषण पहुँचते हैं। रावण उसकी भी सलाह पूछता है। वह पहले नीति की बात कहता है, फिर सीता को वापस कर राम शरण में जाने की विनती करता है। रावण उसे लात मारकर भगा देता है। विभीषण का बातचीत करने का तरीका, उसकी विनम्रता, लात खाने पर भी संयम बनाये रखना, अपनी बात पर पूरा भरोसा, ये सब बातें इस प्रसंग को पढ़ते समय ध्यान रखनी चाहिये। यही तो व्यक्तित्व विकास के गुण हैं। अपना बड़ा यदि गलत राह पर है तो उसे कैसे समझायें? वह नहीं मानता तो क्या करें? ये सब बातें सीखने व समझने की हैं।

13. विभीषण श्रीराम शरण में, भक्ति व लंका का राजपद पाया

(दोहा 42 से दोहा 50)

तुलसीदास जी इस प्रसंग का वर्णन 9 दोहों में करते हैं। वास्तव में हम सब की दशा भी विभीषण जैसी है। बनते तो भगवान के भक्त हैं, पर सेवा करते हैं काम, क्रोध, लोभ, मोह की। रावण द्वारा राज्य से निकाल देने पर विभीषण श्रीराम के चरणों का स्मरण करते हुए उनके पास जा रहे हैं, मन में शंका है कि

वे अपनायेंगे कि नहीं। सुग्रीव उसे बंधक बनाना चाहते हैं पर राम जी शरण में आये की रक्षा का वचन निभाते हुए अपने पास बुला लेते हैं। विभीषण दूर से ही प्रभु का दर्शन कर भावविभोर हो जाते हैं, दण्डवत् प्रणाम करते हैं और श्रीराम उन्हें उठाकर अपने हृदय से लगा लेते हैं। विभीषण अपनी कमियाँ बताते हैं, श्रीराम अपना स्वभाव बताते हैं। राम के प्रेम में विभीषण के मन की सारी इच्छायें बहकर समाप्त हो जाती हैं। अब उन्हें कुछ चाहिये ही नहीं। जब कुछ नहीं चाहिये तो श्रीराम उन्हें लंका का राजा बना देते हैं। वे भक्ति माँगते हैं, श्रीराम भक्ति भी दे देते हैं। इस प्रकार श्रीराम की शरण में जाने से विभीषण को लंका जैसे विशाल देश का राज्य मिला और श्रीराम की भक्ति जो बहुत दुर्लभ है, वह भी प्राप्त हो गयी। इसके बाद वे तुरंत भगवान की सेवा में लग जाते हैं, समुद्र से विनती की सलाह देते हैं, आगे भी सेवा कार्य करते हैं। हमें भी धीरे-धीरे अभ्यास करके राम चरणों में प्रेम उत्पन्न करना चाहिये। उस प्रेम में ही मन लगाकर तमाम वासनाओं को बहा दें, मन शांत होगा, प्रभु की कृपा होगी, संसार की तमाम वस्तुयें अपने आप मिलेंगी। प्रभु चरणों में भक्ति से सुख, संतोष व शांति, सब चीजों की प्राप्ति होगी। इसके बाद दूसरों की सेवा में लग जायें। यही भगवान का सबसे बड़ा कार्य है।

14. श्रीराम समुद्र से विनती करते हैं, रावण के दूतों की कथा

(दोहा 50 से दोहा 57)

विभीषण की बात मानकर श्रीराम समुद्र से विनती करते हैं। तीन दिन तक वे समुद्र किनारे बैठे रहते हैं। इस बीच तुलसीदास जी रावण के दूतों की कथा कह देते हैं, जो विभीषण के पीछे-पीछे लंका से आये थे। ये वानर का वेष बनाकर उन्हीं के बीच छुपकर श्रीराम के चरित्रों को देखते हैं। हम भी तो नकली वेष बनाये हैं। अंदर से कुछ हैं, ऊपर से कुछ और दिखते हैं। श्रीराम चरित्र देखते-देखते दूत कपट वेष भूलकर वास्तविक वेष में आ जाते हैं। लक्ष्मण जी उन्हें वानरों से पिटने से बचाकर रावण के नाम संदेश देकर वापस भेज देते हैं। ये दूत राक्षसी स्वभाव भूलकर जब रावण को समझाने लगते हैं, वह इन्हें लात मारकर भगा देता है। ये प्रभु राम के पास आकर मुक्त हो जाते हैं। इस प्रसंग को बार-बार पढ़कर हम भी अंदर व बाहर एक जैसे हो सकते हैं। हमारा भी कपट वेष छूट जाये, कुछ दिन पिटाई हो, फिर लक्ष्मण जी बचा लें, ज्ञान और भक्ति मिले।।

15. अग्नि बाण से डरकर समुद्र सेतु बनाने की विनती करता है

(दोहा 58 से 60)

श्रीराम तीन दिन तक समुद्र के सामने बैठे रहे। जब वह न तो प्रकट हुआ न रास्ता दिया तब कुपित हो श्रीराम लक्ष्मण जी से धुनष-बाण मँगाते हैं, अग्नि बाण से समुद्र को सुखाने का विचार करते हैं। बाण संधान करने के पहले सात नीति वचन बोलकर एक प्रकार से समुद्र को डाँटते हैं। ये नीति वचन हम सबके लिये भी हितकारी हैं। इसके बाद भी समुद्र की तरफ से कोई जवाब नहीं आता। तब श्रीराम अग्नि बाण का संधान कर लेते हैं। उसकी प्रचंड अग्नि से समुद्र के अंदर ज्वाला उठती है, जीव-जंतु व्याकुल होते हैं। बाण चलने के पहले ही समुद्र प्रकट होकर क्षमा माँगता है, 'हे प्रभु नल-नील की सहायता से पुल बनाइये। मैं भी सहायक बनूँगा।' अग्नि बाण को समुद्र अपने दूसरे छोर पर रहने वाले दुष्टों पर चलवाकर उन्हें मरवा देता है। श्रीराम कैसे कार्य करते हैं, कैसे कदम उठाते हैं, कैसे बातचीत करते हैं, यह सब हमें जीवन में उतारने का प्रयास करना चाहिये। यह श्रीराम-समुद्र संवाद बहुत आनंददायक है। अपने आप को इस बातचीत का साक्षी मानकर पाठ करें, लगेगा हम भी इस संवाद में शामिल हैं।

16. सुंदरकाण्ड की महिमा व पाठ की विधि *(छंद व दोहा 60)*

रामकथा की महिमा जानकर यदि पाठ करें तो उसका फल शीघ्र ही प्राप्त होता है। कथा के बीच-बीच में उस प्रसंग की महिमा शंकर जी बताते रहते हैं। प्रत्येक काण्ड के अंत में तुलसीदास जी रामचरित्रों के पाठ से होने वाले लाभों का वर्णन करते हैं। ये चरित्र कलियुग के मल को दूर करते हैं। सुख प्रदान कर दु:खों को दूर करते हैं। ये सभी प्रकार का मंगल प्रदान करने वाले हैं। इनके पाठ की विधि तुलसीदास जी बालकाण्ड के प्रारंभ में बताते हैं *'जे एहि कथहि सनेह समेता। कहिहहिं सुनिहहिं समुझि सचेता॥'* इस कथा को स्नेह से, प्रेम से, प्रसन्नता से, सावधानी के साथ समझ-बूझकर कहें या सुनें। अब अपने को जाँचें कि क्या हम कथा को समझ-बूझकर पढ़ रहे थे? क्या हम प्रसन्नता से पढ़ रहे थे? क्या हमारा मन सजग था? दो ही चौपाइयों का पाठ करें पर समझ कर। इस रामकथा को अपने मन को ही सुनायें, उसे ही समझायें, धीरे-धीरे उसे रास्ते पर लायें। संसार में व्यक्ति अपने को तो ठीक से समझता नहीं, दुनिया को समझाता रहता है, ऐसा करो, वैसा करो। यदि हमारा मन समझ गया तो सारी दुनिया समझ गयी।

सुंदरकाण्ड

16 शीर्षकों व उपशीर्षकों द्वारा विस्तृत प्रस्तुतीकरण

1. राम जी व हनुमान जी की वंदना *(श्लोक 1 से 3)*

तुलसीदास जी पहले श्लोक में राम जी की वंदना करते हैं, दूसरे में निर्भरा भक्ति माँगते हैं, तीसरे में हनुमान जी की वंदना करते हैं। वंदना करते हुए भगवान का स्वरूप, वे कैसे हैं, उनके सगुण व निर्गुण, दोनों रूपों को बताते हैं। वंदना से इनके गुण प्रकाश हमारे अंदर जागृत होते हैं। जो श्रद्धावान् हैं उनके लिये भगवान एकदम निकट हैं, वे तो हृदय में ही बैठे हैं। श्रद्धाविहीन व्यक्तियों के लिये परमात्मा तो सूर्य, नक्षत्र व तारों से भी दूर हैं।

राम जी की वंदना

शान्तं शाश्वतमप्रमेयमनघं निर्वाणशान्तिप्रदं
ब्रह्माशम्भुफणीन्द्रसेव्यमनिशं वेदान्तवेद्यं विभुम्।
रामाख्यं जगदीश्वरं सुरगुरुं मायामनुष्यं हरिं
वन्देऽहं करुणाकरं रघुवरं भूपालचूडामणिम्॥ श्लोक 1॥

शान्तं– राम जी सदा शांत रहते हैं। नारदजी ने जब उन्हें श्राप दिया तो वे शांत रहे, परशुराम जी ने उन्हें बहुत बातें कहीं पर वे शांत रहे। *शाश्वतं*–भगवान राम सदैव हैं। उनकी शांति भी सदा रहती है। ऐसा नहीं है कि उन्होंने त्रेतायुग में अवतार लिया, लीला समाप्त हुई और अब वे नहीं हैं। वे सगुण व निर्गुण दोनो रूपों में हमेशा रहते हैं। उन्होंने तुलसीदास जी को कलियुग में ही चित्रकूट में दर्शन दिये। *अप्रमेयं*– उन्हें प्रमाणों से सिद्ध नहीं किया जा सकता है। वे

मन व बुद्धि को प्रकाशित करने वाले हैं, इसलिये उनकी पकड़ में नहीं आते हैं। *अनघं*– वे शुद्ध व पवित्र हैं। जो उन्हें स्मरण करता है वह भी पापरहित हो जाता है। *निर्वाणशान्तिप्रदं*– वे निर्वाण व शांति देने वाले हैं। राम-कथा पढने व स्मरण करने से हमारे मन के तमाम कलुषित विचार समाप्त होते हैं, अंदर में शांति आती है। हमारे पास सब कुछ हो, पर अशांति हो तो हम सुखी नहीं रह सकते। *ब्रह्मा शम्भु फणीन्द्र सेव्यं अनिशं*– ब्रह्मा जी, शंकर जी व शेषनाग सदैव राम जी की सेवा में लगे रहते हैं। *वेदान्तवेद्यं*– वेदों के द्वारा ही उन्हें जाना जा सकता है। किसी भी चीज को जानने का एक तरीका होता है। जैसे स्वाद को जानना है तो वस्तु को जीभ पर रखना पड़ेगा, आप कान या आँख से स्वाद नहीं ले सकते। उसी प्रकार भगवान को जानने का तरीका उपनिषदों में दिया गया है, जिसे वेदांत कहते हैं। श्रीरामचरितमानस में भी उपनिषदों का सार है, अतः इसके प्रेमपूर्वक पाठ से राम जी के दर्शन हो सकते हैं, उन्हें जाना जा सकता है। *विभुम्*– सर्वव्यापक हैं। *रामाख्यं*– उस परमात्मा का नाम राम है। राम उनकी आख्या है। वे सबके हृदय में रमण कर रहे हैं, इसलिये राम है। *जगदीश्वरं*– श्री राम पूरे संसार के स्वामी हैं, ईश्वर हैं। *सुरगुरुं*– वे देवताओं के भी गुरु हैं। सुर मायने अच्छे गुण, वे अच्छे गुणों के स्वामी हैं। *मायामनुष्यं*– इन्होंने अपनी माया से मनुष्य शरीर धारण किया है, जिससे मनुष्य उनकी लीलाओं का स्मरण करे, कहे, सुने, गाये और अपने जीवन में आनंद का अनुभव करे। *हरिं*– ये पापों का, दुःखों का हरण करने वाले हैं, इसलिये हरि कहलाते हैं। *वन्देहं*– हम ऐसे श्री राम की वंदना करते हैं। *करुणाकरं*– ये हम सब को दुःखी देखकर हम पर करुणा करके हमारे दुःखों को दूर करते हैं। *रघुवरं*– रघुकुल में इन्होंने अवतार लिया है, ये रघुकुल के श्रेष्ठ पुरुष हैं। *भूपालचूडामणिम्*– भूपाल मायने पृथ्वी के राजा, चूडामणि मायने सबसे महान्। राजा तो पृथ्वी के थोड़े से हिस्से में राज्य करके जीवों का पालन करते हैं, परंतु श्री राम तो पूरी पृथ्वी के समस्त जीवों का पालन व रक्षण करते हैं।

श्री राम हमें निर्भरा भक्ति प्रदान करें

नान्या स्पृहा रघुपते हृदयेऽस्मदीये
सत्यं वदामि च भवानखिलान्तरात्मा।
भक्तिं प्रयच्छ रघुपुंगव निर्भरां मे
कामादिदोषरहितं कुरु मानसं च॥ श्लोक 2॥

नान्या = अन्य कोई भी, *स्पृहा* = इच्छा या कामना, *रघुपते* = राम जी, *हृदयेऽस्मदीये* = मेरे हृदय में, *सत्यं* = सत्य, *वदामि* = कहता हूँ, *च* = और, *भवान्* = आप, *अखिल* = सबके, *अन्तरात्मा* = अंदर की आत्मा हैं। *भक्तिं* = भक्ति, *प्रयच्छ* = प्रदान कीजिये, *रघुपुंगव* = रघुकुल में श्रेष्ठ, *निर्भरां मे* = मैं आपके उपर आश्रित रहूँ, *कामादि* = कामना आदि, *दोष रहितं* = दोषों को दूर, *कुरु* = करें, *मानसं च* = मेरे मन को।

तुलसीदास जी कहते हैं कि हे रघुवर! मैं सत्य कहता हूँ, मेरे हृदय में किसी भी प्रकार की कोई कामना नहीं है। आप से क्या छुपाना, आप तो सबके हृदय में आत्मा रूप में विराजमान हैं। हे रघुकुल में श्रेष्ठ राम! मुझे निर्भरा भक्ति प्रदान कीजिये। काम इत्यादि दोषों से मेरे मन को मुक्त करिये। निर्भरा भक्ति से आशय है कि हम भगवान पर आश्रित रहें। बच्चे माता-पिता पर आश्रित रहते हैं, बुजुर्ग होने पर माता-पिता बच्चों पर आश्रित हो जाते हैं, पत्नी पति पर निर्भर है, कुछ लोग धन पर ही निर्भर रहते हैं, इस प्रकार संसार में निर्भरता का क्रम चलता ही रहता है। परंतु आंतरिक रूप से हमें भगवान पर ही आश्रित रहने का अभ्यास करना चाहिये। ऐसा करने से हम तनाव से मुक्त हो जाते हैं, सांसारिक कार्य बड़ी सुगमता से पूरे होते हैं, आगे का जीवन भी सुधर जाता है।

हनुमान जी की वंदना

अतुलितबलधामं हेमशैलाभदेहं
दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम्।
सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं
रघुपतिप्रियभक्तं वातजातं नमामि॥ श्लोक 3॥

अतुलितबलधामं = अतुलनीय बलशाली, *हेम* = स्वर्ण, *शैलाभ* = पर्वत के समान, *देहं* = शरीर, *दनुज* = राक्षस, *वन* = जंगल, *कृशानुं* = जलाकर समाप्त कर देना, *ज्ञानिनाम्* = ज्ञानियों में, *अग्रगण्यम्* = सबसे आगे हैं। *सकलगुणनिधानं* = सभी प्रकार के गुणों से भरपूर हैं, *वानराणामधीशं* = वानरों के स्वामी हैं, *रघुपतिप्रियभक्तं* = भगवान राम के प्रिय भक्त हैं, *वातजातं* = वायुपुत्र हैं, *नमामि* = हम उन्हें प्रणाम करते हैं।

तुलसीदास जी हनुमान जी की वंदना करते हुए किष्किन्धाकाण्ड की बात को ही आगे बढ़ाते हुए सुंदरकाण्ड में होने वाली घटनाओं का संकेत देते हैं। *अतुलितबलधामं*– हनुमान जी में अपार बल है, जिसकी तुलना नहीं की जा सकती। वे इतने बलशाली हैं कि समुद्र भी पार कर लेते हैं। *हेमशैलाभदेहं*– किष्किन्धाकाण्ड में जब जाम्बवान् जी ने कहा कि आप चुप क्यों हो, आपका तो जन्म ही श्री राम के कार्य के लिये हुआ है, तब हनुमान जी पर्वत के समान विशाल शरीर धारण कर लेते हैं। उनका शरीर सोने के समान चमकने लगता है। *दनुजवनकृशानुं*– लंका तो निशाचरों का वन ही है, और हनुमान जी वहाँ आग लगा देते हैं। *ज्ञानिनामग्रगण्यम्*– जब मेघनाथ उन्हें नागपाश में बाँधकर रावण के पास ले जाता है वहाँ पर हनुमान जी निर्भय होकर रावण को जो उपदेश देते हैं उससे पता चलता है कि उन्हें कितना ज्ञान है। *सकलगुणनिधानं*– उनमें सकलगुण भी हैं। वे केवल दूत ही नहीं हैं, युद्ध में भी प्रवीण हैं। बातचीत करने में प्रवीण हैं। विभीषण को लंका से निकलवाकर राम जी से मिलवा देते हैं। जब वे भगवान राम के काम में निकलते हैं तो पग-पग में उनके गुणों का पता चलता है। *वानराणामधीशं*– वानरों के राजा सुग्रीव हैं। अंगद युवराज हैं। पर ये तो नाम के राजा हैं, वानरों के हृदय में तो राज हनुमान जी का ही है। *रघुपतिप्रियभक्तं*– भगवान राम के ये परमभक्त हैं। ये सेवा वाले भक्त हैं। उनके अंदर सेवा भाव भरा हुआ है। *वातजातं*– वात मायने वायु, जातं मायने उत्पन्न, इसलिये ये वायुपुत्र भी हैं। जैसे समुद्र के उपर वायु चलती रहती है, वैसे ये भी चलते गए और समुद्र पार कर गए। वायु के समान ये सब जगह जा सकते हैं। *नमामि*– ऐसे महान् हनुमान जी को हम प्रणाम करते हैं। हनुमान जी की प्रार्थना का यह श्लोक बहुत प्रसिद्ध है। इसका अर्थ समझकर भाव के साथ पढ़ें, ताकि हनुमान जी के कुछ गुण हमारे अंदर भी आयें।

2. चार बाधाओं से निपटते हुए हनुमान जी का लंका में प्रवेश

(दोहा 1 से 5)

इन दोहों व चौपाइयों में तुलसीदास जी बताते हैं कि कैसे हनुमान जी श्री राम का स्मरण करते हुए, अपने बल और बुद्धि से लंका में प्रवेश के पहले चार प्रकार की बाधाओं से निपटते हैं। बाधायें अलग-अलग हैं, इसलिये उनसे निपटने के तरीके भी अलग हैं।

1. मैनाक पर्वत– यह प्रेमवश विश्राम के लिये आग्रह करता है, हनुमान जी उसे प्रणाम करते हुए कहते हैं, नहीं, अभी राम कार्य पूरा नहीं हुआ इसलिये विश्राम नहीं।
2. सुरसा– यह कहती है कि हम तो तुम्हें खा ही जायेंगे। हनुमान जी समझ जाते हैं यह नुकसान नहीं पहुँचायेगी, उसे विशाल रूप दिखाकर फिर छोटे-से बनकर मुँह में प्रवेश कर बाहर आकर उसे प्रणाम करते हैं।
3. समुद्र की निशाचरी– यह तो छल से हनुमान जी की छाया ही पकड़ लेती है, जिससे वे उड़ नहीं पाते। इसे मारकर वे आगे बढ़ते हैं।
4. लंकिनी– लंका के प्रवेश द्वार में हनुमान जी को जाने से रोक देती है। उसे वे केवल एक मुक्का मारकर घायल कर देते हैं। वह समझ जाती है कि ये रामदूत हैं, इन्हें अंदर जाने देना है।

हमारे जीवन में भी इसी प्रकार की बाधायें या रुकावटें आती रहती हैं, हमेशा सब से उलझना नहीं चाहिये। जहाँ चुपचाप काम चले वहाँ शांति से अपना काम करना चाहिये। इस प्रसंग के पाठ के समय हनुमान जी से प्रार्थना करें कि वे हमें बुद्धि व बल प्रदान करें, जिससे जीवन में आने वाली समस्याओं से हम कुशलता से निपट सकें।

जामवंत के सुंदर वचन हनुमान जी को अच्छे लगे

जामवंत के बचन सुहाए। सुनि हनुमंत हृदय अति भाए॥ 1.1॥

जामवंत के = जाम्बवान् की, *बचन सुहाए* = सुंदर बातें, *सुनि हनुमंत* = सुनकर हनुमान जी को, *हृदय अति भाए* = उनके मन को भा गईं।

जाम्बवान् के सुंदर वचन हनुमान जी को अच्छे लगे। उन्होंने किष्किंधाकाण्ड में दो सुंदर बातें कही। समुद्र के किनारे जाम्बवान्, अंगद, नल, नील और हनुमान अपने अन्य वानरों के साथ विचार-विमर्श कर रहे हैं कि समुद्र को कैसे पार करके लंका जायें। हनुमान जी चुप हैं। जाम्बवान् ब्रह्माजी के अवतार हैं, सबसे वरिष्ठ हैं, वे कहतें हैं–*'राम काज लगि तव अवतारा'*–हे हनुमान तुम्हारा जन्म ही श्री राम के कार्य के लिये हुआ है। यह पहला सुंदर वचन है। यह शिक्षा है कि हमें भी मनुष्य शरीर भगवान के कार्य के लिये मिला है। दु:खियों की सेवा करना भी भगवान की ही सेवा है। इससे सुंदर कुछ नहीं

है। जीवन में कुछ-न-कुछ भगवान का कार्य करते रहना चाहिये। जाम्बवान् की यह बात सुनते ही हनुमान जी पर्वत की तरह अत्यंत विशालकाय हो गये। सोने जैसा रंग, शरीर में तेज सुशोभित है। हनुमान जी कहते हैं मैं इस समुद्र को खेल में ही पार कर सकता हूँ, रावण को मारकर त्रिकूट पर्वत को उखाड़कर यहाँ ला सकता हूँ। हे जाम्बवान्! मुझे उचित सीख दो, क्या करना चाहिये? तब जाम्बवान् दूसरा सुदंर वचन बोलते हैं कि हे तात, तुम सीता जी का पता लगाकर लौट आओ, फिर प्रभु राम को खबर कर दो, बस। राम स्वयं ही रावण को मारकर सीता जी को वापस ले आयेंगे। कौतुक के लिये वानरों की सेना साथ में लेंगे। इस प्रकार यह शिक्षा है कि जितना कहा जाये उतना ही करो। अति उत्साह में सीमा पार मत करो। सेवक को अपनी मर्यादा में ही रहकर कार्य करना चाहिये।

हनुमान जी राम का स्मरण करके उत्साह से चल दिये

तब लगि मोहि परिखेहु तुम्ह भाई। सहि दुख कंद मूल फल खाई॥ 1.2॥
जब लगि आवौं सीतहि देखी। होइहि काजु मोहि हरष बिसेषी॥ 1.3॥
यह कहि नाइ सबन्हि कहुँ माथा। चलेउ हरषि हियँ धरि रघुनाथा॥ 1.4॥

तब लगि = तब तक, *मोहि* = मेरा, *परिखेहु* = इंतजार करना, *तुम्ह भाई* = तुम सब लोग, *सहि दुख* = दु:ख को सहकर, *कंद मूल फल खाई* = कंद मूल फल खाकर रहना। *जब लगि* = जब तक, *आवौं सीतहि देखी* = मैं सीता जी का पता लगाकर आ जाऊँ, *होइहि काजु* = यह कार्य अवश्य होगा, *मोहि हरष बिसेषी* = क्योंकि मुझे बहुत ही हर्ष हो रहा है। *यह कहि* = ऐसा कहकर के, *नाइ सबन्हि कहुँ माथा* = सब लोगों को मस्तक नवाकर यानि प्रणाम करके, *चलेउ हरषि* = प्रसन्नतापूर्वक चल दिये, *हियँ धरि रघुनाथा* = हृदय में रघुनाथ जी को धारण करके यानि राम का स्मरण करके।

हनुमान जी अपने साथियों से कहते हैं कि तुम लोग इस समुद्र के किनारे तब तक मेरा इंतजार करना जब तक मैं सीता जी का पता लगाकर न आ जाऊँ। वे कोई समय सीमा नहीं बताते हैं, कहते हैं कि तुम लोग कष्टों को सहते हुए इस वन में लगे फल इत्यादि खाते रहना। यह कार्य अवश्य ही पूरा होगा क्योंकि मेरे हृदय में बहुत उत्साह है, प्रसन्नता है। फिर सबको प्रणाम करते हैं।

हनुमान जी के हृदय में तो राम जी सदा वास करते ही हैं। वे राम का स्मरण करते हैं, फिर कार्य प्रारंभ करने के लिये चल देते हैं। कार्य प्रारंभ करने से पूर्व हमें भी भगवान का स्मरण करना चाहिये, हृदय में विश्वास व उत्साह रखना चाहिये, काम अवश्य होगा।

पर्वत के सहारे समुद्र में छलांग लगा दी

सिंधु तीर एक भूधर सुंदर। कौतुक कूदि चढ़ेउ ता ऊपर॥ 1.5॥
बार बार रघुबीर सँभारी। तरकेउ पवनतनय बल भारी॥ 1.6॥
जेहिं गिरि चरन देइ हनुमंता। चलेउ सो गा पाताल तुरंता॥ 1.7॥

सिंधु तीर = समुद्र के किनारे, *एक भूधर सुंदर* = एक सुंदर पर्वत था, *कौतुक* = बिना किसी प्रयास के, *कूदि चढ़ेउ ता ऊपर* = कूदकर उस पर्वत पर चढ़ गये। *बार बार रघुबीर संभारी* = बार-बार राम का नाम लेकर, *तरकेउ* = बडे वेग से छलांग लगा दी, *पवनतनय बल भारी* = अत्यंत बलवान् हनुमान जी ने। *जेहिं गिरि* = जिस पर्वत पर, *चरन देइ हनुमंता* = हनुमान जी ने पैर रखा था, *चलेउ सो गा पाताल तुरंता* = वह पर्वत तुरंत ही धँस गया।

समुद्र के किनारे एक सुंदर पर्वत था, हनुमान जी खेल-ही-खेल में बिना किसी प्रयास के उस पर्वत पर चढ़ गये। वहाँ पर वे बार-बार श्रीराम का स्मरण करते हैं, कि हे प्रभु, अब आप ही सब काम करवायेंगे। इसके बाद अपना बल पर्वत में लगाते हैं और समुद्र के ऊपर अत्यंत वेग से छलांग लगा देते हैं। हनुमान जी इतने शक्तिशाली हैं कि उनके बल से पर्वत जमीन में धँस जाता है। हनुमान जी राम स्मरण से कार्य प्रारंभ करके कार्य करते समय भी राम का स्मरण करते हैं। यही सुंदर शिक्षा है। तनावमुक्त कार्य करने की यही तकनीक है।

श्रीराम के तीर की तरह हनुमान जी चलते हैं

जिमि अमोघ रघुपति कर बाना। एही भाँति चलेउ हनुमाना॥ 1.8॥

जिमि = जैसे, *अमोघ* = जिसका निशाना न चूके, *रघुपति कर बाना* = श्रीराम जी का बाण होता है, *एही भाँति* = इसी प्रकार से, *चलेउ हनुमाना* = हनुमान जी चल दिये।

पर्वत से छलांग लगाकर हनुमान जी समुद्र पर उड़ते चले जा रहे हैं, उसकी तुलना तुलसीदास जी राम के बाण से करते हैं। श्रीराम के बाण में राम की शक्ति है, वह अत्यंत वेग से चलकर एकदम सही निशाने पर लगता है, निशाना कभी चूकता नहीं। इसी प्रकार हनुमान जी बार-बार राम का स्मरण करते हैं जिससे राम की शक्ति ही उनके अन्दर आ जाती है। वे तीर की भाँति बड़े वेग से चलते हुए ठीक निशाने पर, यानि लंका के त्रिकूट पर्वत पर ही सीधे पहुँचते हैं। गति व लक्ष्य श्री राम के बाण की ही तरह है।

मैनाक पर्वत विश्राम का अनुरोध करता है

जलनिधि रघुपति दूत बिचारी। तैं मैनाक होहि श्रमहारी॥ 1.9॥

जलनिधि = समुद्र ने, *रघुपति दूत बिचारी* = राम जी का दूत समझकर, *तैं मैनाक* = मैनाक पर्वत से कहा, *होहि श्रमहारी* = तुम जाकर थकान मिटाओ।

हनुमान जी को इतने वेग से जाते हुए देखकर समुद्र ने विचार किया कि ये राम जी के दूत हैं, थक गये होंगे, इनकी कुछ सहायता करनी चाहिये। मैनाक नाम का पर्वत समुद्र के अन्दर डूबा हुआ था, समुद्र ने उससे कहा कि तुम ऊपर निकल आओ। रामदूत हनुमान जी तुम्हारे ऊपर थोड़ा देर विश्राम कर लेंगे, फिर छलांग लगाकर आगे बढ़ जायेंगे। पर्वत ऊपर आकर हनुमान जी से विश्राम कर लेने का अनुरोध करता है। भगवान के दूत की सेवा भी भगवान की ही सेवा है।

हनुमान जी विश्राम नहीं करते, राम कार्य अभी अधूरा है

हनूमान तेहि परसा कर पुनि कीन्ह प्रनाम।
राम काजु कीन्हें बिनु मोहि कहाँ बिश्राम॥ दोहा 1॥

हनूमान तेहिं = हनुमान जी ने उसको, *परसा कर* = हाथ से छू दिया, *पुनि कीन्ह प्रनाम* = फिर प्रणाम किया, *राम काजु कीन्हें बिनु* = बिना राम का काम किये, *मोहि कहाँ बिश्राम* = मैं आराम नहीं कर सकता।

हनुमान जी का यहाँ कुशल व्यवहार देखने को मिलता है। उन्होंने मैनाक पर्वत पर पैर नहीं रखा, बल्कि हाथ से छू दिया, फिर प्रणाम किया और कहा कि मैं

राम जी का कार्य पूरा किये बिना आराम नहीं कर सकता। उसकी बात रखने के लिये उस पर हाथ रख देते हैं, प्रणाम करते हुए राम कार्य के लिये आगे बढ जाते हैं। जब कोई अच्छा कार्य करने निकलता है तो उसके संबंधियों को दया आती है, वे अपने प्रेमवश, स्नेहवश उसकी सहायता करना चाहते हैं, कहते हैं, अरे आराम कर लो फिर कार्य कर लेना। पर सेवाधर्म कहता है, नहीं इनके स्नेह व प्रेम के चक्कर में मत पड़ो, पहले कार्य पूरा करो।

हनुमान जी की परीक्षा लेने सुरसा आती है

जात पवनसुत देवन्ह देखा। जानैं कहुँ बल बुद्धि बिसेषा॥ 2.1॥
सुरसा नाम अहिन्ह कै माता। पठइन्हि आइ कही तेहिं बाता॥ 2.2॥

जात पवनसुत = पवनपुत्र को जाते हुए, *देवन्ह देखा* = देवताओं ने देखा, *जानैं कहुँ* = यह जानने के लिये कि उनमें कितना, *बल बुद्धि बिसेषा* = विषेश बल व बुद्धि है। *सुरसा नाम* = सुरसा नाम की, *अहिन्ह कै* = सर्पों की, *माता* = माँ, *पठइन्हि* = को भेजा, *आइ कही तेहिं बाता* = वह आकर कहती है।

देवताओं ने भी देखा कि हनुमान जी श्रीराम के कार्य के लिये उड़ते जा रहे हैं। उन्होंने सोचा कि भगवान का सेवा कार्य करने के लिये बड़े बल व बुद्धि की आवश्यकता होती है, पता नहीं ये कार्य कर पायेंगे कि नहीं। अत: देवता उनकी परीक्षा लेने के लिये सर्पों की माँ को, जिसका नाम सुरसा था, भेजते हैं।

रामकार्य पूरा होने तक प्रतीक्षा के लिये हनुमान जी कहते हैं

आजु सुरन्ह मोहि दीन्ह अहारा। सुनत बचन कह पवनकुमारा॥ 2.3॥
राम काजु करि फिरि मैं आवौं। सीता कइ सुधि प्रभुहि सुनावौं॥ 2.4॥
तब तव बदन पैठिहउँ आई। सत्य कहउँ मोहि जान दे माई॥ 2.5॥
कवनेहुँ जतन देइ नहिं जाना। ग्रससि न मोहि कहेउ हनुमाना॥ 2.6॥

आजु = आज, *सुरन्ह* = देवताओं ने, *मोहि* = मुझे, *दीन्ह अहारा* = भोजन प्रदान किया है, *सुनत बचन* = उसकी यह बात सुनकर, *कह पवनकुमारा* = पवनपुत्र बोले। *राम काजु* = राम जी का कार्य, *करि* = करके, *फिरि मैं आवौं* = फिर

मैं लौट आऊँगा, *सीता कइ सुधि* = सीता जी की कुशलता, *प्रभुहि सुनावौं* = प्रभु को बताऊँगा। *तब* = इतना करने के बाद, *तव बदन* = तुम्हारे मुँह में, *पैठिहउँ आई* = आकर बैठ जाऊँगा, *सत्य कहउँ* = मैं सच कहता हूँ, *मोहि जान दे माई* = हे माँ मुझे जाने दे। *कवनेहुँ जतन* = किसी भी प्रकार से, *देइ नहिं जाना* = वह जाने नहीं देती है, *ग्रससि न मोहि* = मुझे खा ले, *कहेउ हनुमाना* = ऐसा हनुमान जी ने कहा।

सुरसा हनुमान जी से कहती है, आज देवताओं ने मुझे बहुत अच्छा भोजन दिया है, मैं तुम्हें खा जाऊँगी। हनुमान जी को रामकार्य की जल्दी है, वे रुकते नहीं, उड़ते-उड़ते ही उससे कहते हैं, मैं सीता जी का पता लगाकर राम जी को उनकी कुशलता की सूचना देकर वापस आता हूँ। हे माँ, मैं सत्य कहता हूँ, कार्य पूरा होने के बाद मैं स्वयं ही तुम्हारे मुँह में बैठ जाऊँगा ताकि तुम मुझे खा सको। हनुमान जी उसे माँ कहकर संबोधन करते हैं। जब वह किसी भी प्रकार से जाने नहीं देती तो कहते हैं, अच्छा तू मुझे खा ले।

सुरसा के मुख में प्रवेश कर हनुमान जी बाहर निकलते हैं

जोजन भरि तेहिं बदनु पसारा। कपि तनु कीन्ह दुगुन बिस्तारा॥ 2.7॥
सोरह जोजन मुख तेहिं ठयऊ। तुरत पवनसुत बत्तिस भयऊ॥ 2.8॥
जस जस सुरसा बदनु बढ़ावा। तासु दून कपि रूप देखावा॥ 2.9॥
सत जोजन तेहिं आनन कीन्हा। अति लघु रूप पवनसुत लीन्हा॥ 2.10॥
बदन पइठि पुनि बाहेर आवा। मागा बिदा ताहि सिरू नावा॥ 2.11॥

जोजन भरि = एक योजन, *तेहिं बदनु पसारा* = उसने अपना मुँह फैलाया, *कपि तनु कीन्ह दुगुन बिस्तारा* = हनुमान जी ने अपने शरीर को उससे दुगुना बड़ा कर लिया। *सोरह जोजन मुख तेहिं ठयऊ* = सुरसा ने अपने मुँह का आकार सोलह योजन कर लिया, *तुरत पवनसुत बत्तिस भयऊ* = पवनपुत्र ने अपना शरीर तुरंत बत्तीस योजन का कर लिया। *जस जस सुरसा बदनु बढ़ावा* = सुरसा जैसे-जैसे अपने मुँह का विस्तार करती है, *तासु दून कपि रूप देखावा* = हनुमान जी अपने शरीर को उसका दुगुना कर लेते हैं। *सत जोजन तेहिं आनन कीन्हा* = उसने अपने मुँह को सौ योजन तक खोल लिया, *अति लघु रूप पवनसुत लीन्हा* = हनुमान जी ने अपने शरीर को एकदम छोटा कर लिया।

बदन पइठि = हनुमान जी उसके मुँह में घुस जाते हैं, *पुनि बाहेर आवा* = फिर बाहर आ जाते हैं, *मागा बिदा ताहि सिरू नावा* = उसे सिर नवाकर प्रणाम करके जाने की आज्ञा मानते हैं।

हनुमान जी का शरीर बड़ा है, सुरसा उन्हें खाने के लिये अपने मुँह को एक योजन तक बड़ा करके खोलती है। हनुमान जी अपने शरीर का आकार उसके मुँह से दुगुना कर लेते हैं। सुरसा अपना मुँह और ऊँचाई में खोलती है। वह 16 योजन तक अपने मुँह का विस्तार कर लेती है, हनुमान जी 32 योजन तक बड़े हो जाते हैं। सुरसा जैसे-जैसे मुँह फैलाती है, हनुमान जी अपने शरीर के आकार को दुगुना करते जाते हैं, जिससे वह खा ही न पाये। अंत में उसने 100 योजन तक मुँह फैलाया, हनुमान जी तुरंत बहुत छोटे हो गये, उसके मुँह में घुसे, जब तक वह मुँह बँद करती, वे बाहर आ गये। सुरसा को सिर नवाकर प्रणाम करके जाने की आज्ञा माँगते हैं।

हनुमान जी परीक्षा में पास, सुरसा आशीर्वाद देती है

मोहि सुरन्ह जेहि लागि पठावा। बुधि बल मरमु तोर मैं पावा॥ 2.12॥

राम काजु सबु करिहहु तुम्ह बल बुद्धि निधान।
आसिष देइ गई सो हरषि चलेउ हनुमान॥ दोहा 2॥

मोहि सुरन्ह = मुझे देवताओं ने, *जेहि लागि पठावा* = जिस काम के लिये भेजा था, *बुधि बल मरमु तोर मैं पावा* = मैने तुम्हारे बुद्धि व बल की परीक्षा ले ली है। *राम काजु सबु करिहहु* = तुम राम जी का सब कार्य करोगे, *तुम्ह बल बुद्धि निधान* = तुम बुद्धि व बल से भरपूर हो। *आसिष देइ गई सो* = ऐसा आशीर्वाद देकर वह चली गई, *हरषि चलेउ हनुमान* = हनुमान जी प्रसन्न होकर आगे उड़ने लगते हैं।

अब सुरसा कहती है, देवताओं ने मुझे तुम्हारी परीक्षा लेने के लिए भेजा था, और हमें पता चल गया कि तुम्हारे अंदर कितना बल है, कितनी बुद्धि है। तुम परीक्षा में पास हो गये। तुम राम जी का कार्य कर सकते हो। हनुमान जी ने सुरसा को माँ कहकर संबोधन किया, तो उसके अंदर भी मातृत्व भाव आ गया, उसने

आशीर्वाद दे दिया कि तुम अपने कार्य में सफल होगे। हनुमान जी में पहले से ही उत्साह था, अब और पक्का हो गया। वे प्रसन्न होकर आगे बढ़ते हैं।

बाधाओं से निपटें, उलझें नहीं

अच्छे कार्य में कई तरह की बाधायें आती हैं, उनसे उलझने के बजाय निपटना पड़ता है। इस प्रसंग में हनुमान जी बल व बुद्धि का प्रयोग करके सुरसा नामक बाधा से निपटे, पर उससे उलझे नहीं, उसे नमस्कार किया। मैनाक पर्वत सहायक रूप में बाधा थी, उसे भी प्रणाम किया, सुरसा बाधक रूप में बाधा थी, उसे भी प्रणाम किया।

राक्षसी का वध कर हनुमान जी समुद्र पार करते हैं

निसिचरि एक सिंधु महुँ रहई। करि माया नभु के खग गहई॥ 3.1 ॥
जीव जंतु जे गगन उड़ाहीं। जल बिलोकि तिन्ह कै परिछाहीं॥ 3.2 ॥
गहइ छाहँ सक सो न उड़ाई। एहि बिधि सदा गगनचर खाई॥ 3.3 ॥
सोइ छल हनूमान कहँ कीन्हा। तासु कपटु कपि तुरतहिं चीन्हा॥ 3.4 ॥
ताहि मारि मारुतसुत बीरा। बारिधि पार गयउ मतिधीरा॥ 3.5 ॥

निसिचरि एक = एक राक्षसी, *सिंधु महुँ रहई* = समुद्र में रहती थी, *करि माया* = वह माया करके, *नभु के खग गहई* = आकाश में उड़ते पक्षी को पकड़ लेती थी। *जीव जंतु जे गगन उड़ाहीं* = आकाश में जो भी जीव या जंतु उड़ा करते थे, *जल बिलोकि तिन्ह कै परिछाहीं* = उनकी परछाईं को जल में देख करके। *गहइ छाहँ* = उस परछाईं को पकड़ लेती थी, *सक सो न उड़ाई* = जिससे वे उड़ नहीं सकते थे, *एहि बिधि* = इस प्रकार, *सदा गगनचर खाई* = वह हमेशा आकाश में उड़ने वाले जीवों को खाया करती थी। *सोइ छल* = वही कपट, *हनूमान कहँ कीन्हा* = हनुमान जी से किया, *तासु कपटु* = उसके कपट को, *कपि तुरतहिं चीन्हा* = हनुमान जी ने तुरंत ही पहिचान लिया। *ताहि मारि* = उसे मारकर , *मारुतसुत बीरा* = वीर पवनपुत्र, *बारिधि पार गयउ* = समुद्र को पार कर लिया, *मतिधीरा* = धीर बुद्धि।

समुद्र के ऊपर से जो जीव-जंतु उड़ते हैं, उनकी परछाई पानी में पड़ती है। समुद्र में एक निशाचरी रहती थी, जो अपने माया के बल से आकाश में उड़ने

वाले पक्षियों की परछाईं को पानी में ही पकड़ लेती थी, जिससे वे उड़ नहीं पाते, फिर वह उन्हें मारकर खा जाती थी। जब हनुमान जी उड़ते हुए वहाँ से निकले तो उसने उनकी परछाईं को भी पकड़ लिया। वे तुरंत समझ गये कि निशाचरी ने हमारी छाया पकड़ ली है, अब हम आगे उड़ नहीं सकते। हनुमान जी तब उसको मार देते हैं और इस प्रकार बाधाओं से निपटते हुए वे समुद्र के पार पहुँच जाते हैं।

जैसी समस्या वैसा निदान

जीवन में समस्याएँ तरह-तरह की आती हैं, उनके निदान भी अलग-अलग हैं। सबसे निपटने का एक ही तरीका नहीं है। सुरसा सामने से आती है, हनुमान जी समझ गये कि यह हमें मारेगी नहीं, इसलिये वे उसे मारते नहीं, अपना बुद्धि-बल दिखाकर उससे निपट कर प्रणाम करते हुए आगे बढ़ जाते हैं। समुद्र की निशाचरी छल से हनुमान जी की छाया को पकड़ती है, वे तुरंत उसकी दुष्टता समझकर उसका वध कर देते हैं।

हनुमान जी लंका के एक विशाल पर्वत पर चढ़ गये

तहाँ जाइ देखी बन सोभा। गुंजत चंचरीक मधु लोभा॥3.6॥
नाना तरू फल फूल सुहाए। खग मृग बृंद देखि मन भाए॥3.7॥
सैल बिसाल देखि एक आगें। ता पर धाइ चढ़ेउ भय त्यागें॥3.8॥
उमा न कछु कपि कै अधिकाई। प्रभु प्रताप जो कालहि खाई॥3.9॥

तहाँ जाइ = वहाँ जाकर, *देखी बन सोभा* = बन की सोभा देखी, *गुंजत चंचरीक* = भौरें गुंजन कर रहे थे, *मधु लोभा* = पुष्प रस की लालच में, *नाना तरू फल फूल सुहाए* = तरह-तरह के पेड़ फल-फूल से शोभित थे, *खग मृग बृंद देखि मन भाए* = पक्षियों और पशुओं के समूह मन को प्रसन्न करने वाले थे। *सैल बिसाल देखि एक आगें* = सामने एक विशाल पर्वत देखकर, *ता पर* = उस पर, *धाइ चढ़ेउ* = दौड़कर चढ़ गये, *भय त्यागें* = बिना किसी डर के, *उमा न कछु कपि कै अधिकाई* = हे उमा, इसमें हनुमान की कोई बड़ाई नहीं है, *प्रभु प्रताप जो कालहि खाई* = प्रभु राम का प्रताप है जो काल को भी खा सकता है।

हनुमान जी समुद्र के उस पार लंका के बाहर पहुँचते हैं। वहाँ अत्यंत सुंदर वन है, जिसमें तरह-तरह के फलों और फूलों से लदे बहुत सारे पेड़ हैं। भौंरें फूल के रस की लालच में गुंजार कर रहे हैं। सुंदर पशु-पक्षियों के समूह मन को भाने वाले हैं। हनुमान जी ने देखा कि सामने एक सुंदर पर्वत है। वे दौड़कर बिना किसी थकान के उस पर्वत की चोटी तक पहुँच गये। शंकर जी पार्वती जी को कथा सुना रहे हैं, पार्वती जी आश्चर्य से कहती होंगी कि अच्छा, दौड़कर चढ़ गये, तब शंकर जी बोले, उमा तुम बार-बार भूल जाती हो, हनुमान में जो ताकत है वह उनकी अपनी नहीं है, वह तो राम जी की ताकत है। प्रभु राम का ऐसा प्रताप है कि वे काल को भी खा जाएँ। हनुमान के अंदर राम विराजमान हैं, उन्हीं की शक्ति काम कर रही है।

पर्वत से लंका एक विशाल दुर्ग व समुद्र से घिरी दिखती है

गिरि पर चढ़ि लंका तेहिं देखी। कहि न जाइ अति दुर्ग बिसेषी॥3.10॥
अति उतंग जलनिधि चहु पासा। कनक कोट कर परम प्रकासा॥3.11॥

गिरि पर चढ़ि = पर्वत पर चढ़कर, *लंका तेहिं देखी* = हनुमान जी ने लंका देखी, *कहि न जाइ* = उसका वर्णन नहीं किया जा सकता, *अति दुर्ग बिसेषी* = बहुत ही बड़ा किला है। *अति उतंग* = वह अत्यंत ऊँचा है, *जलनिधि चहु पासा* = उसके चारों तरफ समुद्र है, *कनक कोट* = सोने के परकोटे यानि चहारदीवारी हैं, *कर परम प्रकासा* = जिनका परम प्रकाश हो रहा है।

एक पर्वत से दूसरा पर्वत दिखाई देता है। हनुमान जी एक पर्वत के शिखर पर चढ़कर देखते हैं कि लंका तो बहुत बड़ा दुर्ग है, चारों तरफ समुद्र है, बड़ी ऊँची सोने की दीवारें चारो तरफ हैं, सोने की चमक का प्रकाश फैला हुआ है। दुर्ग मायने जिसमें बड़ी कठिनाई से प्रवेश कर सकें। राजा लोग दुर्ग बनाकर रहते थे, दुर्ग के चारों तरफ खाई बनाकर पानी भरा जाता था। परंतु लंका में खाई की जरूरत ही नहीं, उसके चारों तरफ तो समुद्र का पानी ही भरा है।

लंका में तीन पर्वत हैं

लंका नाम की नगरी तीन पर्वतों पर बसी है। एक पर्वत का नाम सुंदर है, जिसकी अशोकवाटिका में सीता जी हैं। दूसरे पर्वत का नाम सुमेरु है, इसके

ऊपर चपटी भूमि है जहाँ पर ठहरा जा सकता है। यहाँ पर राम जी वानर सेना सहित आकर रुकते हैं। तीसरे पर्वत पर लंका है जहाँ रावण रहता है।

लंका की सुंदरता, मार्ग व उनपर चलने वाली सवारियाँ

कनक कोट बिचित्र मनि कृत सुंदरायतना घना।
चउहट्ट हट्ट सुबट्ट बीथीं चारु पुर बहु बिधि बना॥
गज बाजि खच्चर निकर पदचर रथ बरूथन्हि को गनै।
बहुरूप निसिचर जूथ अतिबल सेन बरनत नहिं बनै॥ छंद॥

कनक कोट = सोने की चहारदीवारें , *बिचित्र मनि कृत* = विचित्र मणियों से जड़ी हुईं, *सुंदरायतना* = सुंदर भवन, *घना* = घनी बस्ती। *चउहट्ट* = चौराहे, *हट्ट* = बाजार, *सुबट्ट* = राजमार्ग, *बीथीं* = गलियाँ, *चारु पुर* = सुंदर नगर, *बहु बिधि बना* = बहुत प्रकार से सजा है। *गज* = हाथी, *बाजि* = घोड़े, *खच्चर* = खच्चर, *निकर* = समूह, *पदचर* = पैदल, *रथ बरूथन्हि* = रथों के समूह, *को गनै* = गिनती नहीं की जा सकती। *बहुरूप* = अनेकों रूप के, *निसिचर जूथ* = राक्षसों के दल हैं, *अतिबल सेन* = अत्यंत बलवान् सेना है, *बरनत नहिं बनै* = वर्णन नहीं किया जा सकता है।

हनुमान जी सुबह उड़े, लंका पहुँचते-पहुँचते शाम हो गयी। संध्याकाल में हनुमान जी लंका नगर की सुंदरता पर्वत से देख रहे हैं। विचित्र मणियों से सजा हुआ सोने का परकोटा है, उसके अंदर घनी बस्ती है, बहुत सुंदर-सुंदर घर बने हैं। चौराहे हैं, राजमार्ग है, गलियाँ हैं, बाजार हैं, यह सुंदर नगर बहुत प्रकार से सजा हुआ है। इन मार्गों पर हनुमान जी को सवारियाँ भी दिखाई दीं। हाथी, घोड़े, खच्चर व रथ की सवारियों के झुण्ड के झुण्ड मार्गों में चल रहे थे, इनकी बहुत बड़ी संख्या थी। अनेक रूपों के राक्षस युवकों के समूह थे, अत्यंत बलवती और बड़ी सेना भी थी।

लंका की हरियाली, पानी व्यवस्था और स्त्रियों का भ्रमण

बन बाग उपबन बाटिका सर कूप बापीं सोहहीं।
नर नाग सुर गंधर्ब कन्या रूप मुनि मन मोहहीं॥ छंद॥

बन = जंगल, *बाग* = बगीचे, *उपबन* = व्यवस्थित वन, *बाटिका* = पुष्पों के पौधे लगे हों, *सर* = तालाब, *कूप* = कुएँ, *बापीं* = बावली, *सोहहीं* = सुंदर, *नर नाग सुर गंधर्ब कन्या रूप* = मनुष्य, नाग, देवता, गंधर्व की सुंदर कन्याओं का रूप, *मुनि मन मोहहीं* = मुनियों के मन को भी मोहने वाला है।

पर्वत से ही हनुमान जी ने देखा कि लंका में सुंदर हरियाली है, वन हैं मायने जहाँ पेड़-पौधे बिना किसी योजना के लगे हैं, जहाँ भी जो उग आया है उगा है। कुछ जगह एक कतार से पेड़ लगाये गये हैं, इन्हें उपवन कहते हैं। बगीचे भी हैं जहाँ फलों के पेड़ लगे हैं। इसके अलावा पुष्पवाटिकायें भी हैं। पानी की अच्छी व्यवस्था है। तालाब, कुएँ, बावलियाँ बहुत सुंदर हैं। सायंकाल के समय मनुष्यों, नागों, देवताओं व गंधर्वों आदि जातियों की कन्यायें शृंगार करके नगर में भ्रमण कर रही हैं।

लंका में पहलवानों के अखाड़े

कहुँ माल देह बिसाल सैल समान अतिबल गर्जहीं।
नाना अखारेन्ह भिरहिं बहुबिधि एक एकन्ह तर्जहीं॥ छंद॥

कहुँ = कहीं, *माल* = मल्ल, *देह बिसाल* = बहुत बड़ा शरीर, *सैल समान* = पर्वत के समान, *अतिबल* = अत्यंत बलशाली, *गर्जहीं* = गर्जना कर रहे हैं, *नाना अखारेन्ह* = तरह-तरह के अखाड़ों में, *भिरहिं बहुबिधि* = बहुत तरह से आपस मे कुश्ती करते हैं, *एक एकन्ह तर्जहीं* = एक दूसरे को ललकारते हैं।

जहाँ मिट्टी खोदकर जमीन को मुलायम करके कुश्ती लड़ते हैं उसे कुश्ती का अखाड़ा कहते हैं। हनुमान जी ने देखा कि बड़े-बड़े मल्ल पहलवान जिनके शरीर पर्वत के समान विशाल व अत्यंत बलशाली हैं, वे चिल्लाते हैं, मल्ल युद्ध करते हैं, ताल ठोककर गर्जना करते हुए एक-दूसरे को ललकारते हैं। वे अनेकों अखाड़ों में बहुत प्रकार से कुश्ती करते हैं।

लंका में सुरक्षा व भोजन व्यवस्था

करि जतन भट कोटिन्ह बिकट तन नगर चहुँ दिसि रच्छहीं।
कहुँ महिष मानुष धेनु खर अज खल निसाचर भच्छहीं॥ छंद॥

करि जतन = तरह-तरह से प्रयत्न करके, *भट* = वीर सैनिक, *कोटिन्ह* = करोड़ों की संख्या में, *बिकट तन* = शरीर बड़े भयंकर हैं, *नगर चहुँ दिसि रच्छहीं* = चारों दिशाओं से लंका नगर की रक्षा कर रहे हैं। *कहुँ महिष* = कहीं भैंसें, *मानुष* = मनुष्य, *धेनु* = गाय, *खर* = गधे, *अज* = बकरे, *खल निसाचर भच्छहीं* = ये दुष्ट राक्षस खा रहे हैं।

हनुमान जी को नगर में प्रवेश करना है, इसलिये नगर की रक्षा कैसे हो रही है, इसको भी देखते हैं। नाना प्रकार के यत्न करके करोड़ों की संख्या में बड़े वीर और भयंकर शरीर वाले सैनिक चारों तरफ से लंका नगरी की रक्षा कर रहे हैं। अब हनुमान जी देखते हैं कि ये लोग खाते क्या हैं। उन्होंने देखा कि कहीं-कहीं भैंसों को, कहीं मनुष्यों को, तो कहीं गउओं, गधों और बकरों को ये दुष्ट निशाचर खा रहे थे।

ये निशाचर राम जी के तीर से मुक्ति पायेंगे

एहि लागि तुलसीदास इन्ह की कथा कछु एक है कही।
रघुबीर सर तीरथ सरीरन्हि त्यागि गति पैहहिं सही।। छंद।।

एहि लागि = इस कारण से, *तुलसीदास* = तुलसीदास जी ने, *इन्ह की* = इन लोगों की, *कथा कछु एक है कही* = थोड़ी सी कथा का वर्णन किया है, *रघुबीर सर* = राम जी के बाण, *तीरथ* = जो तीर्थ के समान हैं, *सरीरन्हि त्यागि* = उनमें अपने शरीर का त्याग करके, *गति पैहहिं सही* = ये निश्चय ही परमगति को प्राप्त करेंगे।

तुलसीदास जी कहते हैं कि हमने लंका की सुंदरता और वहाँ रहने वाले निशाचरों की थोड़ी सी कथा इसलिये कही है क्योंकि ये सब श्रीराम के तीरों से मारे जायेंगे। श्रीराम के तीर तीर्थों के समान है। जैसे तीर्थ में मरने वाले की मुक्ति होती है वैसे ही इन राक्षसों को भी सद्‌गति प्राप्त होने वाली है। ये सब भी जीव ही हैं, जिन्होंने राक्षसी शरीर प्राप्त कर रखा है।

हनुमान जी सोचते हैं रात में लंका में प्रवेश करेंगे

पुर रखवारे देखि बहु कपि मन कीन्ह बिचार।
अति लघु रूप धरौं निसि नगर करौं पइसार।। दोहा 3।।

पुर रखवारे देखि बहु = बहुत से लोग नगर की रक्षा कर रहे हैं यह देखकर, *कपि मन कीन्ह बिचार* = हनुमान जी ने मन में विचार किया, *अति लघु रूप धरौं* = बहुत छोटा सा बना करके, *निसि* = रात्रि में, *नगर करौं पइसार* = लंका नगर में प्रवेश करूँ।

हनुमान जी सोचते हैं कि बहुत सारे निशाचर इस नगर की रक्षा में लगे हैं, यदि हम विशाल शरीर धारण करके इनसे लड़ते हैं, इन्हें मारते हैं तो नगर में खलबली मच जायेगी, इसलिये अच्छा है कि छोटा-सा शरीर बनाओ और रात में चुपचाप अंदर प्रवेश करो, जिससे ये निशाचर हमें देख भी न पावें।

छोटा-सा रूप बनाकर प्रवेश द्वार पर हनुमान जी पहुँचे

मसक समान रूप कपि धरी। लंकहि चलेउ सुमिरि नरहरी॥ 4.1॥

मसक समान = मच्छर के समान, *रूप कपि धरी* = हनुमान जी छोटे-से हो गये, *लंकहि चलेउ* = लंका की ओर चलते हैं, *सुमिरि नरहरी* = नरसिंह भगवान का स्मरण करके।

हनुमान जी ने अपने शरीर को बहुत छोटा कर लिया। तुलसीदास जी उनके छोटे-से शरीर की तुलना मच्छर जैसे अत्यंत छोटे प्राणी से करते हैं। वे मच्छर के समान छोटा शरीर बनाकर नरसिंह भगवान का स्मरण कर लंका में प्रवेश के लिये प्रवेश द्वार पर पहुँचते हैं। भगवान ने अनेक अवतार लिये हैं; जहाँ पर वीरता व युद्ध की बात आती है वहाँ नरसिंह अवतार का स्मरण किया जाता है। यहाँ पर हनुमान जी ने नाम तो लिया राम का पर स्मरण किया उनके नरसिंह अवतार वाले विकराल रूप का।

हनुमान जी को लंकिनी रोकती है

नाम लंकिनी एक निसिचरी। सो कह चलेसि मोहि निंदरी॥ 4.2॥
जानेहि नहीं मरमु सठ मोरा। मोर अहार जहाँ लगि चोरा॥ 4.3॥

नाम लंकिनी एक निसिचरी = लंकिनी नाम की एक राक्षसी थी, *सो कह* = वह कहती है, *चलेसि मोहि निंदरी* = अरे मेरी उपेक्षा करके कहाँ जा रहे हो,

जानेहि नहीं मरमु सठ मोरा = अरे मूर्ख तुम मेरे भेद को नहीं जानते हो, *मोर अहार* = मेरा भोजन है, *जहाँ लगि चोरा* = जितने भी चोर हैं।

अब जैसे ही हनुमान जी लंका के द्वार पर पहुँचते हैं, तो लंकिनी नाम की एक निशाचरी वहाँ मिल गई। बस उसने छोटे-से रूप वाले हनुमान जी को देख लिया। कहने लगी, 'अच्छा तुम मेरा निरादार करके चले जा रहे हो, मुझसे कुछ पूछने की जरूरत ही नहीं, तुम मेरी शक्ति को नहीं जानते। जितने भी चोर हैं, उन्हीं को मैं खाती हूँ, हमारा भोजन चोर ही हैं। इसलिये तुम होशियार हो जाओ।'

लंकिनी को हनुमान जी एक घूँसा मारते हैं

मुठिका एक महा कपि हनी। रुधिर बमत धरनीं ढनमनी॥ 4.4॥

मुठिका एक महा कपि हनी = महावीर हनुमान जी ने उसे एक घूँसा मारा, *रुधिर बमत* = उसके मुँह से खून बहने लगता है, *धरनीं ढनमनी* = जमीन पर वह गिर जाती है।

हनुमान जी ने देखा यह तो मुझे खाने के लिये ही तैयार है। उन्होंने उसे एक घूँसा मार दिया। घूँसे की मार से उसके होश-हवास बिगड़ जाते हैं। हनुमान जी ने उसे बायें हाथ का घूँसा धीरे से मारा था। ज्यादा जोर से मारते तो वह समुद्र की राक्षसी के समान मर जाती। घूँसा लगते ही उसके मुँह से खून बहने लगा और वह धड़ाम से जमीन पर गिर जाती है।

लंकिनी ब्रह्मा जी के वरदान की बात कहती है

पुनि संभारि उठी सो लंका। जोरि पानि कर बिनय ससंका॥ 4.5॥
जब रावनहि ब्रह्म बर दीन्हा। चलत बिरंचि कहा मोहि चीन्हा॥ 4.6॥
बिकल होसि तैं कपि के मारे। तब जानेसु निसिचर संघारे॥ 4.7॥

पुनि संभारि = फिर संभलकर, *उठी सो लंका* = वह लंका की अधिष्ठात्री लंकिनी उठती है, *जोरि पानि कर* = दोनों हाथ जोड़कर, *बिनय ससंका* = भय के साथ प्रार्थना करती है। *जब रावनहि* = जब रावण को, *ब्रह्म बर दीन्हा* =

ब्रह्मा जी ने वरदान दिया था, *चलत बिरंचि* = चलते समय ब्रह्मा जी ने, *कहा मोहि चीन्हा* = मुझे यह पहचान बता दी थी। *बिकल होसि तैं कपि के मारे* = जब तुम वानर के मारने से व्याकुल हो जाओगी, *तब जानेसु* = तब तुम समझ जाना, *निसिचर संघारे* = अब राक्षस मारे जायेंगे।

हनुमान जी मुक्का मारने के बाद थोड़ी देर देखते रहे कि उसकी क्या गति हुई। वह संभलकर उठती है, हाथ जोड़कर हनुमान जी से प्रार्थना करते हुए कहती है, 'जब रावण की तपस्या से प्रसन्न होकर ब्रह्मा जी उसे वरदान दे रहे थे कि तुम किसी के मारे न मरो, लंका को राजधानी बनाकर तीनों भाई वहाँ लंबे समय तक राज करो, तब मैं भी वहाँ थी। ब्रह्मा जी जब वरदान देकर चलने लगे तो मैंने पूछा कि ये निशाचर इतने दिनों तक लंका में वास करेंगे तब हमारी क्या दशा होगी। तब उन्होंने मुझे यह पहचान बतायी कि जब एक वानर के घूँसा मारने से तुम्हारा हाल-बेहाल हो जाए तब समझ जाना कि ये सारे निशाचर मारे जायेंगे, तुम्हारी लंका निशाचर-विहीन हो जायेगी।

लंकिनी लंका की अधिष्ठात्री देवी है

यहाँ पर तुलसीदास जी कहते हैं कि *पुनि संभारि उठी सो लंका* – ये लंकिनी लंका ही है। जैसे प्रत्येक नगर का एक अधिष्ठान देवता होता है, वैसे ही लंका नगरी की अधिष्ठान देवी लंकिनी है। चूँकि वहाँ निशाचर लोग वास कर रहे हैं, रावण की सेवा में हैं, इसलिये उसका रूप निशाचरी का है। हनुमान जी ने एक तरह से लंका को ही घूँसा मारकर उसके विनाश का संकेत दे दिया।

लंकिनी धन्य हो सत्संग की महिमा कहती है

तात मोर अति पुन्य बहूता। देखेउँ नयन राम कर दूता॥ 4.8॥

तात स्वर्ग अपबर्ग सुख धरिअ तुला एक अंग।
तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सतसंग॥ दोहा 4॥

तात = हे तात, *मोर* = मेरा, *अति पुन्य बहूता* = यह अत्यंत पुण्य है, *देखेउँ नयन* = आँखों से देख रही हूँ, *राम कर दूता* = श्रीराम के दूत को।

तात = हे तात, *स्वर्ग अपबर्ग सुख* = यदि स्वर्ग व मुक्ति का सुख, *धरिअ तुला एक अंग* = तराजू के एक पलड़े पर रख दें, *तूल न ताहि सकल मिलि* = तो वे सब सुख मिलकर के भी इतने बड़े नहीं हो सकते, *जो सुख लव सतसंग* = जितना बड़ा सुख एक क्षण के सत्संग से प्राप्त होता है।

रामदूत श्रीहनुमान के घूँसा पड़ते ही लंकिनी की बुद्धि पलट जाती है, वह कहती है श्रीराम के दूत का दर्शन होना बड़े पुण्य की बात है। मेरे बहुत पुण्य हैं, जिसके कारण आपके दर्शन हुए। कहती है, यदि तराजू के एक पलड़े में स्वर्ग का सुख व मुक्ति का सुख रख दें और दूसरी तरफ क्षण भर के सत्संग से प्राप्त होने वाला सुख रख दें तो सत्संग से प्राप्त सुख ही भारी होगा। जीवन में हम कितने भी निराश, अशांत या दु:खी क्यों न हों, यदि सत्संग में जाते हैं तो उतने समय तक के लिये सब भूल जाते हैं, जबकि स्वर्ग में भी कामनायें व दु:ख बने ही रहते हैं। अपबर्ग मायने मुक्ति का सुख तब तक ही रहता है जब तक मन में आत्मा का भाव बना रहे। जैसे ही आत्मभाव विस्मृत होगा वह सुख नहीं मिलेगा। सत्संग का फल तत्काल मिलता है। यहाँ पर देखें, लंकिनी जैसी निशाचरी को हनुमान जी जैसे महान् रामभक्त के घूँसे के स्पर्श का सत्संग मिला, उसकी बुद्धि पलट गई, फिर उसे हनुमान जी के दर्शन का सत्संग मिला। यही सत्संग की महिमा है।

लंकिनी हनुमान जी से लंका में प्रवेश की विनती करती है

प्रबिसि नगर कीजे सब काजा। हृदयँ राखि कोसलपुर राजा॥ 5.1॥

प्रबिसि नगर = लंका नगर में प्रवेश कर, *कीजे सब काजा* = सब काम संपन्न करिये, *हृदयँ राखि कोसलपुर राजा* = हृदय में कोसलपुर के राजा श्रीराम का स्मरण करके।

अब लंकिनी कहती है, 'हे हनुमान जी, आप कोसलपुर के राजा श्रीराम को हृदय में धारण कर, यानि उन्हें स्मरण करके, लंका नगरी में प्रवेश कर सभी कार्यों को पूरा करिये।' यह चौपाई बहुत लोकप्रिय है। हे हनुमान जी, हमारे हृदय में भी प्रवेश कर सब कार्य संपन्न करें। बहुत-से लोग नये शहर में प्रवेश करते समय, नया कार्य करते समय इस चौपाई को गा लेते हैं।

राम कृपा से कार्य कैसे सुगम होता है?

गरल सुधा रिपु करहिं मिताई। गोपद सिंधु अनल सितलाई॥ 5.2॥
गरुड़ सुमेरु रेनु सम ताही। राम कृपा करि चितवा जाही॥ 5.3॥

गरल सुधा = विष अमृत बन जाता है, *रिपु करहिं मिताई* = शत्रु मित्र जैसे व्यवहार करता है, *गोपद* = गाय के खुर जितना गहरा, *सिंधु* = समुद्र हो जाता है, *अनल* = अग्नि, *सितलाई* = शीतल हो जाती है। *गरुड़* = हे गरुड़ जी, *सुमेरु* = बहुत बड़े पर्वत का नाम, *रेनु सम ताही* = उसके लिये धूल के समान है, *राम कृपा करि* = राम जी ने कृपा करके, *चितवा जाही* = जिसे एक बार देख लिया।

जहाँ हृदय में राजा राम आये तो विष अपने विषैलेपन को छोड़कर अमृत जैसा बन जाता है। शत्रु लोग भी मित्र जैसा व्यवहार करने लगते हैं। समुद्र जो इतना विशाल है कि उसे पार नहीं किया जा सकता, वह गाय के खुर के बराबर छोटा-सा हो जाता है। उसे जब चाहो जितनी बार छलाँग लगाकर पार कर लो। अग्नि भी ताप को छोड़कर शीतल हो जाती है।

श्रीरामचरितमानस की कथा चार जगह चल रही है– शंकर जी पार्वती जी को, काकभुसुंडी जी गरुड़ जी को, याज्ञवल्क्य जी भरद्वाज मुनि को व तुलसीदास जी हम सबको कथा सुना रहे हैं। बीच-बीच में तुलसीदास जी इन महान कथावाचकों का उल्लेख करते हैं। यहाँ कहते हैं कि काकभुसुंडी जी गरुड़ जी से कहते हैं, हे गरुड़, श्रीराम ने जिसकी तरफ कृपा करके एक बार देख लिया उसके लिये तो सुमेरु जैसा बड़ा विशाल पर्वत भी धूल के समान छोटा हो जाता है।

जीवन जीने का तरीका

जीवन जीने के दो तरीके हैं। एक तो भगवान पर भरोसा रखकर उनका स्मरण कर सब कार्य करें जिससे कार्य बड़ी सुगमता से होते हैं, प्रतिकूल परिस्थितियाँ भी अनूकूल बन जाती हैं, मन में सुख, शांति व संतोष रहता है। दूसरा तरीका है हम अपने आप को ही सब कुछ मानकर, अभिमान में डूबकर, जीवन जियें। ऐसे में जीवन जी तो लेगें, संपत्ति व यश भी पा लेंगे, बड़े-बड़े कार्य भी पूरे कर लेंगे, पर मन में अशांति, असंतोष व तनाव बना रहेगा।

लंका प्रवेश कर घर-घर व रावण के महल में सीता जी की खोज

अति लघु रूप धरेउ हनुमाना। पैठा नगर सुमिरि भगवाना॥ 5.4॥
मंदिर मंदिर प्रति करि सोधा। देखे जहँ तहँ अगनित जोधा॥ 5.5॥
गयउ दसानन मंदिर माहीं। अति बिचित्र कहि जात सो नाहीं॥ 5.6॥
सयन किएँ देखा कपि तेही। मंदिर महुँ न दीखि बैदेही॥ 5.7॥

अति लघु रूप = अत्यंत छोटा-सा रूप, *धरेउ हनुमाना* = हनुमान जी ने बना लिया, *पैठा नगर* = लंका नगर में प्रवेश किया, *सुमिरि भगवाना* = भगवान का स्मरण करके। *मंदिर मंदिर प्रति करि* = घर-घर जा-जा करके, *सोधा* = खूब सावधानी से देखा, *देखे जहँ तहँ अगनित जोधा* = वहाँ जहाँ कहीं भी अनगिनत बलशाली लोग थे, *गयउ दसानन मंदिर माहीं* = रावण के महल में गये, *अति बिचित्र* = वह महल बहुत विचित्र था, *कहि जात सो नाहीं* = उसकी विचित्रता का वर्णन नहीं किया जा सकता, *सयन किएँ देखा कपि तेही* = हनुमान जी ने रावण को सोते हुए पाया, *मंदिर महुँ न दीखि बैदेही* = उस घर में भी सीता जी नहीं दिखी।

लंकिनी की स्वीकृति के बाद हनुमान जी ने छोटा-सा रूप धारण किया, भगवान का स्मरण किया और लंका में प्रवेश कर गये। रात्रि में सड़कें खाली थीं, रक्षक हनुमान जी को देख नहीं पाये। वे छिपते-छिपाते घर-घर गये, बड़ी सावधानी से वहाँ पर सीता जी की खोज की, हर घर में उन्हें बड़े बलशाली योद्धा दिखे। फिर हनुमान जी रावण के महल में गये। वह बड़ा विचित्र बना था, स्वर्ण व मणियों से जड़ित था। उस महल की विचित्रता ऐसी थी की उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। उस महल में हनुमान जी ने रावण को सोते हुए देखा पर सीता जी वहाँ भी दिखाई नहीं दीं। इस प्रकार उन्होंने चतुराई पूर्वक दूत का कार्य करते हुए पूरी लंका की जानकारी भी एकत्रित कर ली।

3. हनुमान जी विभीषण से मिलते हैं *(दोहा 6 से दोहा 8)*

इस प्रसंग में हनुमान जी विभीषण को नींद से जगाकर उन्हें श्रीराम की शरण में जाने के लिये प्रेरित कर देते हैं। हनुमान जी के सत्संग से विभीषण में तत्काल परिवर्तन आ जाता है, वे सीता जी के बारे में समस्त जानकारी देकर, अशोकवाटिका तक पहुँचने का रास्ता भी बताकर, राम के सेवा कार्य में तुरंत

लग जाते हैं। हम सब की मनोदशा भी कुछ-कुछ विभीषण की तरह ही है। हम भगवान के लिए पूजा-पाठ तो करते रहते हैं, राम-राम जपते रहते हैं, पर उनकी शरण में जाने का भाव या सेवा कार्य करने की हिम्मत नहीं जुटा पाते। जैसे विभीषण राम भक्त होकर भी रावण की सुविधाओं का प्रयोग करते हुए उसी की सेवा में लगा रहता है, वैसे हम भी भक्ति तो करते हैं राम की पर सेवा अपने काम, क्रोध व लोभ की ही करते रहते हैं। इस प्रसंग को पढ़ते समय ऐसा भाव रखने का प्रयास करें कि हनुमान जी हमें भी सोते से जगाकर, अच्छा कार्य करने की प्रेरणा दें।

विभीषण के महल पहुँचे, इसकी सुंदरता अलग थी

भवन एक पुनि दीख सुहावा। हरि मंदिर तहँ भिन्न बनावा॥ 5.8॥

रामायुध अंकित गृह सोभा बरनि न जाइ।
नव तुलसिका बृंद तहँ देखि हरष कपिराइ॥ दोहा 5॥

भवन एक पुनि दीख सुहावा = उसके बाद एक सुंदर घर दिखाई दिया, *हरि मंदिर तहँ भिन्न बनावा* = वहाँ भगवान का एक मंदिर अलग से बना था। *रामायुध अंकित गृह* = राम जी के आयुध धनुष बाण के चिह्न बने थे, *सोभा बरनि न जाइ* = सुंदरता का वर्णन नहीं किया जा सकता। *नव तुलसिका बृंद* = तुलसी के नये-नये पौधों के समूह, *तहँ देखि* = वहाँ देखकर, *हरष कपिराइ* = हनुमान जी हर्षित हो गये।

हनुमान जी जब एक घर की छत से दूसरे घर की छत पर कूद रहे थे तब उन्हें एक अलग तरह का घर दिखाई दिया। उस घर मे उन्हें तीन विषेशताएँ दिखीं –

1. घर के अंदर, पर घर से अलग भगवान का मंदिर बना था।
2. घर के ऊपर श्रीराम के आयुध यानि धनुष-बाण बने हुए थे।
3. वहाँ पर तुलसी के नये-नये पौधों के समूह लगे थे। यह सब देखकर हनुमान जी बहुत प्रसन्न हो गये। वे समझ गये कि यह किसी भक्त का घर है। तुलसी का पौधा जिस घर में लगा हो वह भगवान का भक्त है। रावण का महल विचित्र था पर विभीषण का महल सुंदर है।

विभीषण नींद से उठकर महल के बाहर आते हैं

लंका निसिचर निकर निवासा। इहाँ कहाँ सज्जन कर बासा॥ 6.1॥
मन महुँ तरक करैं कपि लागा। तेहीं समय बिभीषनु जागा॥ 6.2॥
राम राम तेहिं सुमिरन कीन्हा। हृदयँ हरष कपि सज्जन चीन्हा॥ 6.3॥
एहि सन हठि करिहउँ पहिचानी। साधु ते होइ न कारज हानी॥ 6.4॥
बिप्र रूप धरि बचन सुनाए। सुनत बिभीषन उठि तहँ आए॥ 6.5॥

लंका = लंका तो, *निसिचर निकर* = राक्षसों के समूह, *निवासा* = के रहने का स्थान है, *इहाँ कहाँ सज्जन कर बासा* = यहाँ पर सज्जन व्यक्ति का निवास कैसे हो सकता है। *मन महुँ* = मन के अंदर, *तरक करैं कपि लागा* = हनुमान जी तर्क करने लगे, *तेहीं समय बिभीषनु जागा* = उसी समय विभीषण सोते से उठ गये। *राम राम तेहिं सुमिरन कीन्हा* = विभीषण ने मुँह से राम राम बोला, *हृदयँ हरष कपि सज्जन चीन्हा* = हनुमान जी प्रसन्न हुए और समझ गये कि यह भक्त हैं। *एहि सन* = इससे, *हठि* = अपनी तरफ से, *करिहउँ पहिचानी* = परिचय करेंगे, *साधु ते होइ न कारज हानी* = सज्जन व्यक्ति से कार्य का नुकसान नहीं होता, *बिप्र रूप धरि* = बिप्र का रूप धारण करके, *बचन सुनाए* = विभीषण को पुकारे, *सुनत बिभीषन उठि तहँ आए* = सुनते ही विभीषण उठकर वहाँ पर आ गये।

हनुमान जी ने जब अलग तरह का घर देखा, तो उन्होंने सोचा, अरे! यह तो लंका है जहाँ निशाचर ही वास करते हैं। यहाँ सज्जन का घर कैसे हो सकता है? सज्जन मायने जो भगवान का भक्त है। हनुमान जी मन में तर्क करने लगे कि निशाचरों के बीच में सज्जन कैसे हो सकता है? उसी समय विभीषण जाग गये, उन्होंने उठते समय राम राम कहकर भगवान का स्मरण किया। हनुमान जी राम राम सुनकर प्रसन्न हो गये। वे पहचान गये कि यह कोई भक्त ही है। उन्होंने निश्चय किया कि इनसे मैं स्वयं जाकर परिचय प्राप्त करूँगा। नीति वचन है कि अच्छे लोगों से बातचीत करने से, अपना कार्य उन्हें बताने से कोई नुकसान नहीं होता। यही सोचकर विभीषण का परिचय पाने के लिये हनुमान जी विप्र का वेष धारण करके कुछ बोलते हैं। विप्र मायने वह व्यक्ति जो शास्त्रों का ज्ञाता हो। हो सकता है उन्होंने भी राम राम बोला हो। हनुमान जी के वचन सुनकर विभीषण अपनी चारपाई से उठकर बाहर आ गये, उन्होंने सोचा, आज लंका में राम राम कहने वाला दूसरा कौन आ गया?

विप्र वेश में हनुमान जी से विभीषण परिचय पूछते हैं

करि प्रनाम पूँछी कुसलाई। बिप्र कहहु निज कथा बुझाई॥ 6.6॥
की तुम्ह हरि दासन्ह महँ कोई। मोरें हृदय प्रीति अति होई॥ 6.7॥
की तुम्ह रामु दीन अनुरागी। आयहु मोहि करन बड़भागी॥ 6.8॥

करि प्रनाम पूँछी कुसलाई = विभीषण ने प्रणाम करके उनकी कुशलता पूछी, *बिप्र कहहु निज कथा बुझाई* = और कहा कि हे विप्र, अपनी सब बात समझाकर कहिये। *की तुम्ह हरि दासन्ह महँ कोई* = क्या आप भगवान के भक्त में से कोई हो, *मोरें हृदय प्रीति अति होई* = मेरे हृदय में बहुत प्रेम हो रहा है। *की तुम्ह रामु दीन अनुरागी* = क्या तुम दीनों पर दया करने वाले श्रीराम के भक्त हो, *आयहु मोहि करन बड़भागी* = जो मुझे भाग्यवान बनाने आये हो।

विभीषण ने देखा ये तो विप्र हैं, उन्हें प्रणाम करते हैं। प्रणाम करके विप्र वेष धारण किये हनुमान जी से उनकी कुशलता पूछते हैं। फिर कहते हैं कि अपनी कथा सुनाइये, आप इस लंका में इतनी रात को क्यों आये? और कैसे आ गये? हनुमान जी कुछ बोलते इसके पहले ही विभीषण के मन में कई तर्क आये। वे पूछते हैं कि क्या आप भगवान के सेवक हैं, क्योंकि आपके दर्शन से मेरे हृदय में बहुत प्रेम उमड़ रहा है, या क्या आप दीनों पर दया करने वाले श्रीराम के भक्त हैं, जो मुझे बड़ा भाग्यशाली बनाने के लिये यहाँ लंका में आ गये हैं।

हनुमान जी रामकथा कहकर अपना परिचय देते हैं

तब हनुमंत कही सब राम कथा निज नाम।
सुनत जुगल तन पुलक मन मगन सुमिरि गुन ग्राम॥ दोहा 6॥

तब हनुमंत = तब हनुमान जी ने, *कही सब राम कथा* = राम जी की कथा सुनायी, *निज नाम* = अपना नाम हनुमान बताया, *सुनत* = रामकथा सुनकर, *जुगल* = दोनों के, *तन पुलक* = शरीर पुलकित हो गये, *मन मगन* = मन मग्न हो गये, *सुमिरि गुन ग्राम* = राम जी के गुणों को स्मरण करके।

विभीषण के परिचय पूँछने पर हनुमान जी पहले रामकथा सुनाते हैं। हनुमान जी ने कहा होगा कि कोसलपुर के राजा श्रीराम अपने भाई लक्ष्मण के साथ वन में हैं,

रावण ने सीता जी का हरण कर लिया। हमें माँ सीता का पता लगाने प्रभु ने भेजा है। हमने लंका में सब जगह देखा परंतु वे कहीं दिखाई नहीं दीं। जब आपके घर में धनुष-बाण का निशान, भगवान का मंदिर व तुलसी का पौधा देखा तो हमें लगा कि यहाँ कोई भक्त रहता है। इसलिये आपके घर आ गये। मैंने आपका परिचय पाने के लिये यह विप्र का वेश धारण किया है, मेरा नाम हनुमान है। राम जी के गुणगान, उनकी लीला, उनके चरित्र सुनते ही दोनों के शरीर पुलकित हो गये। मन आनंद से भर गया। हनुमान जी ने सोचा कि लंका में हमें कोई मिलेगा नहीं जो भगवान की कथा सुने, हमें यहाँ भी कथा सुनकर प्रसन्न होने वाला मिल गया। विभीषण भी सोचने लगे कि हम भगवान का नाम लेते रहे, आज भगवान ने कृपा कर दी, घर बैठे ही हनुमान जी को भेज दिया। दोनों ही प्रसन्न हैं। हनुमान जी को लगा कि अब विभीषण से सहायता मिलेगी, विभीषण को लगा कि इनसे भक्ति मिल रही है। तुलसीदास जी कहते हैं दोनों के शरीर पुलिकत व मन मग्न हो गये।

हनुमान जी से विभीषण मन की शंका प्रकट करते हैं

सुनहु पवनसुत रहनि हमारी। जिमि दसनन्हि महुँ जीभ बिचारी॥ 7.1॥
तात कबहुँ मोहि जानि अनाथा। करिहहिं कृपा भानुकुल नाथा॥ 7.2॥
तामस तनु कछु साधन नाहीं। प्रीति न पद सरोज मन माहीं॥ 7.3॥
अब मोहि भा भरोस हनुमंता। बिनु हरिकृपा मिलहिं नहिं संता॥ 7.4॥
जौं रघुबीर अनुग्रह कीन्हा। तौ तुम्ह मोहि दरसु हठि दीन्हा॥ 7.5॥

सुनहु पवनसुत = हे पवनपुत्र सुनो, *रहनि हमारी* = हम यहाँ कैसे रहते हैं, *जिमि* = जिस प्रकार, *दसनन्हि* = दाँतों, *महुँ* = के बीच में, *जीभ बिचारी* = बेचारी जीभ रहती है। *तात* = हे तात , *कबहुँ मोहि जानि अनाथा* = क्या मुझे कभी अनाथ समझकर, *करिहहिं कृपा भानुकुल नाथा* = सूर्यकुल के नाथ श्रीराम मुझ पर कृपा करेंगे। *तामस तनु* = मेरा शरीर तामसी प्रवृत्ति का है, *कछु साधन नाहीं* = इसलिये साधना हो नहीं पाती, *प्रीति न पद सरोज मन माहीं* = और मन में श्रीराम के कमलचरणों में प्रेम भी नहीं है। *अब मोहि भा भरोस हनुमंता* = हे हनुमान जी, अब मुझे विश्वास हो गया है, *बिनु हरिकृपा मिलहिं नहिं संता* = बिना भगवान की कृपा के संत नहीं मिलते हैं। *जौं रघुबीर अनुग्रह कीन्हा* = श्रीराम ने जब अनुग्रह किया है, *तौ तुम्ह मोहि दरसु हठि दीन्हा* = तभी आपने अपने से आकर मुझे दर्शन दिये हैं।

हनुमान जी ने रामकथा कहने के बाद विभीषण जी से कुछ प्रश्न किये होंगे, जैसे आप भगवान के भक्त होते हुए यहाँ लंका में कैसे रहते हैं? विभीषण उत्तर देते हैं कि हे पवनपुत्र हनुमान जी, हम लंका में निशाचरों के बीच में वैसे ही रहते हैं जैसे दाँतों के बीच में जीभ रहती है। जीभ को चारों तरफ से दाँत घेरे रहते हैं, यदि जरा सी चूक हुई तो जीभ को दाँत काट लेंगे। जीभ को अपने आप को बचा-बचा कर दाँतों के बीच रहना पड़ता है। तब हनुमान जी ने कहा होगा कि तुम तो भक्त हो, राम जी की शरण में क्यों नहीं चले जाते? विभीषण के मन में शंका है, पता नहीं राम हम पर कृपा करेंगे भी या नहीं। वे हनुमान जी से पूछते हैं, हे तात क्या कभी सूर्यवंशी श्रीराम मुझ पर भी कृपा करेंगे, क्योंकि मैं तो राक्षसकुल में उत्पन्न हुआ हूँ, मैने कोई साधना तो की नहीं है। न ही मेरे मन में श्रीराम के चरणकमलों के प्रति प्रेम है। विभीषण के हृदय में प्रेम है पर पूरा नहीं है। हनुमान जी से बात करते-करते उनके हृदय में आशा बँधने लगी। वे कहने लगे कि अब मुझे राम जी पर विश्वास होने लगा है, क्योंकि जब तक भगवान कृपा नहीं करते तब तक संत के दर्शन नहीं होते। यह रघुबीर जी की कृपा ही तो है कि आपने मेरे बिना बुलाये, स्वयं आकर मुझे दर्शन दिये। हनुमान जी के मिलने से विभीषण को ऐसा लगने लगा जैसे भगवान की कृपा हुई है।

विभीषण की शंका का हनुमान जी निवारण करते हैं

सुनहु बिभीषन प्रभु कै रीती। करहिं सदा सेवक पर प्रीती॥ 7.6॥
कहहु कवन मैं परम कुलीना। कपि चंचल सबहीं बिधि हीना॥ 7.7॥
प्रात लेइ जो नाम हमारा। तेहि दिन ताहि न मिलै अहारा॥ 7.8॥

अस मैं अधम सखा सुनु मोहू पर रघुबीर।
कीन्ही कृपा सुमिरि गुन भरे बिलोचन नीर॥ दोहा 7॥

सुनहु बिभीषन = हे विभीषण सुनो, *प्रभु कै रीती* = राम जी के स्वभाव को, *करहिं सदा सेवक पर प्रीती* = वे सदा सेवक से प्रेम करते हैं, *कहहु कवन मैं* = कहो मै ही कौन सा, *परम कुलीना* = बहुत अच्छे कुल में पैदा हुआ हूँ, *कपि* = मेरी जाति तो बंदर ही है, *चंचल* = चंचल स्वभाव है, *सबहीं बिधि हीना* = सब प्रकार से साधन रहित हूँ। *प्रात लेइ जो नाम हमारा* = सुबह-सुबह जो हमारा नाम लेता है, *तेहि दिन ताहि न मिलै अहारा* = उसे पूरा दिन भोजन तक नहीं मिल पाता।

अस मैं अधम = मैं इस प्रकार का अधम हूँ, *सखा सुनु* = हे मित्र सुनो, *मोहू पर रघुबीर* = मुझ पर भी रघुवीर राम ने, *कीन्ही कृपा* = कृपा की है, *सुमिरि गुन* = भगवान के गुणों का स्मरण करके, *भरे बिलोचन नीर* = उनके नेत्रों में जल भर आया।

हनुमान जी कहते हैं, हे विभीषण, मैं आपको श्रीराम के स्वभाव के बारे में बतलाता हूँ, वे हमेशा उन लोगों से प्रेम करते हैं जो सेवक हैं, मायने जो सेवा कार्य में लगे रहते हैं। यहाँ पर सेवा से आशय पूजा करना ही नहीं बल्कि इस संसार को भगवान का बनाया हुआ मानकर सबके लिये मंगल कामना करना और जो कुछ हमारे पास है उसमें से कुछ दूसरों की सहायता में लगाना है। विभीषण की शंका निवारण के लिये हनुमान जी स्वयं का उदाहरण देते हैं। कहते हैं कि मैं न तो ज्ञानवान् हूँ, न ही अच्छे कुल में पैदा हुआ हूँ। मेरी जाति वानर की है, स्वभाव चंचल है, वन में रहते हैं, जहाँ न कोई सभ्यता है, न संस्कृति, न पढ़ाई-लिखाई। आगे कहते हैं कि सुबह-सुबह वानर का नाम ले लो तो पूरे दिन खाना ही न मिले। अब हनुमान जी विभीषण को मानो अपना लेते हैं, उन्हें मित्र कहकर संबोधित करते हैं। कहते हैं, हे सखा सुनो, मुझ जैसे अधम पर भी श्रीराम ने कृपा की है तो तुम्हारे ऊपर क्यों नहीं करेंगे? हनुमान जी ने जब इस प्रकार श्रीराम की कृपा का स्मरण किया तो स्मरण आते ही उनके नेत्रों में अश्रु आ गये। जब कोई कृपा करे, दया करे तो कृतज्ञता से आँखों में प्रेम के आँसू स्वाभाविक आ जाते हैं।

हनुमान जी का स्मरण सुबह-सुबह भी कर सकते हैं

'प्रात लेइ जो नाम हमारा, तेहि दिन ताहि न मिलै अहारा' इस चौपाई के कारण समाज में यह भ्रम फैल गया कि सुबह-सुबह हनुमान जी का नाम नहीं लेना चाहिये। यह धारण पूर्णत: गलत है। यह बात हनुमान जी के लिये नहीं है, वे तो भगवान के भक्त हो गये। वे तो रघुबर यानी रघुवंश के ही हो गये। उनका वह दोष ही दूर हो गया। यह बात तो वानर जाति के बारे में है। वानर का स्वभाव चंचल होता है, सुबह-सुबह वानर का स्मरण करेंगे तो वैसी ही चंचलता हमारी बुद्धि में बनी रहेगी, हम दिनभर भाग-दौड़ करते रहेंगे, खाने का वक्त तक नहीं मिलेगा। यह मनोवैज्ञानिक सिद्धांत है। जैसा विचार करोगे उसी प्रकार की प्रवृत्ति अंदर उत्पन्न होती रहती है। हनुमान जी कहते हैं– मैं

अधम था, फिर भी राम जी ने हमारे ऊपर कृपा की। भगवान की कृपा से हमारे हनुमान जी पूजनीय बन गये। वे सदैव, हर काल में, हर वक्त पूजनीय हैं।

विभीषण को राम कार्य में लगने की प्रेरणा देते हैं

जानतहूँ अस स्वामि बिसारी। फिरहिं ते काहे न होहिं दुखारी॥ 8.1॥
एहि बिधि कहत राम गुन ग्रामा। पावा अनिर्बाच्य बिश्रामा॥ 8.2॥

जानतहूँ = जानते हुए भी, *अस स्वामि बिसारी* = ऐसे स्वामी श्रीराम को भूलकर, *फिरहिं ते* = जो लोग भटकते फिरते हैं, *काहे न होहिं दुखारी* = वे दु:खी क्यों न हों। *एहि बिधि कहत राम गुन ग्रामा* = इस प्रकार राम जी के गुणों को स्मरण करते हुए, *पावा अनिर्बाच्य बिश्रामा* = उन्हें अकथनीय शांति प्राप्त हुई।

विभीषण राम नाम का जप करते हैं, उनके हृदय में भक्ति भी है, वे भगवान की महिमा भी जानते हैं, इसलिये अब हनुमान जी आखिरी बात कहते हैं कि हे विभीषण, ऐसे स्वामी को जानते हुए भी, उन्हें भूलकर यहाँ-वहाँ भटकते रहोगे तो इसी प्रकार से दु:खी होते रहोगे। इसलिए अब श्रीराम के सेवा-कार्य में लग जाओ।

हनुमान जी हम सब के लिये भी यह बात कहते हैं। हम लोग भी भगवान को जानते हैं, मानते हैं, पूजा करते हैं, परंतु भगवान की शरण में नहीं जाते हैं, उनकी सेवा में नहीं लगते हैं, बस यहीं तक अटके रह जाते हैं। भगवान राम के गुणों का स्मरण करते-करते हनुमान जी के मन को इतनी शांति प्राप्त हुई कि उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। मन में शांति और विश्राम का आना ही राम जी के गुणों का स्मरण करने का फल है। यह फल हमें भी प्राप्त हो, ऐसी प्रार्थना हनुमान जी से करनी चाहिये।

सीता जी का पता बता विभीषण सेवा कार्य शुरू करते हैं

पुनि सब कथा बिभीषन कही। जेहि बिधि जनकसुता तहँ रही॥ 8.3॥

पुनि सब कथा = फिर वह सब कथा, *बिभीषन कही* = विभीषण ने कही, *जेहि बिधि* = जिस प्रकार, *जनकसुता तहँ रही* = सीता जी वहाँ रह रही थी।

इतना सब सुनने के बाद विभीषण पर असर हुआ। वे तुरंत ही हनुमान जी को सीता जी के बारे में बताकर भगवान का सेवा कार्य प्रारंभ कर देते हैं। विभीषण ने वह कथा बतायी कि कैसे रावण मारीच को लेकर गया था, श्रीराम सीता जी के लिये हिरण लेने मारीच के पीछे भागे, उसी समय रावण ने सीता जी का हरण कर लिया। वे अशोकवाटिका में हैं, वहीं रहती हैं, रावण के महल में नहीं है, जहाँ आप उन्हें ढूँढ रहे थे।

हनुमान जी ने कहा माँ सीता के दर्शन करने हैं

तब हनुमंत कहा सुनु भ्राता। देखी चहउँ जानकी माता॥ 8.4॥

तब हनुमंत कहा = फिर हनुमान जी ने कहा, *सुनु भ्राता* = हे भाई सुनो, *देखी चहउँ* = मैं दर्शन करना चाहता हूँ, *जानकी माता* = माँ सीता के।

तब हनुमान जी ने कहा, बस इतने से सेवा नहीं होगी। आपने बता दिया कि सीता जी अशोकवन में हैं, हमें पता चल गया, अब हम जाकर राम जी को बता दें। पर हम तो माँ सीता के पास जायेंगे, उनके दर्शन करेंगे। श्रीराम और सीता जी में कोई फर्क नहीं है, जैसे राम जी के दर्शन किये वैसे माँ जानकी के भी दर्शन करेंगे। उन्हें आश्वासन देना है, श्रीराम का संदेश सुनाना है, और उनका संदेश लेकर वापस जाना है। इन सब प्रयोजनों से हमें उनके पास जाना है।

विभीषण सीता जी तक पहुँचने की युक्ति बताते हैं

जुगुति बिभीषन सकल सुनाई। चलेउ पवनसुत बिदा कराई॥ 8.5॥

जुगुति = युक्ति, *बिभीषन* = विभीषण ने, *सकल सुनाई* = सब बता दिया, *चलेउ पवनसुत* = हनुमान जी चल देते हैं, *बिदा कराई* = नमस्कार करके।

सीता जी का पता बताने के बाद विभीषण हनुमान जी से कहते हैं कि यहाँ से जो दूसरा पर्वत दिखाई देता है, उसका नाम है सुंदरवन, वहीं पर अशोकवाटिका है, जहाँ पर वृक्ष के नीचे सीता जी वास करती हैं। वहाँ तक पहुँचने की युक्ति भी बताते हैं कि कैसे निशाचरों से बचते हुए वहाँ तक

आप पहुँच जाओगे। विभीषण जी को नमस्कार करके, फिर मिलेंगे कहकर हनुमान जी वहाँ से चल देते हैं।

4. पेड़ से हनुमान जी अशोकवाटिका की घटनायें देखते हैं

(दोहा 8 से दोहा 12)

हनुमान जी अशोकवाटिका में पेड़ में छिपकर वहाँ होने वाली घटनाओं को देखते हैं। सीता जी अशोक वृक्ष के नीचे बैठी हैं, राम स्मरण में लीन हैं। रावण आता है, वह प्रलोभन देकर सीता जी को अपनी ओर एक बार देखने का निवेदन करता है। पर सीता जी उसकी ओर देखती तक नहीं। एक तिनके की ओट बनाकर उसको डांटती हैं। हमारे जीवन में भी कई बार ऐसे मौके आते हैं, जब कोई बुराई प्रलोभन देकर अपनी ओर आकर्षित करती है। एक बार भी हम उस ओर गये तो उससे छूटना मुश्किल हो जाता है। सीता जी से प्रार्थना करें कि हमें सदैव बुराई से बचाकर अच्छे मार्ग में चलने की प्रेरणा दें।

दूर से सीता माँ के दर्शन कर मन में प्रणाम करते हैं

करि सोइ रूप गयउ पुनि तहवाँ। बन असोक सीता रह जहवाँ॥ 8.6॥
देखि मनहि महुँ कीन्ह प्रनामा। बैठेहिं बीति जात निसि जामा॥ 8.7॥

करि सोइ रूप = फिर वही वेष बनाकर, *गयउ पुनि तहवाँ* = वहाँ पहुँच जाते हैं, *बन असोक* = अशोकवन में, *सीता रह जहवाँ* = जहाँ सीता जी रहती हैं। *देखि* = सीता जी को देखकर, *मनहि महुँ* = मन में ही, *कीन्ह प्रनामा* = प्रणाम करते हैं, *बैठेहिं* = बैठे-बैठे सीता जी को, *बीति जात निसि जामा* = रात्रि के चार पहर बीत जाते हैं।

विभीषण से विप्र रूप में बात करने के बाद हनुमान जी फिर से वानर रूप धारण कर लेते हैं। वानर की तरफ कोई ध्यान नहीं देता है। वे छिपते-छिपाते अशोक वन, जहाँ सीता जी वास कर रही थीं, पहुँच जाते हैं। अभी रात का ही समय है। उन्होंने दूर से ही सीता माँ को अशोक के पेड़ के नीचे बैठे देखा। वे अभी पास में नहीं जाते, मन में ही प्रणाम कर लेते हैं। हनुमान जी ने देखा कि पूरी रात सीता जी पेड़ के नीचे बैठे-बैठे ही बिता देती हैं।

माँ सीता तपस्विनी वेश में राम स्मरण में लीन

कृस तनु सीस जटा एक बेनी। जपति हृदयँ रघुपति गुन श्रेनी॥ 8.8॥

निज पद नयन दिएँ मन राम पद कमल लीन।
परम दुखी भा पवनसुत देखि जानकी दीन॥ दोहा 8॥

कृस तनु = शरीर दुबला हो गया है, *सीस* = सिर में, *जटा एक बेनी* = जटाओं की एक लट है, *जपति हृदयँ* = हृदय में जप कर रही हैं, *रघुपति गुन श्रेनी* = राम जी के गुणों को।
निज पद = अपने चरणों में, *नयन दिएँ* = नेत्रों को लगाये हैं, *मन* = उनका मन, *राम पद कमल लीन* = राम के चरणकमलों में लगा है, *परम दुखी भा पवनसुत* = हनुमान जी बड़े दु:खी हो जाते हैं, *देखि जानकी दीन* = सीता जी को दु:खी देखकर।

अशोकवन में सीता जी कैसे दिखती हैं, तुलसीदास जी इसका वर्णन करते हैं। सीता जी का शरीर बहुत दुबला हो गया है। सिर के बालों की देखभाल न होने से बाल जटायें बन गये हैं जैसे ऋषियों की जटायें बन जाती हैं। उन्होंने सब जटाओं को लपेट करके एक चोटी में ही बांध लिया है। बिल्कुल तपस्विनी जैसा रूप हो गया है। सीता जी राम के गुणों का स्मरण करती रहती हैं। वे इस समय भक्ति स्वरूपा दिखलाई पड़ती हैं। वे अपने पैरों की तरफ देखती रहती हैं, कोई आवे उसकी तरफ नहीं देखती हैं। अपना मन भगवान राम के चरण कमलों में लगाकर रखती हैं। उनका मन राम के चरणों में लीन है। लीन मायने मन राम जी के चरणों में एकाकार हो गया है, ऐसा नहीं कि कभी मन चरणों में लगता है, कभी नहीं लगता है। सीता जी को इस प्रकार से दीन दशा में देखकर हनुमान जी बहुत दु:खी हो जाते हैं।

पेड़ के पत्तों में छिपकर सोचते हैं कि अब क्या करें

तरु पल्लव महुँ रहा लुकाई। करइ बिचार करौं का भाई॥ 9.1॥

तरु पल्लव = वृक्ष के पत्ते, *महुँ* = में, *रहा लुकाई* = छिप गये, *करइ बिचार* = और विचार करने लगे, *करौं का भाई* = कि अरे भाई अब क्या करूँ।

हनुमान जी पेड़ों के पत्तों के बीच में छिप गये। सीता जी के सामने अभी जाते नहीं हैं, वहाँ की स्थिति को समझते हैं। फिर सोचते हैं कि मुझे क्या करना चाहिये। सीता जी के पास अभी जायें कि न जायें? जायें तो किस प्रकार से जायें? आगे के कार्य की रूपरेखा बनाते हैं।

उसी समय रावण आकर प्रलोभन दे सीता जी को समझाता है

तेहि अवसर रावनु तहँ आवा। संग नारि बहु किएँ बनावा॥ 9.2॥
बहु बिधि खल सीतहि समुझावा। साम दान भय भेद देखावा॥ 9.3॥
कह रावनु सुनु सुमुखि सयानी। मंदोदरी आदि सब रानी॥ 9.4॥
तव अनुचरीं करउँ पन मोरा। एक बार बिलोकु मम ओरा॥ 9.5॥

तेहि अवसर = उसी समय, *रावनु तहँ आवा* = रावण वहाँ आ गया, *संग नारि बहु* = उसके साथ कई स्त्रियाँ थीं, *किएँ बनावा* = वह सजा-धजा था। *बहु बिधि खल सीतहि समुझावा* = उस दुष्ट ने कई प्रकार से सीता जी को समझाया, *साम दान भय भेद देखावा* = साम, दान, भय और भेद से उन्हें मनाने का प्रयास किया। *कह रावनु* = रावण कहता है, *सुनु सुमुखि सयानी* = हे समझदार सुन्दरी सुनो, *मंदोदरी आदि सब रानी* = मंदोदरी आदि जितनी भी रानियाँ हैं, *तव अनुचरीं करउँ* = इन सबको तुम्हारी दासी बना दूँगा, *पन मोरा* = यह मेरा प्रण है, *एक बार बिलोकु मम ओरा* = तुम एक बार मेरी ओर देख तो लो।

हनुमान जी वहाँ छिपे हुए थे, उसी समय रावण कई स्त्रियों के साथ साज सज्जा करके आ गया। दुष्ट रावण कई प्रकार से सीता जी को समझाने लगा। वह सीता जी को अपने बस में करने के लिये लिये चारों नीतियों–साम यानि निवेदन करना व विनम्रता से बोलना, दान यानि लालच, भय यानि डराना, भेद यानि फूट डालना का प्रयोग करता है। वह लालच देते हुए प्रण करके कहता है कि मंदोदरी आदि हमारी जितनी रानियाँ हैं, सब तुम्हारी सेवा करेंगी। तुम्हें महारानी बना दूँगा, बस केवल एक बार तुम हमारी तरफ देख लो।

भगवान को भुलाकर शांति नहीं आ सकती है

तुलसीदास जी ने पहले ही बता दिया कि सीता जी की दृष्टि पैर की तरफ है, अब रावण आवे या कोई और, वे उसकी तरफ देखती तक नहीं। वे रावण

की उपेक्षा करती हैं, उसका तिरस्कार करती हैं, उनका मन राम में लीन है। रावण चाहता है कि वे राम को भूलकर मेरी ओर देखें। सीता माँ भक्तिरूपा हैं, शांतिरूपा हैं। अब कोई चाहे कि भगवान को भुलाकर भक्ति आवे, शांति आवे तो यह व्यर्थ की बात है, यह कभी संभव नहीं है। हमें जीवन में शांति चाहिये तो अपने मन को भगवान में लगाना ही पड़ेगा, दूसरा कोई उपाय नहीं है।

सीता जी रावण को डपटती हैं, पर उसकी ओर देखती नहीं

तृन धरि ओट कहति बैदेही। सुमिरि अवधपति परम सनेही॥ 9.6॥
सुनु दसमुख खद्योत प्रकासा। कबहुँ कि नलिनी करइ बिकासा॥ 9.7॥
अस मन समुझु कहति जानकी। खल सुधि नहिं रघुबीर बान की॥ 9.8॥
सठ सूनें हरि आनेहि मोही। अधम निलज्ज लाज नहिं तोही॥ 9.9॥

तृन धरि ओट = तिनके की आड़ से, *कहति बैदेही* = सीता जी कहती हैं, *सुमिरि अवधपति परम सनेही* = अपने परम स्नेही अवधपति श्रीराम का स्मरण करके, *सुनु दसमुख* = ऐ रावण सुन, *खद्योत प्रकासा* = जुगुनू के प्रकाश से, *कबहुँ कि नलिनी करइ बिकासा* = क्या कभी कमलिनी खिल सकती है। *अस मन समुझु* = तू ऐसा ही अपने मन में समझ ले, *कहति जानकी* = सीता जी रावण से कहती हैं, *खल* = ऐ दुष्ट, *सुधि नहिं रघुबीर बान की* = तुझे श्रीराम के बाण के बारे में पता नहीं है। *सठ* = अरे दुष्ट, *सूनें* = अकेला पाकर के, *हरि आनेहि मोही* = मेरा हरण करके ले आया है, *अधम निलज्ज लाज नहिं तोही* = अरे अधम, निर्लज्ज, तुझे शर्म नहीं आती।

सीता जी रावण को उत्तर देने के पहले अपने परम स्नेही अवधपति श्रीराम का स्मरण करती हैं। वे रावण की तरफ देखती नहीं हैं। पर्दे के लिये कुछ नहीं है तो एक तिनके को ही पर्दा बना लेती हैं। उस तिनके की आड़ से कहती हैं कि हे दशमुख रावण! तेरा प्रकाश तो जुगुनू के समान टिमटिमाता हुआ है, उससे ज्यादा तेज तुममें नहीं है। तुम्हारे जुगुनू के प्रकाश में कमलिनी नहीं खिलती है। कमलिनी खिलने के लिये सूर्य का प्रकाश चाहिये। श्रीराम का तेज सूर्य के समान है। तू ऐसा अपने मन में समझ ले। फिर कहती हैं, रे दुष्ट, तुझे श्रीराम के बाणों की शक्ति का पता नहीं है क्या? जब वे चलेगें तो तेरी क्या

दशा होगी! अरे दुष्ट, तू मुझे अकेला पाकर उठाकर ले आया है। तू अधम है, निर्लज्ज है, तुझे जरा भी लज्जा नहीं आती है।

भगवान के स्मरण से शक्ति आती है

सीता जी वहाँ पर अकेली हैं, वृक्ष के नीचे बैठी हैं। रावण इतना बड़ा राजा है, शाक्तिशाली है पर उसे डपटने में सीता जी डरी नहीं, क्योंकि वे बोलने से पहले प्रभु श्रीराम का स्मरण करती हैं। हनुमान जी व सीता जी, दोनों ही कार्य आरंभ करने के पहले श्रीराम का स्मरण करते हैं। राम की प्रेरणा व शक्ति से कठिन-से-कठिन कार्य सुगमता से पूरे होते हैं। अपने जीवन में भी हमें इस बात का अभ्यास करते रहना चाहिये।

गुस्से में रावण तलवार से सीता जी को धमकाता है

आपुहि सुनि खद्योत सम रामहि भानु समान।
परुष बचन सुनि काढ़ि असि बोला अति खिसिआन॥ दोहा 9॥

आपुहि सुनि खद्योत सम = अपने को जुगनू के समान सुनकर, *रामहि भानु समान* = राम जी को सूर्य के समान, *परुष बचन* = कठोर बचन, *सुनि* = सुनकर, *काढ़ि असि* = तलवार निकालकर , *बोला अति खिसिआन* = बहुत खिसिया करके बोला।

सीता तैं मम कृत अपमाना। कटिहउँ तव सिर कठिन कृपाना॥ 10.1॥
नाहिं त सपदि मानु मम बानी। सुमुखि होति न त जीवन हानी॥ 10.2॥

सीता तैं = हे सीता तूने, *मम* = मेरा, *कृत अपमाना* = अपमान किया है, *कटिहउँ तव सिर* = तुम्हारा सिर काट दूँगा, *कठिन कृपाना* = इस कठोर तलवार से, *नाहिं त* = नहीं तो, *सपदि मानु मम बानी* = मेरी बात को जल्दी से मान ले, *सुमुखि होति न त जीवन हानी* = हे सुंदरी, नहीं तो तुम्हारा जीवन समाप्त हो जायेगा।

रावण सोचता है, अरे यह तो हमें जुगुनू के समान समझती है, और राम को सूर्य के समान। इसकी दृष्टि में राम और मुझ में इतना बड़ा अंतर है। सीता जी के कठोर वचनों को सुनकर उसने खिसियाकर अपनी तलवार निकाल

ली। जब किसी का वश नहीं चलता है तो वह खिसियाता है। रावण कहता है, सीता तुमने मेरा अपमान किया है, मैं इस कठोर तलवार से तुम्हारा सिर काट दूँगा। यदि तुम मेरी बात को नहीं मानोगी तो तुम्हारा जीवन समाप्त हो जायेगा।

प्रभु की सुंदर भुजा या यह कठोर तलवार मेरे गले में पड़ेगी

स्याम सरोज दाम सम सुंदर। प्रभु भुज करि कर सम दसकंधर॥ 10.3॥
सो भुज कंठ कि तव असि घोरा। सुनु सठ अस प्रवान पन मोरा॥ 10.4॥

स्याम सरोज दाम = नीले रंग के कमल की माला, *सम सुंदर* = के समान सुंदर, *प्रभु भुज* = श्रीराम की भुजा, *करि कर सम* = जो हाथी की सूँढ़ के समान मजबूत और विशाल है, *दसकंधर* = रावन सुनो, *सो भुज कंठ* = वही भुजा मेरे गले में पड़ेगी, *कि तव असि घोरा* = या तो तेरी यह कठोर तलवार, *सुनु सठ* = रे दुष्ट सुन, *अस* = यही, *प्रवान पन* = सच्ची प्रतिज्ञा, *मोरा* = मेरी है।

सीता जी रावण से कहती हैं कि रे दुष्ट, मेरी सच्ची प्रतिज्ञा सुन। प्रभु श्रीराम की भुजा नीले कमल के फूल की माला के समान सुंदर व हाथी की सूँढ़ के समान लंबी व मजबूत है। मेरे गले में वही पड़ेगी या तेरी यह कठोर तलवार। इस प्रकार वे कहती हैं कि तुम गला काटते हो तो काट लो पर मैं तुम्हारी बात नहीं मानूँगी। वे रावण के भय से भयभीत नहीं होती हैं।

तलवार से कहती हैं कि तू ही मेरा दुःख दूर कर दे

चंद्रहास हरु मम परितापं। रघुपति बिरह अनल संजातं॥ 10.5॥
सीतल निसित बहसि बर धारा। कह सीता हरु मम दुख भारा॥ 10.6॥

चंद्रहास = हे चन्द्रहास तलवार, *हरु मम परितापं* = मेरी पीड़ा को दूर कर, *रघुपति बिरह* = श्रीराम का वियोग, *अनल संजातं* = अग्नि के समान जलाता है, *सीतल* = ठंढी, *निसित* = तेज, *बहसि* = बहती है, *बर* = जल, *धारा* = धार, *कह सीता* = सीता जी कहती हैं, *हरु मम दुख भारा* = मेरे बड़े भारी दुःख को दूर कर दे।

रावण जिस तलवार से डरा रहा है उसका नाम चन्द्रहास है। अब सीता जी रावण से न कहकर तलवार से ही विनय करती हैं। हे चन्द्रहास, श्रीराम के वियोग की ज्वाला में मेरा शरीर जल रहा है, तेरी तेज धार शीतल जल की धारा के समान है, तू मेरा दु:ख दूर कर। कहने का आशय है कि तलवार तू मेरा सिर काट कर जीवन समाप्त कर दे, जब जीवन ही नहीं रहेगा तो श्रीराम के वियोग का दु:ख भी समाप्त हो जायेगा।

रावण मारने दौड़ता है, मंदोदरी उसे रोक लेती है

सुनत बचन पुनि मारन धावा। मयतनयाँ कहि नीति बुझावा॥ 10.7॥

सुनत बचन = सीता जी के बचन सुनकर, *पुनि मारन धावा* = वह मारने के लिये दौड़ता है, *मयतनयाँ* = मय दानव की पुत्री मंदोदरी, *कहि नीति* = नीति की बातें कहकर, *बुझावा* = समझाती है।

रावण ने यह समझ लिया कि सीता ने तलवार से सिर कटवाना स्वीकार कर लिया है, इसलिये वह तलवार लेकर मारने के लिये दौड़ता है। मय नामक दानव की पुत्री मंदोदरी है, जो रावण की पत्नी है। वह उसे नीति की बात कहकर समझाती है, स्त्री के ऊपर तलवार मत चलाओ, इससे तुम्हारी बदनामी होगी। यहाँ पर रावण मंदोदरी की बात मान लेता है।

सीता जी को डराकर मनाओ, ऐसा कहकर रावण चला जाता है

कहेसि सकल निसिचरिन्ह बोलाई। सीतहि बहु बिधि त्रासहु जाई॥ 10.8॥
मास दिवस महुँ कहा न माना। तौ मैं मारबि काढ़ि कृपाना॥ 10.9॥

कहेसि सकल निसिचरिन्ह बुलाई = फिर उसने सभी राक्षसियों को बुलाकर कहा, *सीतहि बहु बिधि त्रासहु जाई* = सीता को बहुत प्रकार से भय दिखाओ, *मास दिवस* = एक महीने में, *महुँ कहा न माना* = मेरी बात नहीं मानेगी, *तौ मैं मारबि काढ़ि कृपाना* = तो मैं तलवार निकालकर मार दूँगा।

भवन गयउ दसकंधर इहाँ पिसाचिनि बृंद।
सीतहि त्रास देखावहिं धरहिं रूप बहु मंद॥ दोहा 10॥

भवन गयउ दसकंधर = रावण अपने महल चला जाता है, *इहाँ पिसाचिनि बृंद* = यहाँ राक्षसियों के समूह, *सीतहि त्रास देखावहिं* = सीता जी को भय दिखाती हैं, *धरहिं रूप बहु मंद* = बहुत-से बुरे रूप धारण करके।

अब रावण सब राक्षसियों को बुलाकर कहता है कि तुम सब सीता को तरह-तरह से डराओ। एक माह बाद मैं फिर आऊँगा। यदि इस अवधि के अंदर यह हमारी बात नहीं मानती है, तो मैं इसे तलवार निकालकर मार दूँगा। निशाचरियों के समूह बहुत बुरे-बुरे रूप बनाकर सीता जी को डराने लगती हैं।

दुःख में भी भगवान को याद रखें

सीता जी इन सबके डराने-धमकाने से व्याकुल नहीं होती हैं, वे तो बस अपने प्रभु श्रीराम का स्मरण करती रहती हैं। हमारे जीवन में भी कष्ट और दुःख आते रहते हैं, पर इसका यह मतलब नहीं है कि हम भगवान को भुला दें। चाहे जितनी विपत्तियाँ आयें, हम विचलित न हों, भगवान का स्मरण बराबर करते रहें।

त्रिजटा राक्षसी जो राम भक्त है, एक सपना सुनाती है

त्रिजटा नाम राच्छसी एका। राम चरन रति निपुन बिबेका॥ 11.1 ॥
सबन्हौ बोलि सुनाएसि सपना। सीतहि सेइ करहु हित अपना॥ 11.2 ॥

त्रिजटा नाम राच्छसी एका = त्रिजटा नाम की एक राक्षसी थी, *राम चरन रति* = उसे राम के चरणों में प्रेम था, *निपुन बिबेका* = वह ज्ञानवान् थी, *सबन्हौ बोलि सुनाएसि सपना* = उसने सब निशाचरियों को बुलाकर अपना सपना सुनाया, *सीतहि सेइ* = सीता जी की सेवा करके, *करहु हित अपना* = अपना कल्याण करो।

त्रिजटा नाम की एक राक्षसी थी, जिसकी श्रीराम के चरणों में भक्ति थी। वह ज्ञानवान् और विवेकवान् थी। वह उन सब पिशाचिनियों को जो सीता जी को डरा रही थीं, बुलाकर कहती है, मैंने एक सपना देखा है, अब तुम लोग सीता जी को डराने की बजाय उनकी सेवा करके अपना कल्याण करो।

लंका में आग, रावण मरा, विभीषण राजा, सीता जी राम के पास

सपनें बानर लंका जारी। जातुधान सेना सब मारी॥ 11.3॥
खर आरूढ़ नगन दससीसा। मुंडित सिर खंडित भुज बीसा॥ 11.4॥
एहि बिधि सो दच्छिन दिसि जाई। लंका मनहुँ बिभीषन पाई॥ 11.5॥
नगर फिरी रघुबीर दोहाई। तब प्रभु सीता बोलि पठाई॥ 11.6॥

सपनें बानर लंका जारी = स्वप्न में देखा है कि एक वानर ने लंका जला दी है, *जातुधान सेना सब मारी* = राक्षसों की पूरी सेना मार दी गई है, *खर आरूढ़* = रावण गधे पर सवार है, *नगन दससीसा* = रावण नंगा है, *मुंडित सिर* = सिर मुड़ा हुआ है, *खंडित भुज बीसा* = बीसों भुजायें कटी हुई हैं, *एहि बिधि सो दच्छिन दिसि जाई* = इस प्रकार से वह दक्षिण की तरफ जा रहा है, *लंका मनहुँ बिभीषन पाई* = विभीषण को लंका का राजा बना दिया गया है, *नगर फिरी रघुबीर दोहाई* = नगर में श्रीराम जी की दुहाई फिर गई, *तब प्रभु सीता बोलि पठाई* = तब प्रभु राम ने सीता जी को बुला लिया।

त्रिजटा कहती है स्वप्न में एक वानर ने आकर लंका में आग लगा दी है। सारी राक्षस सेना मारी गई है। रावण गधे पर सवार है, वह नंगा है, उसका सिर मुड़ा हुआ है, बीसों भुजायें कटी हैं। इस प्रकार गधे पर सवार रावण दक्षिण दिशा यानि यमपुरी की तरफ जा रहा है। वह मारा जा चुका है। विभीषण को लंका का राजा बना दिया गया है। पूरे नगर में राम जी की दुहाई दी जा रही है। फिर राम जी ने सीता जी को बुला लिया है, वे उस पर्वत पर जाती हैं जहाँ श्रीराम हैं।

सपना सुनकर राक्षसी डराना बंदकर चली जाती हैं

यह सपना मैं कहउँ पुकारी। होइहि सत्य गएँ दिन चारी॥ 11.7॥
तासु बचन सुन ते सब डरीं। जनकसुता के चरनन्हि परीं॥ 11.8॥

जहँ तहँ गईं सकल तब सीता कर मन सोच।
मास दिवस बीतें मोहि मारिहि निसिचर पोच॥ दोहा 11॥

यह सपना मैं कहउँ पुकारी = यह सपना मैं निश्चय के साथ कहती हूँ, *होइहि सत्य गएँ दिन चारी* = यह कुछ ही दिनों में सत्य हो जायेगा। *तासु बचन*

सुन ते सब डरीं = उसकी बात सुनकर सब डर गयीं, *जनकसुता के चरनन्हि परीं* = जानकीजी के चरणों पर गिर पड़ीं, *जहँ तहँ गईं सकल तब* = इसके बाद वे सब जहाँ-तहाँ चली गयीं, *सीता कर मन सोच* = सीता जी मन में सोच करने लगीं, *मास दिवस बीतें* = एक माह बीत जाने के बाद, *मोहि* = मुझे, *मारिहि निसिचर पोच* = नीच राक्षस रावण मार देगा।

त्रिजटा कहती है, 'यह सपना मैं निश्चयपूर्वक जोर से कह रही हूँ, कुछ ही दिनों में यह वास्तव में घटित हो जायेगा।' सपने की बातें सुनकर राक्षसियाँ समझ जाती हैं कि रावण के मरने के बाद हमारा क्या होगा। सीता जी का विरोध करेंगी, उन्हें डरायेंगी तो हम भी मारी जायेंगी। वे अभी सीता जी को डरा रही थीं, अब खुद डरने लगीं। सीता जी के चरणों मे पड़कर उनसे क्षमायाचना करके यहाँ-वहाँ चली जाती हैं। इस प्रकार त्रिजटा सीता जी की सहायता करती है। सीता जी भी उसका आदर करने लगती हैं। इन सबके जाने के बाद सीता जी सोचती हैं कि रावण तो एक माह का समय दे गया है, उसके बाद वह नीच हमें मार डालेगा।

भगवान की भक्ति का द्वार सबके लिये खुला है

तुलसीदास जी कहते हैं कि त्रिजटा राक्षस कुल में उत्पन्न हुई, इसलिये वह राक्षसी है, परन्तु वह श्रीराम की भक्त है, ज्ञानी है, विवेकी है। राक्षस होते हुए भी विभीषण भगवान के भक्त हैं। चाहे स्त्री हो या पुरुष, चाहे जिस कुल में उत्पन्न हो, अध्यात्म और भक्ति के मार्ग पर सब लोग चल सकते हैं। लंका में विभीषण हनुमान जी के सहायक बनते हैं तो अशोकवन में त्रिजटा सीता जी की सहायता करती है।

त्रिजटा से देह त्याग का उपाय करने की विनती करती हैं

त्रिजटा सन बोलीं कर जोरी। मातु बिपति संगिनि तैं मोरी॥ 12.1॥
तजौं देह करु बेगि उपाई। दुसह बिरहु अब नहिं सहि जाई॥ 12.2॥
आनि काठ रचु चिता बनाई। मातु अनल पुनि देहि लगाई॥ 12.3॥
सत्य करहि मम प्रीति सयानी। सुनै को श्रवन सूल सम बानी॥ 12.4॥

त्रिजटा सन = त्रिजटा से, *बोलीं कर जोरी* = हाथ जोड़कर बोलीं, *मातु* = हे माता, *बिपति संगिनि तैं मोरी* = तुम ही मेरे कष्टों में सहायिका हो, *तजौं देह* = मैं यह शरीर त्यागना चाहती हूँ, *करु बेगि उपाई* = जल्दी से कोई उपाय करो, *दुसह बिरहु अब नहिं सहि जाई* = यह वियोग अब सहा नहीं जाता है। *आनि काठ* = लकड़ी लाकर के, *रचु चिता बनाई* = चिता बना दे, *मातु अनल पुनि देहि लगाई* = हे माँ, फिर उसमें आग लगा दे। *सत्य करहि मम प्रीति सयानी* = हे समझदार माँ, तू श्रीराम के प्रति मेरे प्रेम को सत्य कर दे, *सुनै को* = कहाँ तक सुनें, *श्रवन सूल सम बानी* = कानों मे शूल के समान लगने वाली बातें।

सीता जी त्रिजटा को माता संबोधित करते हुए हाथ जोड़कर कहती हैं कि तुम विपत्ति में हमारी संगिनी बन गई हो। मुझसे राम के विरह का दु:ख अब सहा नहीं जाता है। शूल के समान कान में लगने वाली रावण की बातें अब हमसे सुनी नहीं जाती हैं। हमारे मरने का जल्दी उपाय कर दो। लकड़ी ले लाओ, चिता बनाओ, हम उस चिता पर बैठ जायें, फिर तुम उसमें आग लगा दो, हमारा शरीर समाप्त हो जाये। इस प्रकार प्रभु श्रीराम के प्रति हमारा प्रेम सत्य हो जाये।

सीता जी को समझाकर त्रिजटा चली जाती है

सुनत बचन पद गहि समुझाएसि। प्रभु प्रताप बल सुजसु सुनाएसि॥ 12.5॥
निसि न अनल मिल सुनु सुकुमारी।अस कहि सो निज भवन सिधारी॥ 12.6॥

सुनत बचन = वचन सुनकर, *पद गहि* = चरणों को पकड़कर, *समुझाएसि* = समझाती है, *प्रभु प्रताप बल सुजसु सुनाएसि* = प्रभु श्रीराम का प्रताप, बल व यश सुनाती है। *निसि न अनल मिल* = रात में अग्नि नहीं मिलेगी, *सुनु सुकुमारी* = हे सुकुमारी सुनो, *अस कहि सो* = ऐसा कहकर वह, *निज भवन सिधारी* = अपने घर चली गई।

त्रिजटा सीता जी के चरणों में प्रणाम करके फिर उनके चरण पकड़कर समझाती है। प्रभु राम का प्रताप, बल, यश, तेज उन्हें समझाती है। राम के सामने यह रावण टिक नहीं पायेगा, इसका अंत समय आ गया है, इसलिये

तुम चिंता मत करो। जब तक राम आकर निशाचरों का वध नहीं कर देते, तुम धैर्य धारण करो। रात में आग नहीं मिलेगी, ऐसा कहकर वह अपने घर चली जाती है।

चन्द्रमा, तारों और अशोक के पेड़ से सीता जी अग्नि माँगती हैं

कह सीता बिधि भा प्रतिकूला। मिलिहि न पावक मिटिहि न सूला॥ 12.7॥
देखिअत प्रगट गगन अंगारा। अवनि न आवत एकउ तारा॥ 12.8॥
पावकमय ससि स्रवत न आगी। मानहुँ मोहि जानि हतभागी॥ 12.9॥
सुनहि बिनय मम बिटप असोका। सत्य नाम करु हरु मम सोका॥ 12.10॥
नूतन किसलय अनल समाना। देहि अगिनि जनि करहि निदाना॥ 12.11॥

कह सीता = सीता जी कहती हैं, *बिधि भा प्रतिकूला* = विधाता हमारे प्रतिकूल हो गया है, *मिलिहि न पावक* = जब तक अग्नि नहीं मिलेगी, *मिटिहि न सूला* = हमारी पीड़ा भी दूर नहीं होगी। *देखिअत प्रगट गगन अंगारा* = आकाश में अंगारों के समान तारे दिख रहे हैं, *अवनि न आवत एकउ तारा* = पर जमीन पर एक भी तारा नहीं आता। *पावकमय ससि* = चन्द्रमा अग्निमय है, *स्रवत न आगी* = वह भी आग नहीं बरसा रहा, *मानहुँ मोहि जानि हतभागी* = मानो मुझे दुर्भाग्यशाली जानकर। *सुनहि बिनय मम बिटप असोका* = हे अशोकवृक्ष मेरी विनय सुन, *सत्य नाम करु* = तू अपना नाम सत्य कर, *हरु मम सोका* = मेरे शोक को दूर कर, *नूतन किसलय* = तेरे नये-नये पत्ते, *अनल समाना* = अग्नि के समान हैं, *देहि अगिनि* = तू ही अग्नि देकर, *जनि करहि निदाना* = मेरी विरह पीड़ा को समाप्त कर।

अब सीता जी अकेली हैं, वे सोचती हैं, विधाता हमारे प्रतिकूल हो गया है, न आग मिलेगी न हमारा कष्ट दूर होगा। वे आकाश की तरफ देखती हैं, वहाँ अँगारों जैसे तारे चमक रहे हैं। वे सोचती हैं, क्या ऐसा नहीं हो सकता कि एक तारा पृथ्वी पर आ जाये। चन्द्रमा भी अग्नि दे सकता है, परंतु मुझे अभाग्यशाली मानकर वह भी आग नहीं बरसा रहा है। अशोक के पेड़ पर नये-नये कोमल लाल पत्ते भी सीता जी को अग्नि के समान दिखते हैं। अशोकवृक्ष से ही विनय करने लगती हैं कि तू ही मुझे अग्नि दे दे, मेरा दुःख दूर कर, अपना अशोक नाम सत्य कर।

हनुमान जी पेड़ से श्रीराम की अँगूठी डाल देते हैं

देखि परम बिरहाकुल सीता। सो छन कपिहि कलप सम बीता॥ 12.12॥

कपि करि हृदयँ बिचार दीन्हि मुद्रिका डारि तब।
जनु असोक अंगार दीन्ह हरषि उठि कर गहेउ॥ सोरठा 12॥

देखि परम बिरहाकुल सीता = सीता जी को बहुत व्याकुल देखकर, *सो छन* = वह पल, *कपिहि* = हनुमान जी को, *कलप सम बीता* = एक कल्प के समान लगा। *कपि करि हृदयँ बिचार* = तब हनुमान जी ने हृदय में विचार कर, *दीन्हि मुद्रिका डारि तब* = सीता जी के सामने अँगूठी डाल दी, *जनु असोक अंगार दीन्ह* = मानो अशोक के पेड़ ने अंगार दे दिया, *हरषि उठि कर गहेउ* = हर्षित होकर उठकर उसे हाथ में उठा लेती हैं।

सीता जी को विरह से व्याकुल देखकर, वह क्षण हनुमान जी को कल्प के समान व्यतीत हुआ। तब हनुमान जी, हृदय में विचार करके सीता जी के सामने राम जी की अँगूठी पेड़ से ही डाल देते हैं। सीता जी को लगा कि अशोक के पेड़ ने हमारी विनय सुनकर अग्नि प्रदान कर दी है। वे प्रसन्न होकर उठती हैं और उस अँगूठी को अंगार समझकर हाथ में उठा लेती हैं।

5. हनुमान जी सीता जी से मिलते हैं – माँ-पुत्र का मिलन

(दोहा 13 से दोहा 17)

हनुमान जी के सीता जी से मिलने की कथा को तुलसीदास जी अद्‌भुत तरीके से प्रस्तुत करते हैं। इस प्रसंग में हनुमान जी बार-बार सीता जी को माँ कहते हैं, सीता जी भी उन्हें सुत कहकर संबोधित करती हैं। माँ-पुत्र दोनों गद्‌गद् होते हैं, आँखों में प्रेम के आँसू आते हैं, प्रेम में मग्न होते हैं। माँ के आशीर्वाद से पुत्र कृतकृत्य हो जाता है। जैसे छोटा बच्चा अपनी माँ से कहता है, माँ खूब भूख लगी है, खाना दो। वैसे ही हनुमान जी सीता माँ से कहते हैं, मुझे बहुत तेज भूख लगी है, फल खा लूँ? वे आज्ञा देती हैं, हाँ खा ले। इस प्रसंग की कथा मन को भाव-विभोर करती है। सीता माँ एक ओर अपने प्रभु राम का संदेश सुन उनके प्रेम में मग्न होती हैं, वहीं दूसरी ओर वे पुत्र हनुमान के प्रति स्नेह से भाव-विभोर हो जाती हैं। सीता जी के सुंदर चरित्र व हनुमान जी के माँ के प्रति प्रेम व समर्पण

को मन में धारण करने का प्रयास करें। इस प्रसंग का भाव सहित पाठ करने से श्री गुरुदेव की कृपा से सीता माँ के प्रेम की अनुभूति हमें भी होगी व पुत्र हनुमान का समर्पण भाव भी हृदय में प्रकट होगा। जो लोग अपनी माँ के प्रति प्रेम भाव नहीं रख पाते, उनका आदर व सम्मान नहीं करते, वे इसका बार-बार पाठ करके अपने अंदर होने वाले परिवर्तन का स्वयं अनुभव कर सकते हैं।

श्रीराम की अँगूठी देख माँ सीता हर्षित, चिंतित व व्याकुल

तब देखी मुद्रिका मनोहर। राम नाम अंकित अति सुंदर॥ 13.1 ॥
चकित चितव मुदरी पहिचानी। हरष विषाद हृदयँ अकुलानी॥ 13.2 ॥

तब देखी मुद्रिका मनोहर = फिर सुंदर अँगूठी को देखती हैं, *राम नाम अंकित अति सुंदर* = उसमें अत्यंत सुंदर राम नाम लिखा था। *चकित चितव मुदरी पहिचानी* = बड़ी सावधानी से देखकर अँगूठी को पहचान लिया, *हरष विषाद हृदयँ अकुलानी* = हर्ष व विषाद से व्याकुल हो गयीं।

सीता जी देखती हैं, अँगूठी बड़ी सुंदर है, उसके ऊपर राम नाम भी बड़ी सुंदरता से लिखा हुआ था। बड़ी सावधानी से उलट-पलट कर देखने लगीं, अच्छी तरह से पहचानने की कोशिश करने लगीं। उन्होंने पहचान लिया कि यह अँगूठी तो श्रीराम की है। मुद्रिका देखकर उनके अंदर प्रसन्नता का भाव आया कि अब राम जी का कोई संदेश मिलेगा। फिर विषाद का भाव भी आया कि राम जी की अँगूठी का इस प्रकार हमारे पास आना कुछ अनर्थ भी हो सकता है। विषाद के साथ हृदय व्याकुल हो गया।

सीता जी सोचती हैं राम जी अजेय, यह अंगूठी भी असली है

जीति को सकइ अजय रघुराई। माया तें असि रचि नहिं जाई॥ 13.3 ॥

जीति को सकइ = कौन जीत सकता है?, *अजय रघुराई* = रघुवीर राम तो अजेय हैं, *माया तें* = छल से, *असि रचि नहिं जाई* = ऐसी रचना नहीं हो सकती।

सीता जी के मन में कई विचार आते हैं। उन्हें लगा कि किसी ने राम जी को जीतकर, उनके हाथ से अँगूठी निकालकर, हमारे पास पहुँचाई है। मानो इस

बात की वह सूचना देना चाहता है कि श्रीराम पराजित हो गये हैं या वे युद्ध में मारे गये हैं। सीता जी सोचती हैं कि ऐसा संभव नही है, क्योंकि श्रीराम तो अजेय हैं, उनको कोई जीत नहीं सकता। फिर दूसरा विचार आता है, हो सकता है कि निशाचरों ने नकली अँगूठी बनाकर यहाँ डाल दी हो, ताकि भ्रम हो जाये कि श्रीराम अब नहीं हैं, तुम उन्हें भूल जाओ। माया मतलब जाली अँगूठी। सीता जी पहचान गईं कि यह अँगूठी पंच भौतिक तत्त्वों से नहीं बनी है। यह चेतन है, चिन्मय है, दिव्य है, यह नकली नहीं है।

भगवान की सब चीजें चेतन व दिव्य हैं

भगवान के धनुष-बाण लकड़ी या लोहे के नहीं बने हैं। उनके मुकुट को किसी कारीगर ने नहीं बनाया है। जिस निर्विकार तत्त्व के भगवान हैं, उसी निर्विकार तत्त्व के उनके वस्त्र, आभूषण, अस्त्र व शस्त्र हैं। भगवान ने जो पादुकायें भरत जी को दीं, वे भी वैसी ही चेतन हैं जैसे भगवान हैं। भरत जी उन पादुकाओं से आदेश लेकर शासन करते हैं। तुलसीदास जी ने *'माया तें असि रचि नहीं जाई'* कहकर संकेत मात्र दे दिया है।

हनुमान जी के रामकथा सुनाने पर माँ सीता का दुःख भाग गया

सीता मन बिचार कर नाना। मधुर बचन बोलेउ हनुमाना॥ 13.4॥
रामचंद्र गुन बरनैं लागा। सुनतहिं सीता कर दुख भागा॥ 13.5॥
लागीं सुनैं श्रवन मन लाई। आदिहु तें सब कथा सुनाई॥ 13.6॥

सीता मन = सीता जी के मन में, *बिचार कर नाना* = बहुत-से विचार आते हैं, *मधुर बचन बोलेउ हनुमाना* = हनुमान जी मधुर वचन बोलते हैं, *रामचंद्र गुन बरनैं लागा* = श्रीराम के गुणों का वर्णन करते हैं, *सुनतहिं* = सुनते ही, *सीता कर दुख भागा* = सीता जी का दुःख भाग जाता है। *लागीं सुनैं* = सुनने लगती हैं, *श्रवन मन लाई* = कान व मन लगाकर, *आदिहु तें* = शुरू से, *सब कथा सुनाई* = सब कथा सुनाते हैं।

सीता जी के मन में और भी विचार आये, यहाँ दो विचारों का वर्णन तुलसीदास जी करते हैं। हनुमान जी ने पेड़ से ही सीता जी को चिंतित देखा, वे सामने नहीं आते, पेड़ से ही छिपे-छिपे बड़ी मधुरता के साथ बोलते हैं। हनुमान जी

ने श्रीराम के गुणों का वर्णन व कथा सुनाना प्रारंभ किया। सुनते ही सीता जी का दुःख भाग गया। हनुमान जी दिख तो नहीं रहे थे, सिर्फ आवाज आ रही थी, सीता जी श्रीराम के चरित्रों को कान लगाकर व मन लगाकर सुनने लगीं। हनुमान जी ने शुरू से ही सब कथा सुनाई। राम जी ने कैसे अवतार लिया, बाल लीला की, जनकपुर गये, विवाह हुआ, कैसे वन जाने का आदेश हुआ, कैसे रावण सीता को हर लेता है।

श्रीराम कथा सुनने से दुःख तुरंत भागता है

तुलसीदास जी की शब्द योजना देखने लायक है। वे यह नहीं कहते कि दुःख समाप्त हो गया। कहते हैं कि दुःख भाग गया। मानो दुःख कोई व्यक्ति हो जो हृदय में छिपा था, कथा सुनते ही हृदय से निकलकर दूर खड़ा हो गया। जब आप भगवान की कथा सुनेंगे, उस समय जो भी दुःख होगा, उतने काल तक दुःख भाग जायेगा, फिर आ जायेगा। साधना काल में दुःख बार-बार आता रहता है, सिद्धावस्था में दुःख नष्ट हो जाता है, फिर लौटकर नहीं आता।

सीता माँ के बुलाने पर हनुमान जी उनके सामने आते हैं

श्रवनामृत जेहिं कथा सुहाई। कही सो प्रगट होति किन भाई॥ 13.7॥
तब हनुमंत निकट चलि गयऊ। फिरि बैठीं मन बिसमय भयऊ॥ 13.8॥

श्रवनामृत = कानों में अमृत के समान, *जेहिं कथा सुहाई* = जिसने यह सुंदर कथा, *कही* = सुनाई है, *सो प्रगट* = वो मेरे सामने, *होति किन भाई* = क्यों नहीं आता। *तब हनुमंत* = तब हनुमान जी, *निकट चलि गयऊ* = सीता जी के पास जाते हैं, *फिरि बैठीं* = सीता जी मुँह घुमाकर बैठ जाती हैं, *मन बिसमय भयऊ* = मन में आश्चर्य होता है।

यह कथा सीता जी के कान में अमृत समान लगी। वे कहने लगीं, इतनी सुंदर कथा सुनाने वाले तुम भगवान के प्रेमी हो, भक्त हो, हे भाई तुम प्रकट क्यों नहीं होते? सामने क्यों नहीं आते? सीता जी भगवान के भक्त को देखना भी चाहती हैं। जब सीता जी का आदेश हुआ तब हनुमान जी पेड़ से कूदकर सीता जी के सामने आ जाते हैं। अब सीता जी ने देखा यह तो वानर है, तब सीता जी ने अपना मुँह घुमा लिया, घूमकर बैठ गयीं। उन्हें लगा, इतनी अच्छी कथा

सुनाने वाला यह वानर तो बनावटी लगता है। तुलसीदास जी बहुत साफ-साफ लिखते हैं *'तब हनुमंत निकट चलि गयऊ'*, मायने जब सीता जी का आदेश हो गया तब गये, पहले नहीं, बिना बुलाये नहीं।

राम दूत कहकर हनुमान जी अपना परिचय देते हैं

राम दूत मैं मातु जानकी। सत्य सपथ करुनानिधान की॥ 13.9॥
यह मुद्रिका मातु मैं आनी। दीन्हि राम तुम्ह कहँ सहिदानी॥ 13.10॥

राम दूत मैं मातु जानकी = हे माता जानकी, मैं राम जी का दूत हूँ, *सत्य सपथ करुनानिधान की* = करुणानिधान की सच्ची शपथ खाकर कहता हूँ। *यह मुद्रिका मातु मैं आनी* = हे माँ, यह अँगूठी मैं ही लाया हूँ, *दीन्हि राम* = राम जी ने ही इसे दिया है, *तुम्ह कहँ सहिदानी* = आपकी पहचान के लिये।

हनुमान जी सीता जी के सामने खड़े हैं, अत्यंत मधुरता व विनम्रता से पहला शब्द उनके मुँह से निकलता है 'राम'। सीता जी को माँ कहकर ही वे संबोधन शुरू करते हैं। कहते हैं – हे माता सीता, मैं राम का दूत हूँ। मैं करुणानिधान श्रीराम की सच्ची शपथ लेकर कहता हूँ। श्रीराम ने यह अँगूठी मेरे द्वारा आपके पास पहचान के लिये भेजी है। इसलिये मुँह फेरने, शंका करने या डरने की जरूरत नहीं है।

पूछने पर राम-सुग्रीव मित्रता की कथा सुनाते हैं

नर बानरहि संग कहु कैसें। कही कथा भइ संगति जैसें॥ 13.11॥

नर बानरहि संग = नर और वानरों का साथ, *कहु कैसें* = बताओ कैसे हुआ, *कही कथा* = वह सब कथा कही, *भइ संगति जैसें* = जैसे साथ हुआ।

सीता जी कहती हैं, ठीक है तुम राम दूत हो, पर कहाँ प्रभु राम और कहाँ वानर! तुम्हारी प्रभु राम के साथ जान-पहचान कैसे हो गयी? तुम उनके दूत कैसे बन गये? तुम्हें इतना ज्यादा विश्वास में लेकर दूत बनाकर कैसे भेज दिया? ये सब बातें देखकर आश्चर्य लगता है। हनुमान जी सीताहरण तक की कथा पेड़ में छिपे-छिपे सुना पाये थे, इतने में सीता जी के बुलाने पर वे कथा

छोड़कर उनके सामने प्रकट हो गये थे। सीता जी के पूछने पर आगे की कथा कहते हैं। वे बताते हैं कि कैसे सुग्रीव से मित्रता की, उसमें यह तय हुआ कि राम बालि को मारकर राज्य वापस दिलायेंगे, सुग्रीव सीता जी की खोज में सहायता करेगा।

सीता माँ संतुष्ट हो गईं कि हनुमान प्रभु राम के दूत हैं

कपि के बचन सप्रेम सुनि उपजा मन बिस्वास।
जाना मन क्रम बचन यह कृपासिंधु कर दास॥ दोहा 13॥

कपि के = हनुमान जी के, *बचन सप्रेम सुनि* = प्रेमपूर्ण वचन सुनकर, *उपजा मन बिस्वास* = मन में विश्वास आ गया, *जाना* = जान लिया कि, *मन क्रम बचन* = मन, वचन व कर्म से, *यह कृपासिंधु कर दास* = यह कृपा सिंधु श्रीराम का सेवक है।

माँ सीता ने जब हनुमान जी से ये सब बातें सुनीं तो सुनकर उनके मन में विश्वास पैदा हो गया। उन्होंने यह भी जाना कि हनुमान प्रभु राम का भक्त है, सेवक है, सेवा कर्म में दूत बनकर आया है। यह सब जानकर सीता जी के मन में हनुमान के प्रति बड़ा प्रेम आ गया।

माँ सीता पुलकित होकर हनुमान जी को जहाज कहती हैं

हरिजन जानि प्रीति अति गाढ़ी। सजल नयन पुलकावलि बाढ़ी॥ 14.1॥
बूड़त बिरह जलधि हनुमाना। भयहु तात मो कहुँ जलजाना॥ 14.2॥

हरिजन = हरि का भक्त, *जानि* = जानकर, *प्रीति अति गाढ़ी* = अत्यंत गहरा प्रेम हो गया, *सजल नयन* = नेत्रों में जल भर आया, *पुलकावलि बाढ़ी* = शरीर पुलकित हो गया। *बूड़त* = डूब रही थी, *बिरह जलधि* = वियोग के समुद्र में, *हनुमाना* = हे हनुमान, *भयहु तात* = हे तात, तुम बन गये हो, *मो कहुँ* = मेरे लिये, *जलजाना* = जहाज के समान।

यह जानकर कि हनुमान राम जी के भक्त हैं, सीता माँ के हृदय में उनके प्रति गहरा प्रेम हो जाता है। उनका शरीर पुलकित हो जाता है, नेत्रों में जल भर

आता है। वे कहने लगती हैं, हम विरह के सागर में डूब रहे थे, तुम तो हमारे लिये जहाज बन गये। जैसे डूबते हुए व्यक्ति के पास नाव पहुँच जाये, उसे सहारा मिल जाये और वह उस पार पहुँच जाये।

लक्ष्मण-राम की कुशलता पूछ सीता माँ भावुक हो जाती हैं

अब कहु कुसल जाउँ बलिहारी। अनुज सहित सुख भवन खरारी॥ 14.3॥
कोमलचित कृपाल रघुराई। कपि केहि हेतु धरी निठुराई॥ 14.4॥
सहज बानि सेवक सुखदायक। कबहुँक सुरति करत रघुनायक॥ 14.5॥
कबहुँ नयन मम सीतल ताता। होइहहिं निरखि स्याम मृदु गाता॥ 14.6॥
बचनु न आव नयन भरे बारी। अहह नाथ हौं निपट बिसारी॥ 14.7॥

अब कहु कुसल = अब कुसलता का समाचार दो, *जाउँ बलिहारी* = मैं बलिहारी जाती हूँ, *अनुज सहित* = छोटे भाई लक्ष्मण सहित, *सुख भवन* = सुख देने वाले राम, *खरारी* = बुराई के शत्रु। *कोमलचित कृपाल रघुराई* = श्रीराम तो कोमलचित्त व कृपालु हैं, *कपि केहि हेतु* = हे वानर किस कारण से, *धरी निठुराई* = निठुरता धारण कर रखी है। *सहज बानि* = स्वाभाविक स्वभाव है, *सेवक सुखदायक* = सेवकों को सुख देना, *कबहुँक सुरति करत रघुनायक* = रघुनाथजी क्या कभी मेरी भी याद करते हैं। *कबहुँ नयन मम सीतल ताता होइहहिं* = हे तात क्या कभी हमारे नयन शीतल होंगे, *निरखि स्याम मृदु गाता* = उनके श्यामल कोमल शरीर को देखकर। *बचनु न आव* = मुँह से वचन नहीं निकलते, *नयन भरे बारी* = नेत्रों में जल भर आया, *अहह नाथ हौं निपट बिसारी* = हे नाथ आपने मुझे बिल्कुल ही भुला दिया।

सीता जी कहती हैं हम तुम्हारे बलिहारी जाते हैं। श्रीराम तो सबको सुख देने वाले, बुराई दूर करने वाले हैं। अब छोटे भाई लक्ष्मण सहित उनकी कुशलता बताओ। वे पूछती हैं, रघुवर तो कोमलचित्त हैं, फिर इतनी निठुरता क्यों की है? अभी तक हमें लेने नहीं आये? श्रीराम तो स्वभाव से ही सेवकों को सुख देने वाले हैं, क्या कभी वे मेरा स्मरण करते हैं? क्या कभी श्यामले रंग के सुंदर कोमल रघुवर के दर्शन कर हमारे नेत्र शीतल होंगे? इतना कहते-कहते सीता जी का गला भर आता है। उनके मुँह से वचन नहीं निकलते, आँखों में आँसू आ जाते हैं। कहती हैं, देखो हमारे नाथ ने हमें भुला दिया है।

हनुमान जी कहते हैं कि हे माता, राम आपसे दुगुना प्रेम करते हैं

देखि परम बिरहाकुल सीता। बोला कपि मृदु बचन बिनीता॥ 14.8॥
मातु कुसल प्रभु अनुज समेता। तव दुख दुखी सुकृपा निकेता॥ 14.9॥
जनि जननी मानहु जियँ ऊना। तुम्ह ते प्रेमु राम कें दूना॥ 14.10॥

देखि परम बिरहाकुल सीता = सीता जी को विरह से बहुत व्याकुल देखकर, *बोला कपि मृदु बचन बिनीता* = हनुमान जी मधुर और विनम्र वचन बोलते हैं। *मातु कुसल प्रभु अनुज समेता* = हे माता, श्रीराम छोटे भाई लक्ष्मण सहित कुशल हैं, *तव दुख दुखी सुकृपा निकेता* = परन्तु आपके दु:ख से दु:खी हैं। *जनि जननी मानहु जियँ ऊना* = हे माँ, मन छोटा करके दु:खी मत हो, *तुम्ह ते प्रेमु राम कें दूना* = राम जी के हृदय में आपसे दुगुना प्रेम है।

माँ सीता को राम के वियोग में इस प्रकार से दु:खी देखकर, हनुमान जी के मन में भी करुणा आ गयी, विनम्रता आ गयी। वे बहुत कोमल वचनों से सीता जी द्वारा पूछे प्रश्नों का उसी क्रम से उत्तर देते हैं। कहते हैं, हे माँ, अनुज लक्ष्मण सहित प्रभु राम कुशल से हैं। वे आपके दु:ख से दु:खी रहते हैं। आप अपने मन में ऐसा भाव मत लाओ कि प्रभु को आपसे प्रेम नहीं है। ऊना मायने ऐसा मत समझो। श्रीराम के प्रति आपके हृदय में जितना प्रेम है, उससे दुगुना श्रीराम को आपसे प्रेम है।

भगवान भक्तों के दु:ख से दु:खी होते हैं

सीता जी कहतीं है कि श्रीराम सुख भवन हैं, मायने उनके पास दु:ख हैं ही नहीं, पर हनुमान जी कहते हैं कि राम जी आपके दु:ख से दु:खी हैं। यहाँ पर आशय है कि भगवान स्वयं में तो सुख भवन हैं, जिसमें अन्दर से आनंद ही आनंद है पर उन्हें दूसरों के दु:ख से दु:ख होता है। दूसरे के दु:ख से द्रवित होने वाले को कोमलचित्त, करुणानिधान भी कहते हैं। ये सब भगवान के लक्षण हैं। व्यक्ति चाहे तो अपने अन्दर भी ऐसे गुणों का विकास कर सकता है। जैसे-जैसे व्यक्ति में भगवान के प्रति प्रेम और भक्ति बढ़ती है, उसके अन्दर भी प्रेम व मधुरता आ जाती है। ऐसे व्यक्ति से मिलने वाले को भी आनंद की अनुभूति होती है।

हनुमान जी कहते हैं कि माँ, धैर्य से प्रभु राम का संदेश सुनो

रघुपति कर संदेसु अब सुनु जननी धरि धीर।
अस कहि कपि गदगद भयउ भरे बिलोचन नीर॥ दोहा 14॥

रघुपति कर संदेसु अब = अब श्रीराम का संदेश, *सुनु जननी धरि धीर* = माँ धैर्य धारण करके सुनो। *अस कहि* = ऐसा कह करके, *कपि गदगद भयउ* = हनुमान जी गदगद हो गये, *भरे बिलोचन नीर* = उनके नेत्रों में जल भर आया।

हनुमान जी कहते हैं, हे माता, धैर्य धारण करके प्रभु राम ने जो संदेश दिया है उसे सुनो। संदेश प्रेम से परिपूर्ण था, इसलिये हनुमान जी का हृदय गदगद हो गया, उनके नेत्रों में जल आ गया। हनुमान जी व माँ सीता दोनों श्रीराम के भक्त हैं, इसलिये माँ सीता को हनुमान जी प्रिय हैं, और हनुमान जी माँ सीता के दुःख से दुःखी हैं, इसलिये उनके आँखों में बार-बार आँसू आ जाते हैं। श्रीराम ने हनुमान जी को अँगूठी देते समय संदेश भी दिया था, परन्तु संदेश क्या था उसका वर्णन वहाँ पर तुलसीदास जी नहीं करते। यहाँ पर जब माँ सीता के सामने संदेश कहतें हैं तब पता चलता है।

सुख देने वाली प्रकृति वियोग में दुःख देती है

कहेउ राम बियोग तव सीता। मो कहुँ सकल भए बिपरीता॥ 15.1॥
नव तरु किसलय मनहुँ कृसानू। कालनिसा सम निसि ससि भानू॥ 15.2॥
कुबलय बिपिन कुंत बन सरिसा। बारिद तपत तेल जनु बरिसा॥ 15.3॥
जे हित रहे करत तेइ पीरा। उरग स्वास सम त्रिबिध समीरा॥ 15.4॥

कहेउ राम = राम ने कहा है, *बियोग तव सीता* = हे सीता तुम्हारे विरह में, *मो कहुँ सकल भए बिपरीता* = मेरे लिये सभी चीजें प्रतिकूल हो गयी हैं, *नव तरु किसलय* = वृक्षों के नये-नये पत्ते, *मनहुँ कृसानू* = मानो अग्नि के समान हों, *कालनिसा सम निसि* = रात्रि कालरात्रि के समान, *ससि भानू* = चन्द्रमा सूर्य के समान, *कुबलय बिपिन* = कमल के फूल के वन, *कुंत बन सरिसा* = भालों के वन के समान, *बारिद* = बादल, *तपत तेल जनु बरिसा* = मानों गरम तेल बरसा रहे हों, *जे हित रहे करत तेइ पीरा* = जो हित करने वाले थे वे ही अब पीड़ा देने

वाले हो गये हैं, *उरग स्वास सम* = सर्प की विषैली श्वास के समान, *त्रिबिध समीरा* = तीनों तरह की वायु लगती है।

हनुमान जी कहते हैं कि राम जी ने जो कहा है वही संदेश दे रहा हूँ, अपने से नहीं कह रहा हूँ। हे सीता, तुम्हारे वियोग में प्रकृति की जो वस्तुयें सुख देने वाली थीं, अब दु:ख दे रही हैं। वृक्षों के नये-नये पत्ते अब शीतलता नहीं प्रदान करते, अग्नि के समान लगते हैं। रात्रि, कालरात्रि के समान और चंद्रमा सूर्य के समान गरम लगता है। कमल के फूलों के वन भालों के वन के समान लगते हैं। कमल में सुंगध है, कोमलता है, उसकी डंडी भाले के डंडे के समान और फूल भाले की नोक के समान चुभता है। जब पानी बरसता था तब शीतलता आती थी, अब पानी बरसता है तो लगता है मानों गरम तेल बरस रहा है। जो पहले हितकारी थे वे अब कष्ट देते हैं। जब शीतल, मंद और सुगंधित वायु चलती है तो लगता है जैसे सर्प की विषैली फुफकार हो।

कहने से दुःख घटता है, पर कहें किससे?

कहेहू तें कछु दुख घटि होई। काहि कहौं यह जान न कोई॥ 15.5॥

कहेहू तें कछु दुख घटि होई = मन का दु:ख कह डालने से कुछ कम हो जाता है, *काहि कहौं* = पर कहूँ किससे, *यह जान न कोई* = यह दु:ख कोई जानता नहीं है।

कोई व्यक्ति जब दु:खी होता है, तो अपने दु:ख को सुनाता है, सुनाने से दु:ख कम होता है। आदमी दु:ख व्यक्त करके अपना मन हल्का करता है। पर श्रीराम कहते हैं कि हम अपने दु:ख का वर्णन किससे करें? दु:ख समझने वाला तो कोई हो।

मेरा मन तुम्हारे पास है, वही प्रेम तत्त्व जानता है

तत्व प्रेम कर मम अरु तोरा। जानत प्रिया एकु मनु मोरा॥ 15.6॥
सो मनु सदा रहत तोहि पाहीं। जानु प्रीति रसु एतनेहि माहीं॥ 15.7॥

तत्व प्रेम कर मम अरु तोरा = मेरे और तुम्हारे तत्त्व प्रेम को, *जानत प्रिया एकु मनु मोरा* = एक मेरा मन ही जानता है। *सो मनु सदा रहत तोहि पाहीं* = और

वह मन सदा तुम्हारे ही पास रहता है, *जानु प्रीति रसु* = मेरे प्रेम का रस जान जाओ, *एतनेहि माहीं* = बस इतने से ही।

श्रीराम कहते हैं कि मेरे और तुम्हारे बीच जो प्रेम है उस प्रेम का तत्त्व कैसा है, एक मेरा मन ही जानता है और प्रेम के कारण वह मन सदा तुम्हारे पास ही रहता है। हमारे प्रेम के रस को इतने में ही जान लो। यहाँ संदेश पूरा होता है।

संदेश सुन माँ सीता प्रेम में मग्न हो जाती हैं

प्रभु संदेसु सुनत बैदेही। मगन प्रेम तन सुधि नहिं तेही॥ 15.8॥

प्रभु संदेसु सुनत बैदेही = प्रभु का संदेश सुनते ही, *मगन प्रेम* = प्रेम में मग्न हो जाती हैं, *तन सुधि नहिं तेही* = उन्हें शरीर की सुधि नहीं रहती है।

माँ सीता ने देखा प्रभु राम का मन तो हमारे अन्दर ही है, उसमें प्रेम-ही-प्रेम भरा है। फिर वे शरीर को भूल गयीं, बाहरी जगत को भूल गयीं। मन के अन्दर ही राम के प्रेम की अनुभूति होने लगी। जब व्यक्ति हृदय में पहुँचता है, उसे प्रेम की अनुभूति होती है, उस समय शरीर की सुधि नहीं रहती। भगवान का आनन्द जब हृदय में आता है, उस अवस्था को प्रेम कहते हैं।

माँ आप तो राम का स्मरण करो व राक्षसों को मरा मानो

कह कपि हृदयँ धीर धरु माता। सुमिरु राम सेवक सुखदाता॥ 15.9॥
उर आनहु रघुपति प्रभुताई। सुनि मम बचन तजहु कदराई॥ 15.10॥

निसिचर निकर पतंग सम रघुपति बान कृसानु।
जननी हृदयँ धीर धरू जरे निसाचर जानु॥ दोहा 15॥

कह कपि = हनुमान जी कहते हैं, *हृदयँ धीर धरु माता* = हे माँ हृदय में धैर्य धारण करो, *सुमिरु राम* = राम का स्मरण करो, *सेवक सुखदाता* = वे सेवकों को सुख देने वाले हैं। *उर आनहु* = हृदय में लाओ, *रघुपति प्रभुताई* = श्रीरघुनाथ जी की प्रभुता को, *सुनि मम बचन* = मेरे वचनों को सुनकर, *तजहु कदराई* = इस दु:ख को छोड़ो।

निसिचर निकर पतंग सम = निशाचरों के समूह पतंगों के समान हैं, *रघुपति बान कृसानु* = श्रीराम जी के बाण अग्नि के समान हैं। *जननी* = हे माँ, *हृदयँ धीर धरु* = हृदय में धैर्य रखो, *जरे निसाचर जानु* = यह मानकर कि सब राक्षस जल गये हैं।

श्रीराम का संदेश सुनाने के बाद हनुमान जी कहते हैं कि हे माता, हृदय में धैर्य धारण करो, भगवान राम सेवकों को सुख देने वाले हैं, उनको भूलने वाले नहीं हैं। श्रीराम की प्रभुता को हृदय में धारण करो। प्रभु राम के बाण अग्नि के समान हैं। जैसे अग्नि में पतंगे आकर जल जाते हैं ऐसे ही सारे निशाचर प्रभु के बाणों से मारे जायेंगे। आप समझ लो सारे निशाचर मारे गये हैं।

माँ सीता को धैर्य बंधाते हैं कि शीघ्र ही राम लेने आयेंगे

जौं रघुबीर होति सुधि पाई। करते नहिं बिलंबु रघुराई॥ 16.1॥
राम बान रबि उएँ जानकी। तम बरूथ कहँ जातुधान की॥ 16.2॥
अबहिं मातु मैं जाउँ लवाई। प्रभु आयसु नहिं राम दोहाई॥ 16.3॥
कछुक दिवस जननी धरु धीरा। कपिन्ह सहित अइहहिं रघुबीरा॥ 16.4॥
निसिचर मारि तोहि लै जैहहिं। तिहुँ पुर नारदादि जसु गैहहिं॥ 16.5॥

जौं रघुबीर = यदि श्रीराम को, *होति सुधि पाई* = पता चल गया होता तो, *करते नहिं बिलंबु रघुराई* = राम देर नहीं लगाते। *राम बान* = राम जी के बाण, *रबि उएँ* = सूर्य के उदय के समान हैं, *जानकी* = हे माँ जानकी, *तम* = अंधकार के समान, *बरूथ कहँ जातुधान की* = राक्षसों के समूह कहाँ टिकने वाले हैं। *अबहिं मातु मैं जाउँ लवाई* = हे माँ, मैं तो अभी आपको यहाँ से ले जा सकता हूँ, *प्रभु आयसु नहिं* = परन्तु प्रभु की आज्ञा नहीं है, *राम दोहाई* = यह मैं श्रीराम की शपथ खाकर कहता हूँ, *कछुक दिवस जननी धरु धीरा* = कुछ दिन और माँ धैर्य धारण करो, *कपिन्ह सहित* = वानरों के साथ, *अइहहिं रघुबीरा* = श्रीराम आयेंगे। *निसिचर मारि* = निशाचरों को मारकर, *तोहि लै जैहहिं* = आपको ले जायेंगे, *तिहुँ पुर* = तीनों लोकों में, *नारदादि* = नारद आदि ऋषि, *जसु गैहहिं* = उनका यश गायेंगे।

प्रभु राम का संदेश जैसा था बिल्कुल वैसा सुनाने के बाद अब हनुमान जी अपनी बातें कहकर सीता माँ को धैर्य बँधाते हैं। कहते हैं कि यदि प्रभु राम को पता होता कि आप यहाँ हैं, तो वे देर नहीं करते, आपको यहाँ से कब के ले गये होते। प्रभु राम के बाण सूर्य के समान हैं और ये राक्षसों के समूह अंधकार के समान। जैसे सूर्य उदय होने पर अंधकार मिट जाता है वैसे ही श्रीराम के बाण चलने पर निशाचर नष्ट हो जायेंगे। हनुमान जी कहते हैं हम तो अभी आपको ले जा सकते हैं, यह रावण हमारा कुछ बिगाड़ नहीं सकता, परन्तु प्रभु राम का आदेश नहीं है। आप थोड़े दिन और धैर्य रखो, श्रीराम वानरों की सेना लेकर आयेंगे, निशाचरों को मारकर आपको ले जायेंगे। इसके बाद नारद आदि ऋषि तीनों लोकों में श्रीराम का यश गायेंगे।

विशाल शरीर प्रकट कर सीता जी को भरोसा दिलाते हैं

हैं सुत कपि सब तुम्हहि समाना। जातुधान अति भट बलवाना॥ 16.6॥
मोरें हृदय परम संदेहा। सुनि कपि प्रगट कीन्हि निज देहा॥ 16.7॥
कनक भूधराकार सरीरा। समर भयंकर अतिबल बीरा॥ 16.8॥
सीता मन भरोस तब भयऊ। पुनि लघु रूप पवनसुत लयऊ॥ 16.9॥

सुत = हे पुत्र हनुमान, *हैं कपि सब तुम्हहि समाना* = क्या सब वानर तुम्हारे समान ही छोट-छोटे हैं? *जातुधान* = राक्षस तो, *अति भट बलवाना* = बड़े-बड़े योद्धा हैं। *मोरें हृदय परम संदेहा* = मेरे हृदय में बड़ा संदेह हो रहा है, *सुनि कपि* = यह सुनकर हनुमान जी ने, *प्रगट कीन्हि निज देहा* = अपना शरीर प्रकट कर दिया। कनक भूधराकार सरीरा = सोने के पर्वत के समान उनका शरीर था, *समर भयंकर* = युद्ध में शत्रुओं के मन में भय उत्पन्न करने वाला, *अतिबल बीरा* = अत्यंत बलवान और वीर शरीर। *सीता मन भरोस तब भयऊ* = उन्हें देखकर जब सीताजी के मन में विश्वास आ गया, *पुनि लघु रूप* = फिर छोटा रूप, *पवनसुत लयऊ* = हनुमान जी ने धारण कर लिया।

हनुमान जी बार-बार सीता जी को माँ कहते हैं तो सीता जी भी उन्हें यहाँ पर अपना पुत्र मान लेती हैं। वे अपने पुत्र हनुमान से एक शंका व्यक्त करते हुए कहती हैं, हे सुत, तुम जरा यह तो बताओ कि जितने वानर हैं, क्या वे सभी

तुम्हारे जैसे छोटे-छोटे से हैं? ये निशाचर तो बड़े शक्तिशाली हैं। मेरे हृदय में बड़ा संदेह है कि विजय कैसे मिलेगी। सीता जी के संदेह को सुनकर हनुमान जी ने *निज देहा* मायने अपना असली शरीर प्रकट कर दिया। पहले निज देह नहीं थी, यह तो बनावटी शरीर था, छोटे-से शरीर में विनम्रता के साथ झुके हुए थे। अब उनका शरीर सोने के समान चमकता हुआ पर्वत के आकार का हो गया। लगा जैसे सोने का पर्वत हो। हनुमान जी अपनी गदा लेकर, अकड़कर खड़े हो गये जैसे युद्ध में कोई आवे तो उसका विनाश कर दें। वे अत्यंत बलवान और वीर दिखाई देने लगे। शरीर की विशालता, भयंकरता, वीरता और बल, सब दिखने लगा। यह रूप देखकर सीता जी के मन में भरोसा हो गया और हनुमान जी ने अपना छोटा रूप पुनः धारण कर लिया।

हनुमान कहते हैं यह सब श्रीराम का बल है

सुनु माता साखामृग नहिं बल बुद्धि बिसाल।
प्रभु प्रताप तें गरुड़हि खाइ परम लघु ब्याल॥ दोहा 16॥

सुनु माता = हे माँ सुनो, *साखामृग* = पेड़ों की शाखा में रहने वाले पशु, *नहिं बल बुद्धि बिसाल* = इनमें ज्यादा बुद्धि व बल नहीं होता है। *प्रभु प्रताप तें* = यह तो राम जी का प्रताप है कि, *गरुड़हि* = गरुड़ को ही, *खाइ* = खा जाता है, *परम लघु ब्याल* = बहुत छोटा-सा सर्प।

हनुमान जी कहने लगे, हे माता सुनो, यह कोई हमारी शक्ति नहीं है। हम तो पेड़ों की डालों में रहने वाले वानर हैं, हममें न कोई बुद्धि है न बल, यह तो प्रभु राम की ही शक्ति है। प्रभु का प्रताप ऐसा है कि छोटा सर्प गरुड़ को खा जाये। गरुड़ सर्प से डरता नहीं है, वह बड़े-बड़े सर्प खा जाता है। यदि भगवान छोटे-से सर्प को शक्ति दे दें तो वह बड़े गरुड़ को भी खा सकता है।

भगवान पर भरोसा रखें, वे पूर्ण करेंगे, हम निमित्त मात्र हैं

हनुमान जी की बातें हम सब के लिये भी हैं। हमें भी भगवान पर भरोसा रखने का अभ्यास शुरू करना चाहिये। भगवान की शरण में जाकर देखना चाहिये कि बुद्धि में कैसे परिवर्तन आ जाता है, क्या-क्या बुद्धि में सूझने लगता है,

कैसी-कैसी योजनायें बनने लगती हैं? कैसे व्यक्ति दिव्य जीवन की ओर अग्रसर होने लगता है?

पुत्र हनुमान की बातों से सीता माँ संतुष्ट

मन संतोष सुनत कपि बानी। भगति प्रताप तेज बल सानी॥ 17.1 ॥

मन संतोष सुनत कपि बानी = हनुमान जी की बातें सुनकर सीता जी के मन में संतोष हुआ, *भगति प्रताप तेज बल सानी* = उनकी बातें भक्ति, प्रताप, तेज और बल से भरपूर थीं।

हनुमान जी की बातें सुनकर सीता जी को संतोष हुआ। सीता जी ने हनुमान जी की शक्ति देखी। यह सुनकर कि इस शक्ति को यह श्रीराम की ही शक्ति मानता है, उनके मन को संतोष हुआ। हनुमान जी के वचनों में भक्ति, प्रताप, तेज, बल, उत्साह और विश्वास था।

पुत्र हनुमान को माँ सीता आशीर्वाद देती हैं

आसिष दीन्हि रामप्रिय जाना। होहु तात बल सील निधाना॥ 17.2 ॥
अजर अमर गुननिधि सुत होहू। करहुँ बहुत रघुनायक छोहू॥ 17.3 ॥

आसिष दीन्हि = सीता जी आशीर्वाद देती हैं, *रामप्रिय जाना* = राम का प्रिय समझकर, *होहु तात* = हे तात तुम, *बल सील निधाना* = तुम बल व शील से भरपूर हो। *अजर* = कभी बुढापा न आये, *अमर* = कभी मृत्यु न आये, *गुननिधि* = सब तरह के गुण से, *होहू* = भरपूर हो, *सुत* = हे मेरे पुत्र। *करहुँ बहुत रघुनायक छोहू* = तुम्हारे ऊपर प्रभु राम की कृपा हो।

सीता जी यह समझ गयीं कि हनुमान राम का भक्त है। राम भी इन्हें चाहते हैं, तभी तो इसे ही अँगूठी व संदेश देकर भेजा है। राम का प्रिय है, यह समझकर आशीर्वाद देती हैं कि तुम बल व शील के निधान हो। तुम्हारे अंदर सब तरह का बल आये पर शीलवान् भी रहो, यानि घमंड न आये। तुम अजर हो जाओ, मायने बुढ़ापा कभी न आये। तुम अमर हो जाओ, मायने मृत्यु कभी न हो। सबसे अंत में कहा कि श्रीराम तुम्हारे ऊपर प्रेम

भाव रखें, तुम पर बहुत कृपा करें। सीता जी के आशीर्वाद से हनुमान जी में ये सब बाते हैं ही।

'राम कृपा' का आशीर्वाद पाकर पुत्र हनुमान कृतकृत्य

करहुँ कृपा प्रभु अस सुनि काना। निर्भर प्रेम मगन हनुमाना॥ 17.4॥
बार बार नाएसि पद सीसा। बोला बचन जोरि कर कीसा॥ 17.5॥
अब कृतकृत्य भयउँ मैं माता। आसिष तव अमोघ बिख्याता॥ 17.6॥

करहुँ कृपा प्रभु अस सुनि काना = प्रभु राम कृपा करें ऐसा सुनकर, *निर्भर प्रेम मगन हनुमाना* = हनुमान राम के प्रेम में मग्न हो गये। *बार बार नाएसि पद सीसा* = बार-बार सीता माँ के चरणों में सिर झुकाकर प्रणाम करने लगे, *बोला बचन जोरि कर कीसा* = हाथ जोड़कर हनुमान जी बोले। *अब कृतकृत्य भयउँ मैं माता* = हे माँ, अब मैं कृतकृत्य हो गया हूँ, *आसिष तव अमोघ* = आपका आशीर्वाद झूठा नहीं होता, *बिख्याता* = यह बात प्रसिद्ध है।

माँ सीता ने जब कहा कि तुम बल निधान हो, शीलनिधान हो तो पुत्र हनुमान को लगा होगा यह कौन-सी बड़ी बात है। वे मुँह बाँधे सीता माँ की तरफ देखते रहे होंगे। जब कहा कि अजर, अमर हो तो भी वे सोचे होंगे यह कौन-सी बड़ी बात है। सीता माँ ने जब कहा कि प्रभु राम की कृपा तुम्हारे ऊपर हो तब उन्हें संतोष हुआ। तुलसीदास जी कहते हैं कि जब हनुमान जी के कान में यह सुनाई पड़ा कि प्रभु राम तुम्हारे ऊपर कृपा करें, उनका अनुग्रह प्राप्त हो, वे तुमको अपना लें, तब वे राम के प्रेम में मग्न हो गये। बार-बार माँ के चरणों में प्रणाम करने लगे। गद्‌गद्‌ हो गये। हाथ जोड़कर कहने लगे, हे माँ, अब मैं कृतकृत्य हो गया। आपका आशीर्वाद तो कभी झूठा होता नहीं, यह बात सारा संसार जानता है।

कृतकृत्य मायने जीवन में जो पाना था पा लिया

कृत = कर्म, *कृत्य* = कर लिया। व्यक्ति को जब जीवन में लगे कि जो कार्य करना था कर लिया, तो उसको एक शब्द में कहते हैं *'कृतकृत्य'*। जो करना था, सब हो गया, अब क्या करना है। पुत्र हनुमान ने कहा, अरे! प्रभु राम की कृपा प्राप्त हो गयी, उन्होंने अपना लिया, अब इसके बाद क्या करना

है। हमारा भी लक्ष्य होना चाहिये कि भगवान हमें अपना लें, हमारे ऊपर कृपा करें। व्यक्तियों की कृपा, कृपा नहीं है। दुनिया की कृपा, कृपा नहीं है। भगवान की कृपा ही कृपा है, बस।

पुत्र हनुमान कहता है, माँ भूख लगी है, फल खा लूँ?

सुनहु मातु मोहि अतिसय भूखा। लागि देखि सुंदर फल रूखा॥ 17.7॥
सुनु सुत करहिं बिपिन रखवारी। परम सुभट रजनीचर भारी॥ 17.8॥
तिन्ह कर भय माता मोहि नाहीं। जौं तुम्ह सुख मानहु मन माहीं॥ 17.9॥

सुनहु मातु = हे माता सुनो, *मोहि अतिसय भूखा* = अब मुझे बहुत भूख लगी है, *लागि देखि सुंदर फल रूखा* = सुंदर फल वाले वृक्षों को देखकर। *सुनु सुत* = हे पुत्र सुनो, *करहिं बिपिन रखवारी* = वन की रखवाली करने वाले रक्षक, *परम सुभट रजनीचर भारी* = बड़े विकट और बलशाली राक्षस हैं। *तिन्ह कर भय माता मोहि नाहीं* = हे माता उनका डर मेरे मन में नहीं है, *जौं तुम्ह सुख मानहु मन माहीं* = यदि तुम मन में सुख मानो यानि तुम्हारी आज्ञा हो तो।

यह प्रसंग माँ-पुत्र के बीच प्रेम व बातचीत का है। देखिये, इतने शक्तिशाली व महावीर हनुमान कैसे माँ के सामने बच्चे ही बने रहते हैं। जैसे पुत्र अपनी माँ से कहता है, भूख लगी है माँ, खाना दो, ठीक वैसे ही पुत्र हनुमान कहते हैं, हे माँ सुनो, हमें बहुत भूख लगी है। भूख इसलिये और लग आयी कि यहाँ तो बहुत सुंदर फलों से लदे हुए वृक्ष हैं। जब तक काम नहीं हुआ था, उन्हें भूख नहीं लगी। काम पूरा होने पर भूख लग आयी। माँ कहती हैं, इस वन की रखवाली करने वाले ये निशाचर बड़े शक्तिशाली और बलवान् हैं। ये तुम्हें फल खाने नहीं देंगे। पुत्र हनुमान कहते हैं, हमें निशाचरों से डर नहीं लगता। आपको अच्छा लगे, आपकी स्वीकृति होनी चाहिये, आप प्रसन्नता से आज्ञा दें, तो हम फल खा लेंगे। ये निशाचर हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकते।

माँ सीता कहती हैं, हे पुत्र, राम का स्मरण कर फल खाओ

देखि बुद्धि बल निपुन कपि कहेउ जानकीं जाहु।
रघुपति चरन हृदयँ धरि तात मधुर फल खाहु॥ दोहा 17॥

देखि बुद्धि बल निपुन कपि = यह देखकर कि वानर बुद्धि व बल से भरपूर है, *कहेउ जानकीं जाहु* = सीता माँ ने कहा जाओ। *रघुपति चरन हृदयँ धरि* = हृदय में श्रीराम के चरणों को धारण करके, *तात मधुर फल खाहु* = हे तात मीठे फल खाओ।

पुत्र हनुमान को बुद्धि व बल से भरपूर देखकर माँ सीता कहती हैं कि तुम श्रीराम का स्मरण करके जाओ और मीठे फल खाओ। यह प्रसंग प्रत्येक माँ के लिये शिक्षा भी देता है कि कैसे अपने बच्चों को भगवान का स्मरण करके ही भोजन करने की आदत बचपन से डालें। एक बार भोजन को प्रणाम करके, राम स्मरण करके खाने की आदत बन जायेगी तो बच्चे हमेशा शांति से व उचित भोजन ही खायेंगे।

पूछकर काम करें

हमें पूछकर काम करने की कोशिश करनी चाहिये। राम जी ऋषि-मुनियों से पूछकर कार्य करते हैं। हनुमान जी अपनी टीम के वरिष्ठ सदस्य जामवंत से पूछकर काम करते हैं। यहाँ पर सीता माँ से पूछकर फल खाने जाते हैं। श्रीराम की यही रीति है, भक्त की भी यही रीति है, यही सही रास्ता है। अहंकारी व्यक्ति किसी से पूछता नहीं। रावण का चरित्र विपरीत है। पूछने की बात तो छोड़ ही दें, यदि रावण को कोई अपने से ही सही बात बताये तो वह नहीं सुनता है।

6. हनुमान जी रावण से मिलकर ज्ञान की बातें समझाते हैं

(दोहा 18 से दोहा 24)

सीता माँ का पता लगाने के बाद हनुमान जी रावण के पास जाने की तैयारी करते हैं। भूख की बात कहते हैं, पर प्रयोजन रावण के पास जाने का है। हनुमान जी दूत हैं, दूत का कार्य है कि पूरी बात का पता लगायें। उन्हें रावण से मिलना है, इसलिये अशोकवाटिका में पेडों को तोड़कर रक्षकों को मारकर उन्हें रावण के पास जाने को मजबूर कर देते हैं। रावण पहले सेना भेजता है, फिर अक्षय कुमार को भेजता है, अंत में मेघनाद को भेजकर उन्हें बाँधकर लाने के लिये कहता है। बस इसी का हनुमान जी को इंतजार था। वे मेघनाद के बंधन में बंधकर रावण के दरबार में पहुँच जाते हैं। रावण

उनसे तरह-तरह के प्रश्न पूछता है। हनुमान जी बड़ी चतुराई से निर्भय होकर जवाब देते हैं। फिर उसे समझाते हैं कि श्रीराम की शरण में जाओ। रावण अहंकार के कारण शिक्षा को उल्टा समझकर हनुमान जी को मारने का आदेश दे देता है। रावण के दरबार की पूरी जानकारी हनुमान जी ले लेते हैं। तुलसीदास जी कहते हैं कि हनुमान जी ज्ञान के सागर हैं। रावण से बातचीत के दौरान उनके इस गुण के बारे में पता चलता है। वे सृष्टि की रचना के गूढ़ रहस्य बताते हुए भक्ति की बात कहते हैं। यह सब हम सबके लिये बहुत बड़ी शिक्षा है।

हनुमान जी फल खाकर पेड़ तोड़कर रक्षकों को उकसाते हैं

चलेउ नाइ सिरु पैठेउ बागा। फल खाएसि तरु तोरैं लागा॥ 18.1॥
रहे तहाँ बहु भट रखवारे। कछु मारेसि कछु जाइ पुकारे॥ 18.2॥

चलेउ नाइ सिरु = सिर नवाकर चले, *पैठेउ बागा* = बगीचे में घुसते हैं, *फल खाएसि* = फल खाते हैं, *तरु तोरैं लागा* = पेड़ों को तोड़ते हैं। *रहे तहाँ बहु भट रखवारे* = वहाँ बहुत से मजबूत रखवाले थे, *कछु मारेसि* = कुछ मर गये, *कछु जाइ पुकारे* = कुछ भागकर रावण को संदेश देते हैं।

माँ सीता को प्रणाम करके हनुमान जी फल खाने के लिये चल पड़ते हैं । सीता जी अशोकवाटिका में थीं, वहाँ पर फल नहीं थे। जिस बाग में फल थे उसमें गये। फल तो खाए पर उनका काम बस फल खाने से नहीं होने वाला था। उन्हें तो रावण से मिलने के लिये संदेश भेजना था। उन्होंने देखा कि रक्षक लोग हमें कुछ बोल नहीं रहे हैं, तब पेड़ तोड़ने शुरू कर दिये। पेड़ टूटने की आवाज होने लगी। तब बगीचे के बहुत-से रक्षक दौड़े आये। जब वे हनुमान जी से लड़ने लगे तो कुछ तो मारे गये, कुछ वहाँ से भागकर रावण को सूचना देते हैं।

संदेश सुन रावण सेना भेजता है, हनुमान जी सबको मार देते हैं

नाथ एक आवा कपि भारी। तेहिं असोक बाटिका उजारी॥ 18.3॥
खाएसि फल अरु बिटप उपारे। रच्छक मर्दि मर्दि महि डारे॥ 18.4॥
सुनि रावन पठए भट नाना। तिन्हहि देखि गर्जेउ हनुमाना॥ 18.5॥
सब रजनीचर कपि संघारे। गए पुकारत कछु अधमारे॥ 18.6॥

नाथ एक आवा कपि भारी = हे नाथ एक बड़ा भारी बंदर आया है, *तेहिं असोक बाटिका उजारी* = उसने अशोक वाटिका को उजाड़ दिया है। *खाएसि फल* = उसने फल खाये हैं, *अरु बिटप उपारे* = और वृक्षों को उखाड़ दिया है, *रच्छक मर्दि मर्दि महि डारे* = रक्षकों को मसल-मसल कर जमीन पर फेंक दिया है। *सुनि रावन पठए भट नाना* = यह सुनकर रावण ने बहुत-से योद्धा भेजे, *तिन्हहि देखि गर्जेउ हनुमाना* = उन्हें देखकर हनुमान जी ने गर्जना की। *सब रजनीचर कपि संघारे* = सब राक्षसों को हनुमान जी ने मार दिया, *गए पुकारत कछु अधमारे* = कुछ अधमरे थे, वे चिल्लाते हुए गये।

रावण के दरबार में जाकर रक्षक कहते हैं, हे नाथ! एक बहुत भारी बंदर आया है, जिसने अशोकवाटिका को तहस-नहस कर दिया है। फल तो खाए, पेड़ भी उखाड़कर फेंक दिये। रावण ने उनसे पूछा होगा कि तुम लोगों ने उसे मारा क्यों नहीं, जिसके जवाब में राक्षसों ने कहा, हम लोग उससे बहुत लड़े, पर उसने हमें हाथों से मसल-मसल कर जमीन पर फेंक दिया। हम लोग तो कुछ हैं ही नहीं उसके सामने। रावण ने कहा कि अस्त्र-शस्त्र लेकर बलवान् सैनिकों को भेजा जाए। हनुमान जी ने जब देखा कि सेना आ गयी तो उन्हें देखकर जोर से गर्जना की और सबको मार दिया। कुछ अधमरे थे, वे आकर रावण को संदेश देते हैं, हम लोगों का बस नहीं चला, बंदर ने सारी सेना मार दी।

रावण अक्षयकुमार को भेजता है, वह भी मारा जाता है

पुनि पठयउ तेहिं अच्छकुमारा। चला संग लै सुभट अपारा॥ 18.7॥
आवत देखि बिटप गहि तर्जा। ताहि निपाति महाधुनि गर्जा॥ 18.8॥

कछु मारेसि कछु मर्देसि कछु मिलएसि धरि धूरि।
कछु पुनि जाइ पुकारे प्रभु मर्कट बल भूरि॥ दोहा 18॥

पुनि पठयउ तेहिं अच्छकुमारा = फिर वह अक्षय कुमार को भेजता है, *चला संग लै सुभट अपारा* = वह बहुत सारे अच्छे योद्धाओं को साथ लेकर चलता है। *आवत देखि* = आता देखकर, *बिटप गहि तर्जा* = एक पेड़ को उखाड़कर उसके उपर फेंक दिया, *ताहि निपाति* = उसे मारकर, *महाधुनि गर्जा* = बड़े जोर से गर्जना की।

कछु मारेसि = कुछ को मार दिया, *कछु मर्देसि* = कुछ को मसल दिया, *कछु मिलएसि धरि धूरि* = कुछ को पकड़कर धूल में मिला दिया। *कछु पुनि जाइ पुकारे* = कुछ ने फिर जाकर पुकार की, *प्रभु मर्कट बल भूरि* = हे प्रभु बंदर बहुत ही बलवान् है।

अब रावण पुन: प्रयास करता है। इस बार अपने पुत्र अक्षय कुमार से कहता है, बड़ी सेना लेकर जाओ। वह बहुत बड़ी सेना लेकर चलता है। हनुमान जी ने उसे आते देखा तो एक पेड़ उखाड़ा, बड़ी जोर से गर्जना की और निशाना लगाकर उसकी ओर फेंका। जैसे ही वह बड़ा भारी पेड़ अक्षयकुमार के ऊपर गिरा वह उसके नीचे दबकर मर गया। उसके मरने पर हनुमान जी ने फिर गर्जना की। उसके साथ की सेना में से कुछ को मारा, कुछ को मसल-मसल कर फेंक दिया, कुछ को धूल में ही मिला दिया। बचे हुए लोगों ने फिर रावण के पास जाकर कहा कि इस वानर में बहुत शक्ति है। अक्षयकुमार मारा गया और उसके सब सैनिक भी मारे गए।

हनुमान जी को बाँधकर जे जाने के लिये मेघनाद आता है

सुनि सुत बध लंकेस रिसाना। पठएसि मेघनाद बलवाना॥ 19.1॥
मारसि जनि सुत बाँधेसु ताही। देखिअ कपिहि कहाँ कर आही॥ 19.2॥
चला इंद्रजित अतुलित जोधा। बंधु निधन सुनि उपजा क्रोधा॥ 19.3॥

सुनि सुत बध = पुत्र का मरण सुनकर, *लंकेस रिसाना* = रावण क्रोधित हो गया, *पठएसि मेघनाद बलवाना* = शक्तिशाली मेघनाद को भेजता है। *मारसि जनि सुत* = हे पुत्र उसे मारना मत, *बाँधेसु ताही* = उसको बाँधकर ले आना, *देखिअ कपिहि कहाँ कर आही* = मैं भी देखूँ कि कहाँ का बंदर है। *चला इंद्रजित अतुलित जोधा* = इन्द्र को जीतने वाला अतुलनीय योद्धा चल दिया, *बंधु निधन सुनि उपजा क्रोधा* = भाई के मारे जाने की बात सुनकर क्रोधित हो गया।

जब रावण को पता चला कि बंदर ने हमारे पुत्र अक्षयकुमार को मार डाला है, तो वह क्रोधित होकर मेघनाद को भेजता है। रावण कहता है कि हे सुत, तुम उसे मारना नहीं, बाँधकर ले आना ताकि हम भी देखें यह कहाँ का बंदर है।

मेघनाद इतना शक्तिशाली था कि उसने इंद्र को भी जीत लिया था। इसलिये उसे इंद्रजीत भी कहते थे। वह अपनी सेना लेकर हनुमान जी से लड़ने चलता है। उसने यह भी सुना कि अक्षयकुमार मारा गया है जिससे उसका क्रोध और भी बढ़ गया।

हनुमान जी रथ तोड़कर सेना मारकर मेघनाद से भिड़ गये

कपि देखा दारुन भट आवा। कटकटाइ गर्जा अरु धावा॥ 19.4॥
अति बिसाल तरु एक उपारा। बिरथ कीन्ह लंकेस कुमारा॥ 19.5॥
रहे महाभट ताके संगा। गहि गहि कपि मर्दइ निज अंगा॥ 19.6॥
तिन्हहि निपाति ताहि सन बाजा। भिरे जुगल मानहुँ गजराजा॥ 19.7॥

कपि देखा दारुन भट आवा = हनुमान जी ने देखा कि एक भयानक योद्धा आ गया है, *कटकटाइ गर्जा* = कटकटाकर गर्जना की, *अरु धावा* = और दौड़ पड़े, *अति बिसाल तरु एक उपारा* = उन्होंने एक बहुत बड़ा वृक्ष उखाड़ लिया, *बिरथ कीन्ह लंकेस कुमारा* = रावण के पुत्र को रथहीन कर दिया, *रहे महाभट ताके संगा* = उसके साथ जो बड़े-बड़े योद्धा थे, *गहि गहि कपि मर्दइ निज अंगा* = उन्हें पकड़-पकड़ कर हनुमान जी अपने शरीर से मसलने लगे। *तिन्हहि निपाति* = उन सबको मारकर, *ताहि सन बाजा* = फिर मेघनाद से लड़ने लगे, *भिरे जुगल* = दोनो आपस में भिड़े, *मानहुँ गजराजा* = ऐसा लगा कि दो हाथी आपस में लड़ रहे हैं।

हनुमान जी ने जब मेघनाद को देखा तो उन्हें लगा यह कोई बहुत बड़ा वीर आ गया है। वे वानरों की बोली के अनुसार कटकटाये, गर्जना की और दौड़ पड़े। एक बहुत भारी वृक्ष उखाड़कर मेघनाद के रथ की तरफ फेंक दिया। वह अजेय था, वृक्ष को आते देख कूदकर बच गया, लेकिन उसका रथ टूट गया। जब तक रथहीन हुआ मेघनाद संभले तब तक हनुमान जी उसके साथ आये सैनिकों को अपने शरीर से रगड़-रगड़ कर मार देते हैं। सेना को मारकर हनुमान जी मेघनाद के साथ पुनः युद्ध करने लगे। वे दोनों इतने शक्तिशाली योद्धा थे कि उन्हें देखकर ऐसा लग रहा था मानो दो हाथी आपस में लड़ रहे हों।

मेघनाद माया से भी वायुपुत्र हनुमान को जीत नहीं पाता

मुठिका मारि चढ़ा तरु जाई। ताहि एक छन मुरुछा आई॥ 19.8॥
उठि बहोरि कीन्हिसि बहु माया। जीति न जाइ प्रभंजन जाया॥ 19.9॥

मुठिका मारि = घूँसा मारकर, *चढ़ा तरु जाई* = पेड़ पर चढ़ गये। *ताहि एक छन मुरुछा आई* = उसको क्षण भर के लिये बेहोशी आ गयी। *उठि बहोरि कीन्हिसि बहु माया* = फिर उठकर उसने बहुत माया रची, *जीति न जाइ* = वह जीत नहीं पाया, *प्रभंजन जाया* = पवन के पुत्र हनुमान को।

लड़ते-लड़ते हनुमान जी मेघनाद को एक बहुत जोर का घूँसा मारकर पेड़ पर चढ़ गये। मेघनाद को क्षणभर के लिये मूर्छा आ गई, वह बिलबिला कर गिर पड़ा। फिर उठकर बहुत-सी माया करने लगा। उसने देखा कि हम सीधे-सीधे इनके ऊपर विजय प्राप्त नहीं कर सकते, इसलिये अब माया यानि छल और प्रपंच की लड़ाई लड़ने लगा। कभी सामने आये, कभी छिप जाये, कभी छोटा हो कभी बड़ा हो, कभी आकाश में चढ़ जाये। पर पवनपुत्र श्रीहनुमान पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा, उन्हें वह न तो बाँध पाया न मार पाया।

हारकर मेघनाद ब्रह्मास्त्र का संधान करता है

ब्रह्म अस्त्र तेहि साँधा कपि मन कीन्ह बिचार।
जौं न ब्रह्मसर मानउँ महिमा मिटइ अपार॥ दोहा 19॥

ब्रह्म अस्त्र तेहि साँधा = मेघनाद ने ब्रह्मास्त्र का संधान किया, *कपि मन कीन्ह बिचार* = हनुमान जी ने मन में विचार किया। *जौं न ब्रह्मसर मानउँ* = यदि मैं ब्रह्मास्त्र को नहीं मानता हूँ, *महिमा मिटइ अपार* = तो उसकी अपार महिमा मिट जायेगी।

जब मेघनाद सारी युक्तियाँ करके हार गया तब उसने अंत में ब्रह्मास्त्र का संधान किया। इसे न काटा जा सकता था, न रोका जा सकता था। हनुमान जी ने सोचा कि यदि हम ब्रह्मास्त्र को न मानें, यानि यह चले और हमारे ऊपर इसका प्रभाव न हो, तो ब्रह्मास्त्र की अजेय होने की महिमा समाप्त हो जायेगी। ब्रह्मा जी की महिमा कम होगी।

ब्रह्मास्त्र से घायल हो हनुमान जी नागपाश में बँध जाते हैं

ब्रह्मबान कपि कहुँ तेहिं मारा। परतिहुँ बार कटकु संघारा॥ 20.1 ॥
तेहिं देखा कपि मुरुछित भयऊ। नागपास बाँधेसि लै गयऊ॥ 20.2 ॥

ब्रह्मबान = ब्रह्मास्त्र, *कपि कहुँ* = हनुमान जी पर, *तेहिं मारा* = उसने चला दिया, *परतिहुँ बार* = गिरते समय भी, *कटकु संघारा* = सेना मार दी, *तेहिं देखा कपि मुरुछित भयऊ* = उसने देखा हनुमान जी मूर्छित हो गये, *नागपास बाँधेसि* = नागपाश में बाँधकर, *लै गयऊ* = लेकर चल दिया।

मेघनाद ने जब ब्रह्मबाण चला दिया तो हनुमान जी उसे स्वीकार कर लेते हैं। वे बेहोश होकर धड़ाम से वृक्ष से नीचे गिर पड़ते हैं। उन्हें मारने के लिये वृक्ष के आसपास जो तमाम राक्षस खड़े थे, हनुमान जी उन्हीं के ऊपर गिरे जिससे वे दबकर मर गये। मेघनाद ने जब देखा कि हनुमान जी बेहोश हैं, तो वे उन्हें नागपाश में बाँधकर रावण के पास ले चलता है।

राम नाम जब बंधन काटता है, तब राम दूत कैसे बंध सकता है?

जासु नाम जपि सुनहु भवानी। भव बंधन काटहिं नर ग्यानी॥ 20.3 ॥
तासु दूत कि बंध तरु आवा। प्रभु कारज लगि कपिहिं बँधावा॥ 20.4 ॥

जासु नाम जपि = जिसका नाम जपकर, *सुनहु भवानी* = हे पार्वती सुनो, *भव बंधन* = इस संसार के बन्धन को, *काटहिं नर ग्यानी* = ज्ञानी मनुष्य काट डालते हैं, *तासु दूत कि* = उनका दूत, *बंध तरु आवा* = क्या कभी बन्धन में आ सकता है, *प्रभु कारज लगि* = भगवान के कार्य के लिये, *कपिहिं बँधावा* = हनुमान जी ने अपने को बँधवा लिया।

यह कथा शंकर जी पार्वती जी को सुना रहे हैं, इसका स्मरण रखना चाहिये। शंकरजी कहते हैं – हे भवानी सुनो, श्रीराम का नाम लेकर ज्ञानी मनुष्य संसार के बंधन को काट डालते हैं। सबसे बड़ा बंधन अज्ञान है, वह भी राम राम कहने से छूट जाता है। राम नाम लेकर मनुष्य आत्मा का ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं। ऐसे राम का दूत, हनुमान बंधन में नहीं पड़ सकता है। उसने तो प्रभु राम के काम को पूरा करने के लिये अपने आप को बंधवा लिया। हनुमान को

रावण के दरबार तो जाना ही है। दूत का कार्य है कि पूरा समाचार लेकर जाये। इसलिये उसने अपने आप को बंधवा लिया।

रावण के प्रभुता संपन्न दरबार में हनुमान जी निर्भय खड़े हैं

कपि बंधन सुनि निसिचर धाए। कौतुक लागि सभाँ सब आए॥ 20.5॥
दसमुख सभा दीखि कपि जाई। कहि न जाइ कछु अति प्रभुताई॥ 20.6॥
कर जोरें सुर दिसिप बिनीता। भृकुटि बिलोकत सकल सभीता॥ 20.7॥
देखि प्रताप न कपि मन संका। जिमि अहिगन महुँ गरुड़ असंका॥ 20.8॥

कपि बंधन सुनि = बंदर का बांधा जाना सुनकर, *निसिचर धाए* = राक्षस दौड़े, *कौतुक लागि* = तमाशा देखने के लिये, *सभाँ सब आए* = सब दरबार में आ गये। *दसमुख सभा* = रावण का दरबार, *दीखि कपि जाई* = हनुमान जी ने जाकर देखा, *कहि न जाइ कछु अति प्रभुताई* = उस सभा के ऐश्वर्य का वर्णन नहीं किया जा सकता। *कर जोरें* = हाथ जोड़कर, *सुर* = देवता, *दिसिप* = दिग्पाल, *बिनीता* = विनम्रतापूर्वक, *भृकुटि बिलोकत* = रावण की भौहें ताक रहे हैं, *सकल सभीता* = सभी भयभीत होकर। *देखि प्रताप* = रावण का प्रताप देखकर, *न कपि मन संका* = हनुमान जी को भय नहीं लगा, *जिमि अहिगन महुँ* = जिस प्रकार सर्पों के बीच में, *गरुड़ असंका* = गरुड़ निर्भय होकर खड़ा रहता है।

हनुमान जी को बाँधने का समाचार पाकर बहुत-से राक्षस तमाशा देखने आ गये कि कैसे इतने शक्तिशाली वानर को बाँध लिया गया है। हनुमान जी ने रावण के दरबार की शान, शौकत और ऐश्वर्य को देखा। दरबार की प्रभुता का वर्णन नहीं किया जा सकता। देवतागण और दिशाओं को संभालने वाले दिग्पाल हाथ जोड़े विनम्रता से खड़े हैं। रावण का ऐसा रौब है कि देवता व दिग्पाल भयभीत होकर उसकी आँखो की तरफ देखते रहते हैं कि कब क्या आज्ञा दे जिसका पालन उन्हें करना है। लेकिन हनुमान जी को भय नहीं लगा, वे वैसे ही निर्भय होकर खड़े हैं मानों सर्पों के बीच गरुड़ निडर होकर खड़ा हो।

भय का वातावरण बनाकर रहना निशाचरी प्रवृत्ति

राम जी, जनक जी या दशरथ जी के दरबार में कोई भयभीत नहीं रहता है, वहाँ भय से शासन नहीं होता है। धर्म से, मर्यादा से, प्रेम से, शांति व सहयोग

से शासन होता है। यह दैवी प्रवृत्ति है। डर दिखाकर शासन करना राक्षसी प्रवृत्ति है। रावण रौब जमाकर, डर दिखाकर शासन चलाता है।

हनुमान जी को अपशब्द कहकर रावण हँसता है

कपिहि बिलोकि दसानन बिहसा कहि दुर्बाद।
सुत बध सुरति कीन्हि पुनि उपजा हृदयँ बिषाद॥ दोहा 20॥

कपिहि बिलोकि दसानन = हनुमान जी की तरफ देखकर रावण, *बिहसा* = हँसता है, *कहि दुर्बाद* = अपशब्द कहता है, *सुत बध* = पुत्र के मारे जाने का, *सुरति कीन्हि* = स्मरण किया तो, *पुनि उपजा हृदयँ बिषाद* = फिर उसके हृदय में दुःख हुआ।

हनुमान जी की ओर देखकर रावण अपशब्द कहता है, हँसता है, उनका मजाक उड़ाता है। फिर अपने पुत्र के मारे जाने का स्मरण आया तो वह मन-ही-मन दुःखी होता है।

हनुमान जी से रावण छः प्रश्न पूछता है

कह लंकेस कवन तैं कीसा। केहि कें बल घालेहि बन खीसा॥ 21.1॥
की धौं श्रवन सुनेहि नहिं मोही। देखउँ अति असंक सठ तोही॥ 21.2॥
मारे निसिचर केहिं अपराधा। कहु सठ तोहि न प्रान कइ बाधा॥ 21.3॥

कह लंकेस = रावण पूछता है, *कवन तैं कीसा* = तुम कहाँ के बंदर हो? *केहि कें बल* = किसके बल पर, *घालेहि बन खीसा* = तुमने बन को उजाड़कर नष्ट कर दिया है? *की धौं* = क्या तुमने कभी, *श्रवन सुनेहि नहिं मोही* = कानों से मेरे बारे में नहीं सुना? *देखउँ अति असंक* = बहुत निडर देख रहा हूँ, *सठ तोही* = रे दुष्ट तुझे, *मारे निसिचर केहिं अपराधा* = किस अपराध के कारण राक्षसों को मारा है? *कहु सठ तोहि* = रे मूर्ख क्या तुझे, *न प्रान कइ बाधा* = प्राण जाने का भय नहीं है?

रावण हनुमान जी से पूछता है –
1. ऐ बंदर, तुम कौन हो?
2. तुमने किसके बल से अशोकवाटिका उजाड़ कर रख दी?
3. क्या तुमने मेरे बारे में नहीं सुना कि मेरी कितनी शक्ति है?

4. इतना निडर होकर यहाँ खड़ा है, तुझे भय नहीं लगता?
5. इतने निशाचरों को किस अपराध के कारण मारा है?
6. रे शठ, तुझे अपने प्राणों की चिंता नहीं है, क्या तुझे मरने का भय नहीं है?

हनुमान जी ब्रह्म स्वरूपी श्रीराम के बल का वर्णन करते हैं

सुनु रावण ब्रह्मांड निकाया। पाइ जासु बल बिरचति माया॥ 21.4॥
जाकें बल बिरंचि हरि ईसा। पालत सृजत हरत दससीसा॥ 21.5॥
जा बल सीस धरत सहसानन। अंडकोस समेत गिरि कानन॥ 21.6॥

सुनु रावण = हे रावण सुनो, *ब्रह्मांड निकाया* = ब्रह्माण्डों के समूह, *पाइ जासु बल* = जिसका बल पाकर, *बिरचति माया* = माया रचना करती है। *जाकें बल* = जिसके बल से, *बिरंचि हरि ईसा* = ब्रह्मा, विष्णु व महेश, *पालत सृजत हरत* = सृष्टि की रचना, पालन व विनाश करते हैं, *दससीसा* = हे रावण, *जा बल* = जिसके बल से, *सीस धरत सहसानन* = शेषनाग अपने सिर में धारण करते हैं, *अंडकोस समेत गिरि कानन* = वनों व पहाडों सहित पृथ्वी को।

रावण ने जितनी बातें पूछी थीं, हनुमान जी क्रम से उनका उत्तर देते हैं। उसने पूछा था कि किसके बल से सब कार्य किया है और तुम कौन हो। हनुमान जी पहले श्रीराम के परब्रह्म परमेश्वर वाले बल का वर्णन करते हैं। कहते हैं श्रीराम परब्रह्म हैं, उनके बल से माया सारे ब्रह्माण्डों की रचना करती है। उन्हीं परब्रह्म राम के बल से ब्रह्मा सृष्टि की रचना करते हैं, विष्णु पालन करते हैं, और शंकर संहार करते हैं। सारी सृष्टि में ये तीनों शक्तियाँ राम के बल से ही काम करती हैं। उन्हीं के बल से शेषनाग इस पृथ्वी को बड़े-बड़े पहाड़ व वन सहित अपने शीश पर धारण किये हुए हैं। रावण समझता था कि हमने कैलास पर्वत उठाकर बड़ा काम कर लिया। उसी की तरफ हनुमान जी संकेत करते हैं कि कैलास तो पृथ्वी पर ही है। उस पृथ्वी को शेषनाग अपने फन पर राम के बल से ही रखे हैं। वही सर्वशक्तिमान हैं।

हनुमान जी मनुष्य रूप में राम के बल का वर्णन करते हैं

धरइ जो बिबिध देह सुरत्राता। तुम्ह से सठन्ह सिखावनु दाता॥ 21.7॥
हर कोदंड कठिन जेहिं भंजा। तेहि समेत नृप दल मद गंजा॥ 21.8॥
खर दूषन त्रिसिरा अरु बाली। बधे सकल अतुलित बलसाली॥ 21.9॥

धरइ जो बिबिध देह = जो तरह-तरह के शरीर धारण करता है, *सुरत्राता* = देवताओं की रक्षा के लिये, *तुम्ह से सठन्ह* = और तुम्हारे जैसे दुष्टों को, *सिखावनु दाता* = शिक्षा देने के लिये। *हर कोदंड कठिन* = शंकरजी के कठिन धनुष को, *जेहिं भंजा* = जिसने तोड़ दिया, *तेहि समेत* = तुम्हारे सहित, *नृप दल* = राजाओं के समूह का, *मद गंजा* = गर्व नष्ट कर दिया। *खर दूषन त्रिसिरा अरु बाली* = खर, दूषण, त्रिशिरा और बालि, *बधे सकल* = इन सबको मारा, *अतुलित बलसाली* = जो अतुलनीय शक्तिशाली थे।

हनुमान जी कहते हैं कि श्रीराम निराकार ब्रह्म ही नहीं हैं, बल्कि तरह-तरह की देह रखकर अवतार भी लेते हैं। देवताओं की रक्षा के लिये व तुम्हारे जैसे निशाचरों को शिक्षा देने के लिये वे अवतार लेते हैं। इस प्रकार वे सूचना दे देते हैं कि श्रीराम का अवतार हो गया है। अब राम जी के सगुण रूप के बल का वर्णन करते हैं, 'उन्होंने शिवजी के कठिन धनुष को तोड़कर तुम्हारे व अन्य राजाओं के घमण्ड को तोड़ दिया था।' उसके बाद की घटना याद दिलाते हैं कि श्रीराम ने खर, दूषण और त्रिशिरा को मारा, जो तुम्हारे जैसे बलशाली थे। बालि को भी मारा जो तुमसे ज्यादा बलवान् था।

मैं उन्हीं श्रीराम का दूत हूँ

जाके बल लवलेस तें जितेहु चराचर झारि।
तासु दूत मैं जा करि हरि आनेहु प्रिय नारि॥ दोहा 21॥

जाके बल लवलेस तें = जिसके थोड़े से बल से, *जितेहु चराचर झारि* = तुमने चर व अचर सबको जीत लिया है। *तासु दूत मैं* = मैं उन्हीं का दूत हूँ, *जा करि हरि आनेहु प्रिय नारि* = तुम जाकर के जिनकी प्रिय पत्नी का हरण करके लाये हो।

हनुमान जी कहते हैं कि तुम्हारे अंदर जो शक्ति है वह तुम्हारी अपनी नहीं है। श्रीराम की ही जरा-सी शक्ति से तुमने चर-अचर सारे संसार को जीत रखा है। श्रीराम के बल के वर्णन के बाद अपना परिचय देते हैं कि मैं उन्हीं श्रीराम का दूत हूँ, जिनकी पत्नी का तुम हरण करके लाये हो। इस प्रकार रावण के पहले प्रश्न कि तुम कौन हो और दूसरे प्रश्न कि किसके बल पर तुमने सब काम किया है, हनुमान जी बड़ी ही बुद्धिमत्ता व विद्वत्ता से उत्तर देते हैं।

प्रभुता पर व्यंग कर रावण की पराजय के उदाहरण देते हैं

जानउँ मैं तुम्हारि प्रभुताई। सहसबाहु सन परी लराई॥22.1॥
समर बालि सन करि जसु पावा। सुनि कपि बचन बिहसि बिहरावा॥22.2॥

जानउँ मैं तुम्हारि प्रभुताई = मैं तुम्हारी प्रभुता जानता हूँ, *सहसबाहु सन परी लराई* = सहस्त्रबाहु से तुम्हारी लड़ाई हुई थी। *समर बालि सन करि* = बालि के साथ युद्ध करके तुमने, *जसु पावा* = जो यश पाया था, *सुनि कपि बचन* = हनुमान जी के बचन सुनकर, *बिहसि बिहरावा* = हँसकर बात टाल देता है।

रावण का तीसरा प्रश्न था, क्या तुमने मेरी प्रभुता और शक्ति के बारे में नहीं सुना है? हनुमान जी बड़े व्यंगात्मक शब्दों में रावण के पराजय के दो उदाहरण देते हैं, पहला सहस्त्रबाहु का, दूसरा बालि का। रावण अपनी पराजय की बात सुनकर हँसकर टाल देता है। पौराणिक कथा के अनुसार एक बार नर्मदा किनारे सहस्त्रबाहु, जिसकी एक हजार भुजायें थीं, स्नान कर रहा था। वहाँ रावण पहुँचा और दोनों में किसी बात को लेकर युद्ध हो गया। सहस्त्रबाहु रावण को बाँधकर ले गया था। बालि जब सूर्य की पूजा कर रहा था, रावण ने निहत्था समझकर पीछे से हमला करने का प्रयास किया। बालि ने उसे अपनी बगल में दबा लिया और बिना किसी बाधा के पूजा पूरी की।

फल खाने, पेड़ तोड़ने, राक्षसों को मारने के कारण बताते हैं

खायउँ फल प्रभु लागी भूँखा। कपि सुभाव तें तोरेउँ रूखा॥22.3॥
सब कें देह परम प्रिय स्वामी। मारहिं मोहि कुमारग गामी॥22.4॥
जिन्ह मोहि मारा ते मैं मारे। तेहि पर बाँधेउँ तनयँ तुम्हारे॥22.5॥
मोहि न कछु बाँधे कइ लाजा। कीन्ह चहउँ निज प्रभु कर काजा॥22.6॥

खायउँ फल प्रभु लागी भूँखा = मुझे भूख लगी थी इसलिये फल खा लिये, *कपि सुभाव तें तोरेउँ रूखा* = वानर स्वभाव के कारण पेड़ों को तोड़ डाला, *सब कें देह परम प्रिय स्वामी* = सबको अपना शरीर प्रिय लगता है, *मारहिं मोहि कुमारग गामी* = कुमार्ग में चलने वाले मुझे मार रहे थे, *जिन्ह मोहि मारा* = जिन्होंने मुझे मारा, *ते मैं मारे* = उनको मैंने भी मार दिया, *तेहि पर* = उस पर, *बाँधेउँ तनयँ तुम्हारे* = तुम्हारे पुत्र ने हमें बाँध लिया। *मोहि न कछु बाँधे कइ*

लाजा = मुझे बंधे होने पर कोई लज्जा नहीं आती, *कीन्ह चहउँ* = मैं तो करना चाहता हूँ, *निज प्रभु कर काजा* = अपने प्रभु श्रीराम का कार्य।

रावण का प्रश्न था कि तुमने निशाचरों को क्यों मारा? हनुमान जी कहते हैं कि हमें भूख लगी थी, इसलिए फल खा लिये। हमारी वानरी आदत है, जब हम पेड़ों पर यहाँ से वहाँ कूदते हैं तो डालें टूट जाती हैं। जब पेड़ टूट गये तो तुम्हारे रक्षक मुझे मारने लगे। देह तो सबको प्रिय होती है। ये कुमार्ग पर चलने वाले जब मुझे मारने लगे तो मैंने भी इनको मार दिया। तब तुम्हारे पुत्र ने आकर मुझे बाँध लिया। मेरा कोई अपराध नहीं था। रावण के दो प्रश्न और थे, तुम यहाँ इतने निर्भय होकर कैसे खड़े हो? तुम्हें मृत्यु का डर नहीं है? हनुमान जी कहते हैं कि मुझे बंधे होने की लज्जा नहीं है। जब कोई हारकर बंधा हो तो वह लज्जित होता है। वे कहते हैं, हम तो अपने स्वामी का कार्य करना चाहते हैं, इसलिये न मृत्यु का भय है, न लज्जा।

सेवा करने का तरीका हनुमान जी दिखाते हैं

हनुमान जी एक उदाहरण प्रस्तुत करते हैं कि भगवान की सेवा ऐसे की जाती है। बंधे हैं, शरीर में कष्ट है, फिर भी बिना किसी भय या लज्जा के सेवा कार्य में लगे हैं। जब हम अच्छा कार्य, दूसरों की भलाई का कार्य करने निकलते हैं तो कुछ लोग विरोध करते हैं, कष्ट भी देते हैं। तब भी हमें सेवा कार्य में लगे रहना चाहिये।

हनुमान जी रावण को जो शिक्षा देंगे वह हमारे लिये भी है

रावण के सभी प्रश्नों का उत्तर देने के बाद हनुमान जी उसे समझाते हुए कहते हैं – हे रावण, मैं हाथ जोड़कर विनती करता हूँ, अभिमान छोड़कर हमारी बात मान लो। ये बातें सिर्फ रावण के लिये नहीं हैं, हम सबके लिये हैं। हम सब भी भ्रम में रहते हैं कि भगवान है कि नहीं। हमारी शांति भी हमारी आदतों ने चुरा ली है।

पवित्र कुल का विचार कर, भ्रम छोड़ श्रीराम का स्मरण करो

बिनती करउँ जोरि कर रावन। सुनहु मान तजि मोर सिखावन॥ 22.7॥
देखहु तुम्ह निज कुलहि बिचारी। भ्रम तजि भजहु भगत भय हारी॥ 22.8॥

बिनती करउँ जोरि कर रावन = हे रावण मैं हाथ जोड़कर विनती करता हूँ, *सुनहु* = सुनो, *मान तजि* = अभिमान का त्यागकर, *मोर सिखावन* = मेरी शिक्षा को। *देखहु तुम्ह निज कुलहि बिचारी* = तुम अपने पवित्र कुल का विचार करके देखो, *भ्रम तजि* = भ्रम छोड़ो, *भजहु भगत भय हारी* = भक्तों का भय दूर करने वाले का स्मरण करो।

हनुमान जी कहते हैं – हे रावण, मैं हाथ जोड़कर विनती करता हूँ, अभिमान छोड़कर जो हम शिक्षा दे रहे हैं, उतनी बात हमारी मान लो। तुम विचार करके तो देखो किस पवित्र कुल में तुमने जन्म लिया है? स्मरण दिला दिया कि तुम पुलस्त्य ऋषि के कुल के हो। कुल की मर्यादा भी गलत दिशा में जाने से रोकती है। तुम यह भ्रम छोड़ो कि भगवान हैं कि नहीं, श्रीराम साधारण मनुष्य हैं कि अवतार हैं। वे अवतार ही हैं यह निश्चित है। भक्तों का भय दूर करने वाले श्रीराम का स्मरण करो।

भगवान हैं कि नहीं, अपना यह भ्रम हम कैसे दूर करें?

रावण जैसा भ्रम हम लोगों के अंदर भी रहता है कि भगवान हैं कि नहीं। कभी यह सोचा कि कैसे सूर्य, चन्द्रमा, ग्रह, तारे कार्य कर रहे हैं। इतनी विशाल पृथ्वी कैसे आकाश में टँगी हुई है व घूम भी रही है? पृथ्वी सालभर बराबर अपने समय से घूम रही है, वह भी हजारों-लाखों सालों से। क्या यह सब अपने आप हो रहा है? इस सृष्टि का कोई संचालक-संरक्षक तो होगा। कोई शक्ति इसके मूल में विद्यमान तो होगी। पृथ्वी को सूर्य से इतनी दूरी पर रखा गया है ताकि सहने लायक गर्मी और ठण्ढक रहे, जीवन चल सके। इस प्रकार की व्यवस्था किसने की? आप कहोगे, सब अपने आप है। अपने आप नहीं है। इसकी संरचना परमात्मा करता है जिसने राम रूप में अवतार लिया है।

श्रीराम से वैर मत लो, जानकी जी को लौटा दो

जाकें डर अति काल डेराई। जो सुर असुर चराचर खाई॥ 22.9॥
तासों बयरु कबहुँ नहिं कीजै। मोरे कहें जानकी दीजै॥ 22.10॥

जाकें डर अति काल डेराई = जिसके डर से काल भी डरता है, *जो सुर असुर* = जो देवों और असुरों को, *चराचर* = चर व अचर दोनों को, *खाई* = खा जाता

है। *तासों बयरु* = उससे वैर, *कबहुँ नहिं कीजै* = कभी नहीं करना चाहिये, *मोरे कहें* = मेरे कहने से, *जानकी दीजै* = सीता जी को दे दो।

काल तो देवता, असुर, चर, अचर सभी को खा जाता है। सारा संसार काल से डरता है। पर वह भी श्रीराम से डरता है। उस श्रीराम से कभी वैर नहीं करना चाहिये। मेरा कहा मानो और सीता जी को जाकर प्रभु राम को अर्पित कर दो।

राम तुम्हें क्षमा कर देंगे

प्रनतपाल रघुनायक करुना सिंधु खरारि।
गएँ सरन प्रभु राखिहैं तव अपराध बिसारि॥ दोहा 22॥

प्रनतपाल = शरण में आये की रक्षा करने वाले, *रघुनायक* = राम जी, *करुना सिंधु* = करुणा के सागर, *खरारि* = खर के शत्रु हैं। *गएँ सरन* = शरण में जाने पर, *प्रभु राखिहैं* = प्रभु रक्षा करेंगे, *तव अपराध बिसारि* = तुम्हारे अपराधों को भुला देंगे।

श्रीराम शरणागतों की रक्षा करने वाले हैं। वे करुणा के सागर हैं, खर के शत्रु हैं। जब तुम उनकी शरण में जाओगे तो तुम्हें मारेंगे नहीं, तुम्हारी रक्षा करेंगे। तुम्हारे सब अपराधों को वे भुला देंगे। इसलिये अपना कल्याण चाहते हो तो श्रीराम की शरण में जाओ।

राम के चरणों का स्मरण करो, सदैव लंका में राज करो

राम चरन पंकज उर धरहू। लंका अचल राजु तुम्ह करहू॥ 23.1॥

राम चरन पंकज = श्रीराम जी के चरण कमल को, *उर धरहू* = हृदय में धारण करो, *लंका अचल राजु तुम्ह करहू* = सदा के लिये लंका में राज्य करो।

हनुमान जी कहते हैं कि तुम श्रीराम के चरणों को हृदय में धारण करो, मायने उनका स्मरण करो। उसके बाद लंका में सदा के लिये अचल होकर राज्य करते रहो। विभीषण को हनुमान जी ने जो समझाया वही रावण को समझाते हैं। विभीषण मान गया और राम की शरण में जाकर लंका का राजा बन गया।

अपने कुल का कलंक मत बनो

रिषि पुलस्ति जसु बिमल मयंका। तेहि ससि महुँ जनि होहु कलंका॥ 23.2॥

रिषि पुलस्ति जसु = ऋषि पुलस्ति का यश, *बिमल मयंका* = निर्मल चन्द्रमा के समान है, *तेहि ससि महुँ* = उस चन्द्रमा में, *जनि होहु कलंका* = तुम कलंक मत बनो।

अब कुल की बात पुन: समझाते हैं। ऋषि पुलस्ति जो तुम्हारे बाबा हैं, उनका यश चन्द्रमा के समान निर्मल है। उस चन्द्रमा में तुम कलंक मत बनो। पुलस्ति ऋषि के कुल में पैदा होकर तुम कलंक बनकर कुल को अपमानित कर रहे हो।

वाणी की शोभा राम नाम कहने में है

राम नाम बिनु गिरा न सोहा। देखु बिचारि त्यागि मद मोहा॥ 23.3॥

राम नाम बिनु = राम नाम लिये बिना, *गिरा न सोहा* = वाणी की शोभा नहीं है, *देखु बिचारि* = विचार करके देखो, *त्यागि मद मोहा* = अभिमान और मोह को त्याग दो।

हनुमान जी ने देखा कि रावण राम नाम नहीं लेता है। राम को वनवासी, तपस्वी या राजकुमार कहकर संबोधित करता है, पर राम नहीं कहता। तब वे कहते हैं कि देखो, राम नाम न लेने से तुम्हारी वाणी की कोई शोभा नहीं है। इस बात को विचार करके देख लो। मद, मोह, अहंकार को छोड़ करके राम नाम भजो।

राम नाम लिये बिना संपत्ति और प्रभुता आनंद नहीं देती

बसन हीन नहिं सोह सुरारी। सब भूषन भूषित बर नारी॥ 23.4॥
राम बिमुख संपति प्रभुताई। जाइ रही पाई बिनु पाई॥ 23.5॥
सजल मूल जिन्ह सरितन्ह नाहीं। बरषि गएँ पुनि तबहिं सुखाहीं॥ 23.6॥

बसन हीन = कपड़ों के बिना, *नहिं सोह* = शोभा नहीं पाती, *सुरारी* = हे देवताओं के शत्रु, *सब भूषन भूषित* = सब गहनों से सजी हुई, *बर नारी* =

सुंदर स्त्री। *राम बिमुख* = राम से विमुख होकर, *संपति प्रभुताई* = संपत्ति और प्रभुता, *जाइ रही पाई बिनु पाई* = वह प्राप्त होते हुए भी अप्राप्त के समान है। *सजल मूल जिन्ह सरितन्ह नाहीं* = जिन नदियों के मूल में जल-स्रोत न हो, *बरषि गएँ* = वर्षा के बाद, *पुनि तबहिं सुखाहीं* = फिर से सूख जाती हैं।

यहाँ हनुमान जी रावण को सुरारि कहकर संबोधित करते हैं, मायने देवताओं का शत्रु। *सुर* = देवता, *अरि* = शत्रु। देवत्व उसमें है ही नहीं, दैवी संपत्ति का वह दुश्मन है, अपने अंदर दैवी शक्ति को आने ही नहीं देता, आसुरी संपत्ति का संग्रह किये हुए है। वे कहते हैं, हे सुरारि, जैसे किसी सुंदर स्त्री ने खूब आभूषण पहने हों पर वस्त्र न पहने हों तो उसकी शोभा नहीं होगी, वैसे ही भौतिक संपदा चाहे जितनी हो, धन, संपत्ति, यश हो, पर राम में प्रेम न हो तो वह प्राप्त होते हुए भी बिना प्राप्त हुए के समान है। मायने वह टिकने वाली नहीं है। उदाहरण देते हैं कि जिन नदियों का अपना खुद का जल-स्रोत नहीं है, उनमें पानी तभी तक रहता है जब तक वर्षा का जल रहता है। फिर सूख जाती हैं। इसी तरह आनंद, सुख और शांति का स्रोत भगवान ही हैं। यदि उस परमात्मा की बजाय संसार की वस्तुओं से हृदय में सुख-शांति आ रही है तो वह जल्दी ही नष्ट हो जायेगी, और तुम फिर दुःखी हो जाओगे।

हजार त्रिदेव भी राम के विरोधी की रक्षा नहीं कर सकते

सुनु दसकंठ कहउँ पन रोपी। बिमुख राम त्राता नहिं कोपी॥ 23.7॥
संकर सहस बिष्नु अज तोही। सकहिं न राखि राम कर द्रोही॥ 23.8॥

सुनु दसकंठ कहउँ पन रोपी = हे रावण सुनो, मैं प्रतिज्ञा करके कहता हूँ, *बिमुख राम* = राम का विरोध करने वाले का, *त्राता नहिं कोपी* = कोई रक्षा नहीं कर सकता। *संकर सहस बिष्नु अज तोही* = हजार शंकर, हजार विष्णु व हजार ब्रह्मा भी, *सकहिं न राखि राम कर द्रोही* = राम के द्रोही की रक्षा नहीं कर सकते।

हनुमान जी प्रतिज्ञा करके कहते हैं कि हे दसकंधर, राम के विरोधी की कोई रक्षा नहीं कर सकता। एक शंकर क्या, हजार शंकर, हजार विष्णु और हजार ब्रह्मा भी आ जायें, तुम्हें तमाम वरदान भी दे दें, पर तुम्हारी रक्षा नहीं कर

सकते। ये सब भी परब्रह्म राम के ही अंश हैं, उन्हीं की सेवा में लगे रहते हैं, उन्हीं की कृपा चाहते हैं।

रघुनाथ जी का स्मरण करो, तभी शांति मिलेगी

मोहमूल बहु सूल प्रद त्यागहु तम अभिमान।
भजहु राम रघुनायक कृपा सिंधु भगवान॥ दोहा 23॥

मोहमूल = मोह ही जिसका मुख्य कारण है, *बहु सूल प्रद* = बहुत कष्ट देने वाला है, *त्यागहु तम अभिमान* = अंधकार के समान इस अभिमान को त्याग दो, *भजहु राम रघुनायक* = श्रीराम का स्मरण करो, *कृपा सिंधु भगवान* = भगवान तुम्हारे ऊपर कृपा करेंगे।

तुम्हारा यह अभिमान दुःख पहुँचाने वाला है। अभिमान के कारण ही व्यक्ति को नाना प्रकार के दुःख भोगने पड़ते हैं। मोह से ही अभिमान उत्पन्न होता है। मोह मायने परमात्मा का ज्ञान न होना। अभिमान अंधकार के समान है। तुम मोह त्यागकर अभिमान छोड़ो, श्रीराम जी का स्मरण करो। वे कृपा के सागर तुम्हें शांति प्रदान करेंगे।

हनुमान जी की सुंदर सलाह पर रावण व्यंग कर हंसता है

जदपि कही कपि अति हित बानी। भगति बिबेक बिरति नय सानी॥ 24.1॥
बोला बिहसि महा अभिमानी। मिला हमहि कपि गुर बड़ ग्यानी॥ 24.2॥

जदपि कही कपि = यद्यपि हनुमान जी ने, *अति हित बानी* = अत्यंत हित की बात कही, *भगति बिबेक बिरति नय सानी* = भक्ति, विवेक, वैराग्य और नीति से भरपूर थी। *बोला बिहसि महा अभिमानी* = वह महा अभिमानी रावण व्यंग से हँसकर बोला, *मिला हमहि कपि* = हमें ही यह बंदर मिला है, *गुर बड़ ग्यानी* = जो बड़ा ज्ञानी गुरु है।

यद्यपि हनुमान जी ने बहुत सुंदर बात कही जिसमें भक्ति थी कि राम की शरण में जाओ, विवेक था कि सही व गलत पर विचार करो, वैराग्य था कि मिथ्या बातों से दूर रहो और नीति थी कि व्यर्थ में किसी से विरोध मत करो, रावण

महा अभिमानी है। उसने हनुमान जी की बात पर विश्वास तो किया नहीं , उल्टा उपहास करके कहने लगा कि आज तो बंदर हमारा गुरु बन गया है, हमें शिक्षा देने आया है। बंदर इतना ज्ञानी गुरु बन गया कि हमें शिक्षा देता है?

खिसियाकर हनुमान जी को मार डालने का आदेश देता है

मृत्यु निकट आई खल तोही। लागेसि अधम सिखावन मोही॥ 24.3॥
उलटा होइहि कह हनुमाना। मतिभ्रम तोर प्रगट मैं जाना॥ 24.4॥
सुनि कपि बचन बहुत खिसिआना। बेगि न हरहु मूढ़ कर प्राना॥ 24.5॥

मृत्यु निकट आई खल तोही = रे दुष्ट, तेरी मृत्यु आ गई है, *लागेसि अधम सिखावन मोही* = मुझे उल्टी-सीधी शिक्षा दे रहा है। *उलटा होइहि कह हनुमाना* = हनुमान जी ने कहा इसका उल्टा होगा, *मतिभ्रम तोर प्रगट मैं जाना* = तुम्हें सही बात उल्टी दिख रही है यह मुझे पता चल गया है। *सुनि कपि बचन बहुत खिसिआना* = हनुमान जी की बात सुनकर वह बहुत खिसियाकर बोला, *बेगि न हरहु मूढ़ कर प्राना* = जल्दी से इसको मार डालो।

रावण कहता है, रे वानर! तेरी मृत्यु निकट आ गई है, इसलिये तो मुझसे बढ़-चढ़ कर उल्टा-सीधा बोल रहा है। ऐसी नीच शिक्षा दे रहा है कि हम उनकी शरण में जायें! अरे, ऐसी बात बोलो कि वे हमारी शरण में आयें। हनुमान जी कहते हैं कि तुम जो कुछ बोल रहे हो उसका उल्टा ही होने वाला है। तुम्हें मतिभ्रम हो गया है, तभी अच्छी बात को बुरी बात कह रहे हो। मृत्यु तुम्हारी आयी है और कह रहे हो हमारी आयी है। यह सुनकर रावण खिसिया गया और अपने सैनिकों से बोला कि तुम लोग इस बंदर का जीवन समाप्त कर दो।

7. लंका में हनुमान जी आग लगा देते हैं

(दोहा 24 से दोहा 26)

श्रीराम पग-पग पर हनुमान जी की सहायता करते हैं। रावण की बुद्धि पलट जाती है, वह हनुमान जी की पूँछ जलाने का आदेश दे देता है। हनुमान जी की पूँछ में आग लगते साथ ही प्रभु की प्रेरणा से आँधी-तूफान चलने लगता है और आग शीघ्रता से लंका में फैल जाती है। इस प्रसंग का पाठ करते समय हनुमान जी से प्रार्थना कर लें कि हे महाराज, हमारा हृदय तमाम उल्टे-सीधे

विचारों और तनावों से भर गया है। सब करके देख लिया, पर मन ठीक ही नहीं होता, तनाव बने रहते हैं। हे हनुमान जी, कभी आग लगी पूँछ हमारे कलुषित हृदय में भी घुमा दीजिए जिससे सारी बुराइयाँ जलकर भस्म हो जायें, मन एकदम निर्मल हो जाये और हृदय में अच्छे-अच्छे विचार आने लगें।

विभीषण मृत्युदण्ड न देने की विनती करते हैं

सुनत निसाचर मारन धाए। सचिवन्ह सहित बिभीषनु आए॥ 24.6॥
नाइ सीस करि बिनय बहूता। नीति बिरोध न मारिअ दूता॥ 24.7॥
आन दंड कछु करिअ गोसाँई। सबहीं कहा मंत्र भल भाई॥ 24.8॥

सुनत निसाचर मारन धाए = रावण की बात सुनकर राक्षस मारने दौड़ते हैं, *सचिवन्ह सहित बिभीषनु आए* = इतने में सचिवों सहित विभीषण आ जाते हैं। *नाइ सीस करि बिनय बहूता* = उन्होंने सिर नवाकर प्रणाम किया और बहुत विनयपूर्वक कहा, *नीति बिरोध न मारिअ दूता* = दूत को मत मारिये, यह नीति के विरुद्ध है। *आन दंड कछु करिअ गोसाँई* = हे स्वामी, कुछ दूसरी सजा दे दीजिये, *सबहीं कहा मंत्र भल भाई* = सब ने कहा कि यह सलाह अच्छी है।

जैसे ही रावण की आज्ञा मिली सबके सब राक्षस दौड़ पड़े हनुमान जी को मारने के लिये। पर हनुमान जी डरे नहीं। उसी समय विभीषण और उनके मंत्री दरबार में आ गये। विभीषण ने रावण को सिर झुकाकर प्रणाम किया और विनती करते हुए कहा कि दूत को मारना नीति के विरुद्ध है। दुर्बल व्यक्ति ही दूत को मारेगा। बलवान् तो कहेगा, मालिक को भेजो, हम उससे निपटेंगे। विभीषण कहते हैं, यदि दूत ने कोई अपमानजनक बात कही हो तो उसे दूसरा दण्ड दे सकते हैं पर मार नहीं सकते। सबने कहा कि यह सलाह अच्छी है।

हनुमान जी की पूँछ में आग लगाने का आदेश

सुनत बिहसि बोला दसकंधर। अंग भंग करि पठइअ बंदर॥ 24.9॥

कपि कें ममता पूँछ पर सबहि कहउँ समुझाइ।
तेल बोरि पट बाँधि पुनि पावक देहु लगाइ॥ दोहा 24॥

सुनत बिहसि बोला दसकंधर = यह सुनकर रावण हँसकर बोला, *अंग भंग करि पठइअ बंदर* = अंग-भंग करके बंदर को भेज दो।
कपि कें ममता पूँछ पर = बंदर को पूँछ से बड़ा प्रेम होता है, *सबहि कहउँ समुझाइ* = सबको समझाकर कहता है, *तेल बोरि पट बाँधि* = कपड़े को तेल में डुबोकर पूँछ में बाँध दो, *पुनि पावक देहु लगाइ* = उसके बाद आग लगा दो।

विभीषण की बात से सहमत होकर रावण हँसकर आदेश देता है कि इस बंदर का अंग-भंग कर दो। वह सबको समझाकर कहता है कि वानर को अपनी पूँछ से बड़ा प्रेम होता है, उसकी पूँछ में आग लगा दो। आग लगाने का तरीका भी बताता है कि कपड़ा लो, उसको तेल में डुबोकर पूँछ में बाँधो, फिर उसमें आग लगा दो। तेल के कारण खूब आग लगेगी। कपड़ा जलेगा, उसके साथ इसकी पूँछ भी जल जायेगी।

आग की बात सुनकर हनुमान जी मन-ही-मन मुस्कुराये

पूँछहीन वानर तहँ जाइहि। तब सठ निज नाथहि लइ आइहि॥ 25.1 ॥
जिन्ह कै कीन्हिसि बहुत बड़ाई। देखउँ मैं तिन्ह कै प्रभुताई॥ 25.2 ॥
बचन सुनत कपि मन मुसुकाना। भइ सहाय सारद मैं जाना॥ 25.3 ॥

पूँछहीन वानर तहँ जाइहि = बिना पूँछ का बंदर वहाँ जायेगा, *तब सठ* = तब यह मूर्ख, *निज नाथहि लइ आइहि* = अपने स्वामी को यहाँ लेकर आयेगा। *जिन्ह कै कीन्हिसि बहुत बड़ाई* = जिनकी इसने बहुत बड़ाई की है, *देखउँ मैं तिन्ह कै प्रभुताई* = मैं जरा उनकी प्रभुता तो देखूँ। *बचन सुनत* = रावण की बातें सुनकर, *कपि मन मुसुकाना* = हनुमान जी मन-ही-मन मुस्कुराते हैं, *भइ सहाय सारद मैं जाना* = मन में बोलते हैं कि सरस्वती जी मेरी सहायता कर रही हैं।

जब इसकी पूँछ जल जायेगी, तब यह पूँछविहीन वानर अपने स्वामी के पास जायेगा, फिर उन्हें हमारे पास लेकर आयेगा। जिस स्वामी की यह बहुत बड़ाई करता है, मैं जरा उनकी प्रभुता तो देखूँ। उसकी बातें सुनकर हनुमान जी मन में मुस्कुराते हैं। भय तो वैसे भी नहीं था, पर अब तो प्रसन्नता की बात हो गई।

पूँछ में आग लगने जा रही है और हनुमान जी प्रसन्न हैं। वे सोचते हैं, देखो सरस्वती जी हमारी सहायक हो गयीं, उन्होंने रावण के मुख से आग लगाने की बात कहलवा दी।

हनुमान जी पूँछ विशाल करते हैं, राक्षस आग लगाते हैं

जातुधान सुनि रावन बचना। लागे रचैं मूढ़ सोइ रचना॥ 25.4॥
रहा न नगर बसन घृत तेला। बाढ़ी पूँछ कीन्ह कपि खेला॥ 25.5॥
कौतुक कहँ आए पुरबासी। मारहिं चरन करहिं बहु हाँसी॥ 25.6॥
बाजहिं ढोल देहिं सब तारी। नगर फेरि पुनि पूँछ प्रजारी॥ 25.7॥

जातुधान सुनि रावन बचना = राक्षस रावण का आदेश सुनकर, *लागे रचैं मूढ़ सोइ रचना* = वे मूर्ख आग लगाने की तैयारी करने लगे। *रहा न नगर बसन घृत तेला* = नगर में कपड़ा, घी और तेल कम पड़ गया, *बाढ़ी पूँछ कीन्ह कपि खेला* = हनुमान जी ने ऐसा खेल किया की पूँछ बहुत बढ़ गयी। *कौतुक कहँ आए पुरबासी* = यह तमाशा देखने नगर के लोग आ गये, *मारहिं चरन करहिं बहु हाँसी* = लात मारकर उनका मजाक उड़ाने लगे। *बाजहिं ढोल देहिं सब तारी* = ढोल बजाते हैं, तालियाँ पीटते हैं, *नगर फेरि पुनि* = पूरे नगर में घुमाते हैं, *पूँछ प्रजारी* = फिर पूँछ में आग लगा देते हैं।

वे मूर्ख निशाचर रावण की बात मानकर वही करने लगे जो उसने कहा था। उन्हें क्या पता कि इसका क्या नतीजा होगा? हनुमान जी को वे दरबार से बाहर सड़क पर ले आये, वहाँ पर कपड़े तेल में डुबोकर पूँछ पर बाँधने लगे। हनुमान जी ने पूँछ बढ़ाना शुरू कर दिया, और इतनी पूँछ बढ़ायी की नगर भर के कपड़े, तेल और घी कम पड़ गया। यह सब सुनकर नगर के लोग तमाशा देखने दौड़े चले आये। वे सब आते हैं और हनुमान जी को लात मारकर उनपर हँसते हैं। करतब देखकर ढोल बजाते हैं, ताली पीटते हैं। हनुमान जी अभी बँधे हुए हैं। उनकी पूँछ लंबी हो गई है, उसपर कपड़ा लिपट गया है। वे चुपचाप हैं, अपनी वीरता या महानता नहीं दिखा रहे हैं। सब लात मारते हैं तो भी सहन करते हैं, सब हँसते हैं तो भी सहन करते हैं। राक्षस उन्हें नगर में चारों ओर घुमाते हैं फिर उनकी पूँछ में आग लगा देते हैं।

आग लगते ही हनुमान जी कूद कर छत पर चढ़ गये

पावक जरत देखि हनुमंता। भयउ परम लघुरूप तुरंता॥ 25.8॥
निबुकि चढ़ेउ कपि कनक अटारीं। भईं सभीत निसाचर नारीं॥ 25.9॥

पावक जरत देखि हनुमंता = हनुमान जी ने आग जलती हुई देखकर, *भयउ परम लघुरूप तुरंता* = तुरंत बहुत छोटे-से हो गये। *निबुकि* = बंधन से निकलकर, *चढ़ेउ कपि* = हनुमान जी चढ़ गये, *कनक अटारीं* = सोने के महलों की छत पर, *भईं सभीत निसाचर नारीं* = राक्षसों की स्त्रियाँ उन्हें देखकर डर गयीं।

हनुमान जी ने जैसे ही देखा कि पूँछ में आग लग गयी है तो वे छोटे हो गये। जिस रस्सी में वे बंधे थे वह तो छोटी होगी नहीं। इस प्रकार छोटे होकर उस रस्सी से बाहर आ गये। तुलसीदास जी इसके लिये *निबुकि* शब्द का प्रयोग करते हैं मायने बंधन से निकल आये। वे सोने से बने महलों की छत पर कूदकर चढ़ गये और लोगों की पकड़ से बाहर हो गये। अब उन्हें कोई मार नहीं सकता। निशाचरों की स्त्रियों ने देखा कि वानर छत पर चढ़ गया है और उसकी पूँछ में प्रचण्ड ज्वाला जल रही है। वे सब डर गयीं कि अब क्या होगा!

तेज हवा का चलना, हनुमान जी का आकाश तक विशाल शरीर

हरि प्रेरित तेहि अवसर चले मरुत उनचास।
अट्टहास करि गर्जा कपि बढ़ि लाग अकास॥ दोहा 25॥

हरि प्रेरित = भगवान की प्रेरणा से, *तेहि अवसर* = उस समय, *चले मरुत उनचास* = उनचासों पवन चल पड़े। *अट्टहास करि गर्जा* = हनुमान जी अट्टहास कर गर्जे, *कपि बढ़ि लाग अकास* = आकाश के समान बड़े हो गये।

उसी समय भगवान की प्रेरणा से उनचास तरह के पवन चलने लगे यानि आँधी-तूफान आ गया। हनुमान जी बहुत तेज गर्जना करते हैं। पहले तो छोटे बनकर फँदे से निकल आये थे, अब इतना बड़ा शरीर बना लिया कि छत से आकाश तक दिखायी देने लगे।

कूद-कूद कर पूरी लंका में आग लगा दी, लोग बेहाल

देह बिसाल परम हरुआई। मंदिर तें मंदिर चढ़ धाई॥ 26.1॥
जरइ नगर भा लोग बिहाला। झपट लपट बहु कोटि कराला॥ 26.2॥
तात मातु हा सुनिअ पुकारा। एहिं अवसर को हमहि उबारा॥ 26.3॥

देह बिसाल = शरीर बड़ा है, *परम हरुआई* = पर बहुत हल्का है, *मंदिर तें मंदिर चढ़ धाई* = वे दौड़कर एक महल से दूसरे महल पर चढ़ जाते हैं। *जरइ नगर* = नगर जलने लगता है, *भा लोग बिहाला* = लोग बेहाल हैं, *झपट लपट बहु कोटि कराला* = आग की बहुत भयंकर लपटें निकलने लगीं। *तात मातु हा सुनिअ पुकारा* = हा माँ! हा पिता! कहकर लोग पुकारने लगे, *एहिं अवसर* = इस समय, *को हमहि उबारा* = हमें कौन बचायेगा।

हनुमान जी का शरीर बहुत विशाल होने पर भी बहुत हल्का है। भारी शरीर हो तो कोइ कूद नहीं सकता। एक मकान की छत से दूसरे मकान की छत पर कूदते गये। हनुमान जी अपनी जलती हुई पूँछ जहाँ ले गये वहीं आग लग गई। नगर के लोग बेहाल होकर हाय-हाय करने लगे, भागने लगे, चिल्लाने लगे। कोइ माँ को पुकार रहा है तो कोई पिता को पुकार रहा है। बचाओ, बचाओ! चिल्ला रहे हैं। आग की लपटें झपट-झपट कर घरों में फैल गयीं।

यह आग सज्जन के अपमान का फल है

हम जो कहा यह कपि नहिं होई। बानर रूप धरें सुर कोई॥ 26.4॥
साधु अवग्या कर फलु ऐसा। जरइ नगर अनाथ कर जैसा॥ 26.5॥

हम जो कहा = हम जो कह रहे थे कि, *यह कपि नहिं होई* = यह बंदर नहीं है, *बानर रूप धरें सुर कोई* = किसी देवता ने वानर का रूप धर लिया है। *साधु अवग्या कर फलु ऐसा* = सज्जन के अपमान का ऐसा फल है, *जरइ नगर* = यह नगर जल रहा है, *अनाथ कर जैसा* = अनाथ के जैसे।

लोग कहने लगे कि हमने पहले ही कहा था कि यह वानर नहीं है, कोई देवता है जो वानर के रूप में आया है। हनुमान जी वास्तव में देवता हैं, वे तो शंकर जी के ही रूप हैं। तुलसीदास जी कहते हैं, यह सज्जन के अपमान का ही फल है कि

नगर अनाथ, मायने जिसकी देखरेख करने वाला कोई न हो, जैस जल रहा है। इस समय आग को बुझाने वाला कोई नहीं, रावण का कोई बल नहीं चलता।

पूरी लंका जल गयी पर विभीषण के घर आग नहीं पहुँची!

जारा नगरु निमिष एक माहीं। एक बिभीषन कर गृह नाहीं॥ 26.6॥
ता कर दूत अनल जेहिं सिरिजा। जरा न सो तेहि कारन गिरिजा॥ 26.7॥

जारा नगरु निमिष एक माहीं = एक क्षण में नगर जल गया, *एक बिभीषन कर गृह नाहीं* = विभीषण के एक घर को छोड़कर। *ता कर दूत* = हनुमान जी उस राम के दूत हैं, *अनल जेहिं सिरिजा* = जिन्होंने ही अग्नि की रचना की है, *जरा न सो* = वह नहीं जला, *तेहि कारन* = इसी कारण से, *गिरिजा* = शंकर जी पार्वती जी से कहते हैं।

कुछ ही क्षणों में पूरे नगर में आग लग गई। बस विभीषण का एक घर छूट गया जिसमें आग नहीं लगी। जब सारे नगर में आग लगी तब विभीषण के घर उसकी लपटें क्यों नहीं पहुँची होंगी? इस प्रश्न का समाधान शंकर जी करते हैं। कहते हैं कि हनुमान जी उसी राम के दूत हैं जिन्होंने अग्नि की रचना की है। अग्नि राम के अधीन है, इस कारण से विभीषण का घर नहीं जला। हनुमान जी व विभीषण दोनों श्रीराम के भक्त हैं। एक तो हनुमान जी ने जलाया नहीं और दूसरा, राम ने रक्षा की, इसलिये अग्नि विभीषण के घर तक नहीं पहुँची।

घूम-घूम कर पूरी लंका में आग लगाकर समुद्र में कूद पड़े

उलटि पलटि लंका सब जारी। कूदि परा पुनि सिंधु मझारी॥ 26.8॥

उलटि पलटि लंका सब जारी = उलट-पलट कर पूरी लंका जला दी, *कूदि परा पुनि सिंधु मझारी* = इसके बाद वे समुद्र में कूद पड़े।

हनुमान जी नगर में एक तरफ आग लगाकर आये, फिर दूसरी तरफ लगा दी। फिर घूमकर देखा, जहाँ नहीं लगी थी वहाँ भी लगा दी। जहाँ बुझ गयी, नहीं लगी, वहाँ फिर से लगा दी। कहीं कोई कोना जलने से नहीं बचा, सब जला दिया। लंका जलाकर खुद समुद्र में कूद पड़े।

पूँछ बुझाई, थकान मिटाई, छोटे रूप में सीता जी के पास पहुँचे

पूँछ बुझाइ खोइ श्रम धरि लघु रूप बहोरि।
जनकसुता कें आगें ठाढ़ भयउ कर जोरि॥ दोहा 26॥

पूँछ बुझाइ = पूँछ की आग बुझाई, *खोइ श्रम* = थकान मिटाई, *धरि लघु रूप बहोरि* = फिर छोटा-सा रूप धारण किया। *जनकसुता कें आगें* = सीता जी के सामने, *ठाढ़ भयउ कर जोरि* = हाथ जोड़कर खड़े हो गये।

इतनी बड़ी आग कैसे बुझे? उसे बुझाने के लिये समुद्र में कूद पड़े। नगर में कूदते-कूदते हनुमान जी थक गये थे तो थकान भी पानी में मिट गई। इस प्रकार पूँछ की आग को बुझाकर, थकान मिटाकर फिर वही छोटा-सा रूप रखकर, हाथ जोड़कर सीता माँ के सामने खड़े हो गये। अब जाने की आज्ञा माँगेंगे। हनुमान जी निशाचरों के लिये विशाल शरीर बना लेते हैं जबकि माँ सीता के लिये छोटा शरीर। छोटे शरीर का तात्पर्य विनम्रता से है।

8. माँ सीता से निशानी व संदेश ले हनुमान प्रभु तक पहुँचते हैं

(दोहा 27 से दोहा 29)

हनुमान जी बहुत बुद्धिमान और चतुर हैं, वे कच्ची बात नहीं करते। सीता जी से कहते हैं, हे माता! आप ऐसा चिन्ह दें जिससे प्रभु मान लें कि मैं आपसे मिलकर आया हूँ। सीता माँ ने मान लिया – हाँ, ठीक बात है। वे निशानी देकर प्रभु राम के लिये संदेश देती हैं। तब हनुमान जी वापस प्रभु राम के पास जाते हैं। सीता माँ का संदेश हम सबके लिये भी है। हम भी प्रार्थना करें कि हे प्रभु! आप दीनों पर दया करने वाले हैं, हम दीन-हीन अवस्था में हैं, हमारे ऊपर कृपा करें, हमारे भारी कष्टों को दूर करें। *दीन दयाल बिरिदु संभारी। हरहु नाथ मम संकट भारी॥* यह चौपाई बहुत प्रसिद्ध है, इसे गाते रहना चाहिये।

पहचान के लिये सीता माँ चूड़ामणि देती हैं

मातु मोहि दीजे कछु चीन्हा। जैसें रघुनायक मोहि दीन्हा॥ 27.1॥
चूड़ामनि उतारि तब दयऊ। हरष समेत पवनसुत लयऊ॥ 27.2॥

मातु मोहि दीजे कछु चीन्हा = हे माँ मुझे कोई पहचान दीजिये, *जैसें रघुनायक मोहि दीन्हा* = जैसे रघुनायक ने मुझे दी थी। *चूड़ामनि उतारि तब दयऊ* = माँ ने चूड़ामणि को उतारकर दे दिया, *हरष समेत पवनसुत लयऊ* = जिसे हनुमान जी ने प्रसन्नता के साथ ले लिया।

हनुमान जी कहते हैं कि माँ, अब हम जायेंगे। हमें भी कोई ऐसा चिन्ह दीजिये, जैसा श्रीराम ने दिया था। हनुमान जी कच्ची बात नहीं करते, वे कहते हैं आप ऐसा चिन्ह दें जिससे प्रभु राम मान लें कि मैं आपसे मिलकर आया हूँ। सीता माँ उनकी बात मान लेती हैं। तब वे अपने सिर में बँधी चूड़ामणि को उतारकर दे देती हैं। हनुमान जी ने प्रसन्नता से उसे ले लिया, उन्हें लगा कि बस अब प्रभु को ज्यादा समझाने की जरूरत नहीं पड़ेगी, इस चूड़ामणि से वे सब समझ जायेंगे।

प्रभु राम के लिये माँ सीता संदेश देती हैं

कहेहु तात अस मोर प्रनामा। सब प्रकार प्रभु पूरनकामा॥ 27.3॥
दीन दयाल बिरिदु संभारी। हरहु नाथ मम संकट भारी॥ 27.4॥
तात सक्रसुत कथा सुनाएहु। बान प्रताप प्रभुहि समुझाएहु॥ 27.5॥
मास दिवस महुँ नाथु न आवा। तौ पुनि मोहि जिअत नहिं पावा॥ 27.6॥

कहेहु तात अस मोर प्रनामा = हे तात! मेरा इस प्रकार से प्रणाम कहना, *सब प्रकार प्रभु पूरनकामा* = हे प्रभु! आप सब प्रकार से पूर्णकाम हैं, *दीन दयाल* = दीनों पर दया करने की, *बिरिदु* = प्रतिज्ञा ले रखी है, *संभारी* = मैं दीन हूँ, *हरहु नाथ मम संकट भारी* = हे नाथ! मेरे भारी संकट को दूर करें। *तात सक्रसुत कथा सुनाएहु* = हे तात, तुम इन्द्र के पुत्र की कथा सुनाना, *बान प्रताप प्रभुहि समुझाएहु* = प्रभु को उनके बाण का प्रताप याद दिलाना। *मास दिवस महुँ नाथु न आवा* = यदि एक माह के अंदर मेरे नाथ नहीं आयेंगे, *तौ पुनि मोहि* = तो फिर मुझे, *जिअत नहिं पावा* = जीता नहीं पायेंगे।

जैसे प्रभु राम ने संदेश भेजा था वैसे सीता जी भी संदेश भेजती हैं। सीता जी ने हाथ जोड़कर बताया कि इसी प्रकार से हाथ जोड़कर मेरा प्रणाम कहना। फिर कहना कि हे राम आप पूर्णकाम हैं। आपको कोई कामना नहीं है। आपने दीनों पर दया करने की प्रतिज्ञा ले रखी है। मैं भी इस समय दीन हूँ, मुझ पर

दया करें, मेरे बहुत भारी संकट को दूर करें। उन्हें इन्द्र के पुत्र जयंत की कथा सुनाकर याद दिलाना कि उनके बाण में कितनी शक्ति है। यदि एक माह के अंदर मेरे प्रभु नहीं आयेंगे तो फिर मुझे जीवित नहीं पायेंगे।

हनुमान जी सीता माँ को समझाकर लंका से प्रस्थान करते हैं

कहु कपि केहि बिधि राखौं प्राना। तुम्हहू तात कहत अब जाना॥ 27.7॥
तोहि देखि सीतलि भइ छाती। पुनि मो कहुँ सोइ दिनु सो राती॥ 27.8॥

जनकसुतहि समुझाइ करि बहु बिधि धीरजु दीन्ह।
चरन कमल सिरु नाइ कपि गवनु राम पहिं कीन्ह॥ दोहा 27॥

कहु कपि = हे हनुमान कहो, *केहि बिधि* = किस प्रकार, *राखौं प्राना* = प्राणों की रक्षा करूँ, *तुम्हहू तात* = तुम भी तात, *कहत अब जाना* = अब जाने को कह रहे हो। *तोहि देखि सीतलि भइ छाती* = तुम्हे देखकर छाती ठण्ढी हुई थी, *पुनि मो कहुँ सोइ दिनु सो राती* = मेरे लिये तो फिर वही दिन और वही रातें हैं। *जनकसुतहि समुझाइ करि* = सीता माँ को समझाकर, *बहु बिधि धीरजु दीन्ह* = बहुत प्रकार से धैर्य दिया। *चरन कमल सिरु नाइ कपि* = चरणों में प्रणाम कर, *गवनु राम पहिं कीन्ह* = जहाँ राम थे उस तरफ चल दिये।

सीता माँ कहती हैं कि बताओ अब धैर्य कैसे रखें? कैसे एक माह जियेंगे? तुम भी जाने को कह रहे हो। तुम आ गये थे तो तुम्हें देखकर थोड़ा संतोष हुआ था। अकेले थे, तुम्हें देखकर ठीक लगा, धैर्य बना। अब हमारे लिये उसी प्रकार दिन-रात बीतेगा। पुत्र हनुमान फिर सीता माँ को समझाते हैं कि आप धैर्य रखो। जैसे ही प्रभु को पता चलेगा वे शीघ्र आयेंगे, विलंब नहीं करेंगे। माँ के चरणों में सिर नवाकर प्रणाम करके हनुमान प्रभु राम के पास चल देते हैं।

लंका में गर्जना की, समुद्र पार कर वानरों से मिले, सब प्रसन्न

चलत महाधुनि गर्जेसि भारी। गर्भ स्रवहिं सुनि निसिचर नारी॥28.1॥
नाघि सिंधु एहि पारहि आवा। सबद किलिकिला कपिन्ह सुनावा॥28.2॥
हरषे सब बिलोकि हनुमाना। नूतन जन्म कपिन्ह तब जाना॥28.3॥

मुख प्रसन्न तन तेज बिराजा। कीन्हेसि रामचंद्र कर काजा॥ 28.4॥
मिले सकल अति भए सुखारी। तलफत मीन पाव जिमि बारी॥ 28.5॥

चलत महाधुनि गर्जेसि भारी = चलते समय भारी गर्जना की, *गर्भ स्त्रवहिं सुनि निसिचर नारी* = जिसे सुनकर राक्षसों की स्त्रियों के गर्भ गिरने लगे। *नाघि सिंधु* = समुद्र लांघकर, *एहि पारहि आवा* = इस पार आ गये, *सबद किलिकिला कपिन्ह सुनावा* = सबको किलकारी सुनायी। *हरषे सब बिलोकि हनुमाना* = सब हनुमान को देखकर हर्षित हो गये, *नूतन जन्म कपिन्ह तब जाना* = सब वानरों ने अपना नया जन्म जाना। *मुख प्रसन्न* = चेहरे में प्रसन्नता है, *तन तेज बिराजा* = शरीर में फुर्ती है, *कीन्हेसि रामचंद्र कर काजा* = रामचन्द्र का कार्य किया है। *मिले सकल अति भए सुखारी* = सब मिलकर बहुत सुखी हुए, *तलफत मीन* = तड़पती हुई मछली, *पाव जिमि बारी* = जिस प्रकार पानी पाकर प्रसन्न होती है।

चलते समय बहुत जोर से गर्जना करते हैं, जैसे विजय का उद्घोष हो। उनकी गर्जना सुनकर निशाचरों की गर्भवती स्त्रियों के गर्भ गिर गये। समुद्र को पारकर इस तरफ आ गये जहाँ अंगद आदि अन्य साथी उनका इंतजार कर रहे थे। अपने वानर स्वभाव के अनुसार किलकारी भरी। उन्हें देख सब प्रसन्न हो गये और समझे कि हमको नया जीवन प्राप्त हुआ है। हनुमान जी के मुख पर प्रसन्नता व तेज देखकर, बिना बताये ही सब समझ गये कि माँ सीता का पता चल गया है। सब लोग गले मिलते हैं। जिस प्रकार तड़पती हुई मछली पानी पाकर प्रसन्न होती है, उसी प्रकार वे सब अपने प्रिय हनुमान से मिलकर प्रसन्न हैं।

किष्किंधा पहुँच राजा सुग्रीव के पास संदेश भेजते हैं

चले हरषि रघुनायक पासा। पूँछत कहत नवल इतिहासा॥ 28.6॥
तब मधुबन भीतर सब आए। अंगद संमत मधु फल खाए॥ 28.7॥
रखवारे जब बरजन लागे। मुष्टि प्रहार हनत सब भागे॥ 28.8॥

जाइ पुकारे ते सब बन उजार जुबराज।
सुनि सुग्रीव हरष कपि करि आए प्रभु काज॥ दोहा 28॥









चले हरषि रघुनायक पासा = प्रसन्न होकर राम जी के पास चल दिये, *पूँछत कहत नवल इतिहासा* = नये-नये वृतांत कहते सुनते। *तब मधुबन भीतर सब आए* = किष्किंधा के मधुबन में पहुँच गये, *अंगद संमत मधु फल खाए* = अंगद की सहमति से मीठे फल खाये। *रखवारे जब बरजन लागे* = रक्षक जब मना करने लगे, *मुष्टि प्रहार हनत सब भागे* = तब घूँसों की मार से सब भाग गये। *जाइ पुकारे ते सब बन उजार जुबराज* = वे सब जाकर सुग्रीव से बताते हैं कि युवराज अंगद वन उजाड़ रहे हैं। *सुनि सुग्रीव हरष* = यह सुनकर सुग्रीव प्रसन्न हो गये, *कपि करि आए प्रभु काज* = उन्हें लगा कि प्रभु राम का काम करके वानर आ गये।

ये सब अब समुद्र के किनारे रुककर बातें नहीं करते हैं, तुरन्त चल देते हैं। रास्ते में नयी-नयी बातें लंका के बारे में पूछते जाते हैं, हनुमान जी विस्तार सहित सब बतलाते हैं। इस प्रकार बातें करते हुए वे किष्किंधा नगरी के बाहर मधुबन नाम के बगीचे तक पहुँचते हैं। अंगद ने अनुमति दी तो सबने खूब फल खाये। रखवाले जब कहने लगे, अरे सारे फल मत खाओ, तब उनको घूँसा मार भगा दिया। वे राजा सुग्रीव को खबर देते हैं कि युवराज अंगद खुद ही वन उजाड़ रहे हैं। संदेश सुनकर राजा सुग्रीव प्रसन्न हो गये। वे इस बात को समझ गये कि ये प्रभु श्रीराम का कार्य करके आये हैं, तभी वन में खुशी से उपद्रव कर रहे हैं। संदेश भेजने का वानरों का यह अनोखा तरीका है। यही तरीका हनुमान जी ने भी अपनाया था, अशोकवाटिका उजाड़ी, रक्षक जाकर रावण को संदेश दे आये।

राजा सुग्रीव से मिलकर वानर कार्य होने की सूचना देते हैं

जौं न होति सीता सुधि पाई। मधुबन के फल सकहिं कि खाई॥ 29.1॥
एहि बिधि मन बिचार कर राजा। आइ गए कपि सहित समाजा॥ 29.2॥
आइ सबन्हि नावा पद सीसा। मिलेउ सबन्हि अति प्रेम कपीसा॥ 29.3॥
पूँछी कुसल कुसल पद देखी। राम कृपाँ भा काजु बिसेषी॥ 29.4॥
नाथ काजु कीन्हेउ हनुमाना। राखे सकल कपिन्ह के प्राना॥ 29.5॥
सुनि सुग्रीव बहुरि तेहि मिलेऊ। कपिन्ह सहित रघुपति पहिं चलेऊ॥ 29.6॥

जौं न होति सीता सुधि पाई = यदि सीता जी का पता न लगाया होता, *मधुबन के फल सकहिं कि खाई* = मधुबन के फल ये लोग नहीं खा सकते

थे। *एहि बिधि* = इस प्रकार, *मन बिचार कर राजा* = राजा सुग्रीव मन में विचार कर रहे थे, *आइ गए कपि सहित समाजा* = इतने में वानर समाज आ गया। *आइ सबन्हि नावा पद सीसा* = सबने आकर प्रणाम किया, *मिलेउ सबन्हि अति प्रेम कपीसा* = सुग्रीव सबसे बड़े प्रेम से मिले। *पूँछी कुसल* = कुशलता पूछी, *कुसल पद देखी* = आपके चरण देख कर सब कुशल है, *राम कृपाँ भा काजु बिसेषी* = श्रीराम जी की कृपा से कार्य हो गया है। *नाथ काजु कीन्हेउ हनुमाना* = हे नाथ हनुमान जी ने कार्य किया है, *राखे सकल कपिन्ह के प्राना* = हम सब वानरों के प्राणों की रक्षा की है। *सुनि सुग्रीव बहुरि तेहि मिलेऊ* = यह सुनकर सुग्रीव जी हनुमान जी से फिर से मिलते हैं, *कपिन्ह सहित* = वानरों सहित, *रघुपति पहिं चलेऊ* = श्रीराम जी के पास चल दिये।

यहाँ पर वानरों के राजा सुग्रीव विचार कर ही रहे थे कि यदि सीता जी का पता न लगाये होते तो ये मधुबन के फल कैसे खा सकते थे, कि इतने में सब वानर समाज सुग्रीव के पास आ पहुँचा। सबने आकर प्रणाम किया। राजा सुग्रीव सबसे प्रेम से मिलकर कुशलता पूछते हैं। वानरों ने कहा कि आपके चरणों के दर्शन से सब कुशल हो गया, और राम जी की कृपा से सब काम हो गया। जाम्बवान् कहते हैं कि हे नाथ, हनुमान ने सब कार्य करके हम सब के प्राणों की रक्षा की है। यह समाचार मिलते साथ ही राजा सुग्रीव एक बार फिर हनुमान से मिलते हैं। फिर सुग्रीव उन लोगों को लेकर प्रवर्षण पर्वत की तरफ चल दिये जहाँ श्रीराम निवास कर रहे थे।

प्रभु राम के पास सब पहुँचे, श्रीराम सबसे प्रेम से मिले

राम कपिन्ह जब आवत देखा। किएँ काजु मन हरष बिसेषा॥ 29.7॥
फटिक सिला बैठे द्वौ भाई। परे सकल कपि चरनन्हि जाई॥ 29.8॥

प्रीति सहित सब भेटे रघुपति करुना पुंज।
पूँछी कुसल नाथ अब कुसल देखि पद कंज॥ दोहा 29॥

राम कपिन्ह जब आवत देखा = श्रीराम ने वानरों को आते देखा, *किएँ काजु* = ये कार्य करके आ रहे हैं, *मन हरष बिसेषा* = मन में बहुत हर्ष हुआ। *फटिक*

सिला बैठे द्वौ भाई = दोनों भाई स्फटिक के पत्थर पर बैठे थे। *परे सकल कपि चरनन्हि जाई* = सभी वानर चरणों में प्रणाम करते हैं।
प्रीति सहित सब भेटे रघुपति करुना पुंज = दया निधान श्रीराम जी सबसे बड़े प्रेम से मिले। *पूँछी कुसल* = सबसे कुशल पूछते हैं, *नाथ अब कुसल देखि पद कंज* = हे नाथ आपके चरणकमलों के दर्शन से सब कुशल है।

श्रीराम प्रवर्षण पर्वत पर निवास कर रहे थे। उन्होंने पर्वत से देखा कि वानर बड़ी प्रसन्नता से आ रहे हैं। प्रसन्नता देखकर प्रभु समझ गये कि कार्य पूरा हो गया है। श्रीराम पर्वत की गुफा में रहते थे। गुफा के बाहर स्फटिक का सफेद पत्थर था। उसी पर श्रीराम व लक्ष्मण बैठते थे। सब वानरों ने प्रभु श्रीराम के चरणों में प्रणाम किया। श्रीराम सबसे प्रेम से मिलकर उनको हृदय से लगाते हैं, फिर सबसे कुशलता पूछते हैं। वानरों ने कहा कि हे प्रभु, आपके चरण कमलों के दर्शन से सब कुशल है।

9. श्रीराम कृतज्ञ हो हनुमान जी को भक्ति का वरदान देते हैं

(दोहा 30 से दोहा 34)
हनुमान जी ने सब कार्य किया पर वे चुप रहते हैं। जाम्बवान् प्रभु राम को हनुमान जी द्वारा किये कार्यों का वर्णन करते हैं। श्रीराम जब उनसे पूछते हैं कि बताओ जानकी कैसे रहती हैं, कैसे प्राणों की रक्षा करती हैं, तब वे वहाँ का सारा हाल बताते हैं। तुलसीदास जी की काव्य कला देखने लायक है। वे कैसे जानकी माँ की दशा का वर्णन करते हैं। एक-एक शब्द की रचना पर ध्यान दें, मन भाव-विभोर हो जायेगा। श्रीराम हनुमान के प्रति कृतज्ञता व्यक्त कर अपने आप को ऋणी मान लेते हैं। तुरन्त हनुमान प्रभु के चरणों में लेट जाते हैं। प्रभु के चरण हैं, हनुमान का सिर है, प्रभु उनके सिर पर हाथ फेर रहे हैं। कथा का यह स्थान इतना महत्त्वपूर्ण है कि शंकर जी को यहाँ पर कथा रोकनी पड़ जाती है। वे कथा सुनाते-सुनाते उस स्थिति में पहुँच जाते हैं जब वे हनुमान बने थे। प्रभु राम के प्रेम में मग्न हो जाते हैं, मन को स्थिर कर फिर से कथा आगे बढ़ाते हैं। हनुमान भक्ति का वरदान माँगकर अपने प्रभु को ऋणमुक्त कर देते हैं। इस प्रसंग को सुनने, पाठ करने से श्रीराम के चरणों में प्रेम उत्पन्न हो जाता है। यह बात शंकर जी स्वयं पार्वती जी से कहते हैं।

जाम्बवान् कहते हैं, जिस पर राम कृपा है वही विजयी, विनयी है

जामवंत कह सुनु रघुराया। जा पर नाथ करहु तुम्ह दाया॥ 30.1 ॥
ताहि सदा सुभ कुसल निरंतर। सुर नर मुनि प्रसन्न ता ऊपर॥ 30.2 ॥
सोइ बिजई बिनई गुन सागर। तासु सुजसु त्रैलोक उजागर॥ 30.3 ॥

जामवंत कह सुनु रघुराया = जाम्बवान् जी कहते हैं, हे रघुबीर, *जा पर नाथ करहु तुम्ह दाया* = जिस पर हे प्रभो आप दया कर दें। *ताहि सदा सुभ कुसल निरंतर* = उसका सदा कल्याण व सदा कुशल है, *सुर नर मुनि प्रसन्न ता ऊपर* = उस पर देवता, मनुष्य, मुनि सब प्रसन्न रहते हैं। *सोइ बिजई बिनई गुन सागर* = वही विजयी होता है, उसी में विनम्रता आती है और सब गुण आ जाते हैं, *तासु सुजसु त्रैलोक उजागर* = उसका यश तीनों लोकों में फैल जाता है।

वानरों के राजा सुग्रीव हैं, पर उम्र व अनुभव में सबसे बड़े जाम्बवान् हैं, इसलिये प्रभु राम द्वारा कुशल पूछने पर वे ही बोलते हैं। हनुमान जी सहित सब चुप हैं। वे कहते हैं कि हे रघुनाथ, जिसके ऊपर आप कृपा करें उसका तो सदा कुशल-मंगल है ही। जिस पर आपकी कृपा हो उस पर देवता, मनुष्य व मुनि सभी प्रसन्न रहते हैं। उसी को विजय प्राप्त होती है, उसमें विनम्रता आती है, उसी के अंदर सारे गुण आ जाते हैं। तीनों लोकों में उसका यश भी होता है।

अभी जाम्बवान् जी हनुमान जी का नाम नहीं ले रहे हैं, सिद्धांत की बात कह रहे हैं। राम कृपा कैसे मिले, इस पर हमें भी विचार करना चाहिये।

जाम्बवान् कहते हैं कि हनुमान जी ने सब कार्य किया है

प्रभु कीं कृपा भयउ सबु काजू। जन्म हमार सुफल भा आजू॥ 30.4 ॥
नाथ पवनसुत कीन्हि जो करनी। सहसहुँ मुख न जाइ सो बरनी॥ 30.5 ॥
पवनतनय के चरित सुहाए। जामवंत रघुपतिहि सुनाए॥ 30.6 ॥

प्रभु कीं कृपा भयउ सबु काजू = आपकी कृपा से सब कार्य पूरा हो गया, *जन्म हमार सुफल भा आजू* = हमारा जन्म आज सफल हो गया। *नाथ पवनसुत कीन्हि जो करनी* = हे प्रभु, हनुमान जी ने जो कार्य किया है, *सहसहुँ मुख न जाइ सो बरनी* = उसका वर्णन हजार मुख से भी नहीं किया जा सकता

है। *पवनतनय के चरित सुहाए* = श्रीहनुमान के सुंदर चरित्रों को, *जामवंत रघुपतिहि सुनाए* = जाम्बवान् जी ने रघुनाथ जी को सुनाया।

जाम्बवंत कहते हैं, 'आपकी कृपा से सब कार्य हो गया है। सीता जी का पता लग गया। हम सबका जन्म सफल हो गया है।' अब जाम्बवान् हनुमान जी का नाम लेते हैं। कहते हैं कि हनुमान के चरित्र बहुत सुंदर हैं, इनके कार्यों को हजार मुख से भी वर्णन नहीं किया जा सकता। समुद्र पार करना, लंका में प्रवेश, विभीषण से मिलना, सीता जी से मिलना, बाँधा जाना, रावण से मिलना, लंका में आग लगाना, फिर सीता जी से मिलते हुए वापस आना, ये सारी बातें हनुमान जी ने रास्ते में बतायी थीं। वही सब बातें जाम्बवान् श्रीराम को बताते हैं। हनुमान जी ने अपने मुख से नहीं कहा कि हमने ऐसा किया है। वे अभी भी चुप हैं।

श्रीराम ने हनुमान को हृदय से लगाया, सीता जी का कुशल पूछा

सुनत कृपानिधि मन अति भाए। पुनि हनुमान हरषि हियँ लाए॥30.7॥
कहहु तात केहि भाँति जानकी। रहति करति रच्छा स्वप्रान की॥30.8॥

सुनत = हनुमान के चरित्र सुनकर, *कृपानिधि मन* = कृपानिधान श्रीराम के मन को, *अति भाए* = अच्छे लगे। *पुनि हनुमान हरषि हियँ लाए* = फिर हनुमान जी को हर्षित होकर गले से लगा लिया। *कहहु तात* = हे तात हनुमान बताओ, *केहि भाँति जानकी* = किस प्रकार से सीता, *रहति* = रहती हैं, *करति रच्छा स्वप्रान की* = अपने प्राणों की रक्षा करती हैं।

हनुमान के चरित्र सुनकर श्रीराम को बहुत अच्छा लगा। फिर राम जी ने हनुमान जी को अपने हृदय से लगा लिया। हृदय से लगाना मायने उनका विशेष सम्मान करना। हनुमान जी भी बहुत प्रसन्न हैं। अब श्रीराम हनुमान जी से सीधे पूछते हैं, सीता का पता तो चल गया, यह बताओ कि वहाँ निशाचरों के बीच में वे कैसे रह पाती हैं? उनका समय वहाँ कैसे व्यतीत होता है? वे अपने जीवन की रक्षा कैसे करती हैं? निशाचरों के बीच में रहकर वे अपने जीवन को कैसे चला सकीं?

राम पहरेदार, ध्यान बंद दरवाजा, एकाग्रता ताला, प्राण कैसे निकलें?

नाम पाहरू दिवस निसि ध्यान तुम्हार कपाट।
लोचन निज पद जंत्रित जाहिं प्रान केहिं बाट॥ दोहा 30॥

नाम = आपका राम नाम, *पाहरू* = पहरेदार है, *दिवस निसि* = रात दिन पहरा देता है, *ध्यान तुम्हार* = आपका ध्यान, *कपाट* = दरवाजा है, *लोचन निज पद* = सीता जी की आँखें अपने पैर की तरफ रहती हैं, *जंत्रित* = ताला है, *जाहिं प्रान केहिं बाट* = अब उनके प्राण किस रास्ते से निकलें?

हनुमान जी के सुंदर उत्तर को तुलसीदास जी बड़े ही काव्यात्मक ढंग से एक दोहे में प्रस्तुत करते हैं, जिसमें ज्ञान, भक्ति सबका वर्णन है। हनुमान जी कहते हैं, आपका राम नाम पहरेदार की तरह है। सीता जी दिन-रात राम-राम कहती हैं। रा और म दो पहरेदार की तरह खड़े रहते हैं। दिन-रात आपका ध्यान करती हैं जिससे दरवाजा बंद रहता है। दिन-रात अपने चरणों की तरफ देखती रहती हैं, सिर उठाकर ऊपर नहीं देखतीं। यह उस दरवाजे पर बंद ताले का काम करता है। इस प्रकार हनुमान जी कहते हैं कि सीता जी शरीर रूपी घर में हैं, घर का दरवाजा बंद है, बंद दरवाजे में ताला लगा है और दो चौकीदार सदा पहरा देते हैं। अब सीता जी के प्राण शरीर से निकलेंगे तो किस रास्ते से निकलेंगे? शरीर के बाहर इतना मजबूत सुरक्षा कवच उन्होंने बना रखा है।

भक्ति, ज्ञान, बंध – योग का सुंदर वर्णन

माँ सीता राम-राम जपती हैं, यह भक्ति योग हो गया। भगवान को हृदय में ढूँढना, उनके निकट रहने का प्रयास करना, उनके बारे में चिंतन करना ज्ञान योग हो गया। नेत्रों को अपने चरणों में लगाये रखना, एकटक नीचे की ओर देखते रहना बंध हो गया।

सीता जी की निशानी राम जी हृदय से लगाते हैं

चलत मोहि चूड़ामनि दीन्ही। रघुपति हृदयँ लाइ सोइ लीन्ही॥ 31.1॥

चलत = चलते समय, *मोहि* = मुझे, *चूड़ामनि दीन्ही* = चूड़ामणि दिया है, *रघुपति हृदयँ लाइ सोइ लीन्ही* = राम जी ने उस चूड़ामणि को लेकर हृदय से लगा लिया ।

हनुमान जी ने कहा कि जैसे आपने निशानी के लिये अँगूठी दी थी वैसे ही निशानी हमने माँगी, तो सीता जी ने यह चूड़ामणि उतारकर दी है। श्रीराम ने वह चूड़ामणि लेकर उसे अपने हृदय से लगा लिया। प्रिय व्यक्ति की दी हुई वस्तु भी प्रिय होती है।

सीता जी का संदेश–चरणों में प्रणाम, मुझे क्यों त्यागा?

नाथ जुगल लोचन भरि बारी। बचन कहे कछु जनककुमारी॥ 31.2॥
अनुज समेत गहेहु प्रभु चरना। दीन बंधु प्रनतारित हरना॥ 31.3॥
मन क्रम बचन चरन अनुरागी। केहिं अपराध नाथ हौं त्यागी॥ 31.4॥

नाथ = हे नाथ, *जुगल लोचन* = दोनो आँखों मे, *भरि बारी* = जल भरकर, *बचन कहे कछु जनककुमारी* = जनककुमारी ने कुछ वचन कहे हैं। *अनुज समेत* = छोटे भाई लक्ष्मण सहित, *गहेहु प्रभु चरना* = श्रीराम के चरण पकड़कर कहना, *दीन बंधु* = कि आप दीनों पर दया करने वाले, *प्रनतारित हरना* = शरण में आये व्यक्ति के दु:खों को दूर करने वाले हैं, *मन क्रम बचन चरन अनुरागी* = मैं मन से, वचन से व कर्म से आपके ही चरणों की अनुरागी हूँ, *केहिं अपराध नाथ हौं त्यागी* = किस अपराध के कारण मेरे प्रभु ने मुझे त्यागा है।

सीता जी ने जब संदेश दिया था तब कुछ पंक्तियाँ तुलसीदास जी ने वहाँ बता दी थीं। कुछ हनुमान जी यहाँ बता रहे हैं, दोनो मिलाकर पूरा संदेश होता है। हनुमान जी कहते हैं कि माँ सीता ने दोनो आँखों में अश्रु भरकर आपके लिये कुछ बातें कही हैं। छोटे भाई लक्ष्मण को प्रणाम कहना व प्रभु राम के चरण पकड़कर प्रणाम कहना। प्रभु राम, आप तो दीनबंधु हैं, आपकी शरण में जो आता है, आप उसके दु:खों को दूर करते हैं। मैं मन, वचन और कर्म से आपकी शरण में हूँ, पता नहीं किस अपराध के लिये प्रभु ने मुझे त्याग दिया है?

यहाँ पर त्याग से आशय है कि रावण हमें ले आया और श्रीराम ने हमें छुड़ाया नहीं। प्रभु तो सर्वसमर्थ हैं, वे हमें वहाँ से जाने ही न देते। लक्ष्मण जी से प्रणाम का आशय उनसे माफी माँगना है। सीता जी ने ही लक्ष्मण जी को कटु वचन कहकर राम के पास भेजा था, उसी का पश्चात्ताप कर रही हैं।

नेत्रों का अपराध है कि वे वियोग में प्राण नहीं निकलने देते

अवगुन एक मोर मैं माना। बिछुरत प्रान न कीन्ह पयाना॥ 31.5॥
नाथ सो नयनन्हि को अपराधा। निसरत प्रान करहिं हठि बाधा॥ 31.6॥
बिरह अगिनि तनु तूल समीरा। स्वास जरइ छन माहिं सरीरा॥ 31.7॥
नयन स्त्रवहिं जलु निज हित लागी। जरैं न पाव देह बिरहागी॥ 31.8॥

अवगुन एक मोर मैं माना = मैं अपना एक दोष मानती हूँ, *बिछुरत* = आपसे बिछुड़ते समय, *प्रान न कीन्ह पयाना* = मेरे प्राण नहीं निकले। *नाथ सो नयनन्हि को अपराधा* = हे नाथ, यह तो नेत्रों का अपराध है, *निसरत प्रान* = जो प्राणों को निकलने में, *करहिं हठि बाधा* = हठपूर्वक बाधा करते हैं। *बिरह अगिनि* = वियोग अग्नि है, *तनु तूल* = शरीर रूई है, *समीरा स्वास* = श्वास वायु है, *जरइ छन माहिं सरीरा* = इस प्रकार अग्नि व पवन मिल करके शरीर को क्षण भर में ही जला सकते हैं। *नयन स्त्रवहिं जलु* = पर नेत्र अश्रु बहा देते हैं, *निज हित लागी* = अपने हित के लिये, *जरैं न पाव देह* = यह शरीर जल नहीं पाता, *बिरहागी* = विरह की अग्नि में।

सीता जी कहती हैं, हाँ हम मानते हैं कि हमने एक गलती की है। प्रभु राम के वियोग में हमें प्राण त्याग देने थे, पर हमारे प्राण नहीं निकले। पर हम क्या करें? यह तो नेत्रों का अपराध है जो आपका दर्शन करना चाहते हैं। इसलिये जैसे ही प्राण निकलना चाहते हैं, ये नेत्र उसमें बाधा डाल देते हैं। कैसे बाधा डालते हैं, इसे भी संदेश में समझाती हैं। राम के वियोग का दु:ख अग्नि है, शरीर रूई की तरह है और श्वास पवन के समान है। जैसे रूई में आग लगा दो तो वह वायु की सहायता से तुरन्त जल जायेगी, वैसे ही विरह की अग्नि में श्वास रूपी वायु की सहायता से यह शरीर फर-फर कर जल जाए, लेकिन नेत्र अपने स्वार्थ के लिये आँसू बहाते रहते हैं, जिससे शरीर में लगी आग बुझ जाती है। यह शरीर जल नहीं पाता, प्राण निकल नहीं पाते। नेत्र श्रीराम के दर्शन चाहते हैं।

संकट बड़ा है, सीता जी को लेने तुरन्त चलिये

सीता कै अति बिपति बिसाला। बिनहिं कहें भलि दीनदयाला॥ 31.9॥

निमिष निमिष करुनानिधि जाहिं कलप सम बीति।
बेगि चलिअ प्रभु आनिअ भुज बल खल दल जीति॥ दोहा 31॥

सीता कै अति बिपति बिसाला = सीता जी की विपत्ति बहुत बड़ी है, *बिनहिं कहें भलि दीनदयाला* = हे दीनदयाल, वह बिना कहे ही ठीक है।
निमिष निमिष = एक-एक पल, *करुनानिधि* = हे करुनानिधान, *जाहिं कलप सम बीति* = एक-एक कल्प के समान व्यतीत हो रहा है, *बेगि चलिअ प्रभु* = प्रभु जल्दी चलिये, *आनिअ* = सीता जी को ले आइये, *भुज बल* = भुजाओं के बल से, *खल दल जीति* = दुष्टों के दल को जीतकर।

हनुमान जी कहते हैं कि सीता जी की विपत्ति बहुत विशाल है। उसका वर्णन कहाँ तक करें, न करने में ही अच्छा है। वहाँ एक-एक क्षण एक-एक कल्प के समान व्यतीत हो रहा है। प्रभु जल्दी चलना चाहिये, अपनी भुजाओं के बल से राक्षसों के समूह का विध्वंस करके सीता जी को लाना चाहिये। इस प्रकार हनुमान जी ने सीता जी का समस्त भाव जैसा था सुना दिया।

भगवान तक पहुँचने के लिय मध्यस्थ की जरूरत

सीध-सीधे कोई भगवान को नहीं प्राप्त कर सकता। उसके लिये मध्यस्थ की जरूरत पड़ती है, जो गुरु कहलाते हैं। गुरु भक्त को भगवान से मिला देते हैं। एक ओर भक्त, दूसरी ओर ईश्वर और तीसरी ओर गुरु होते हैं। यहाँ पर सीता जी भक्त हैं, राम जी भगवान हैं, हनुमान जी गुरु हैं। सीता जी को फिर से राम तक पहुँचाने में मध्यस्थ का काम हनुमान जी करते हैं। वे राम जी को प्रेरित करते हैं कि सीता जी आपकी शरण में हैं, उनको अपना लो। उधर सीता जी को समझाते हैं कि धैर्य रखो, प्रभु का स्मरण करते रहो, वे अवश्य आयेंगे।

सीता जी का दुःख सुनकर राम जी द्रवित हो जाते हैं

सुनि सीता दुख प्रभु सुख अयना। भरि आए जल राजिव नयना॥ 32.1 ॥
बचन कायँ मन मम गति जाही। सपनेहुँ बूझिअ बिपति कि ताही॥ 32.2 ॥

सुनि सीता दुख = सीता जी का दु:ख सुनकर, *प्रभु सुख अयना* = सुख के धाम श्रीराम के, *भरि आए जल* = जल भर आया यानि अश्रु आ गये, *राजिव नयना* = कमल के समान नेत्रों में। *बचन कायँ मन* = मन, वाणी व कर्म से, *मम गति जाही* = जो मेरे ही प्रति समर्पित है, *सपनेहुँ बूझिअ बिपति कि ताही* = उसे स्वप्न में भी विपत्ति कहाँ हो सकती है।

जब सीता जी के दु:ख को प्रभु राम ने सुना तो उनके कमल जैसे नेत्रों में जल भर आया, मायने वे दु:खी हो गये। परंतु वे स्वयं सुख अयना मायने सुख के समुद्र हैं, आनंद सिंधु हैं। जब उनके भक्त को दु:ख होता है तब भगवान के हृदय में करुणा उत्पन्न होती है। यहाँ पर दु:ख का मतलब करुणा है। करुणा उत्पन्न होने पर भगवान भक्त के दु:ख दूर करते हैं। करुणा में भी आँसू आ जाते हैं। राम जी कहते हैं, जो मन, वाणी व कर्म से मेरे प्रति समर्पित है उसको स्वप्न में भी विपत्ति नहीं हो सकती है। सीता जी को विपत्ति नहीं हो सकती यदि उन्हें हमारा स्मरण है, हमारा ध्यान करती हैं, बस उन्हें वहाँ से लाना है।

हनुमान जी कहते हैं–विपत्ति तभी जब राम स्मरण न करें

कह हनुमंत विपति प्रभु सोई। जब तव सुमिरन भजन न होई॥ 32.3॥
केतिक बात प्रभु जातुधान की। रिपुहि जीति आनिबी जानकी॥ 32.4॥

कह हनुमंत = हनुमान जी कहते हैं, *विपति प्रभु सोई* = विपत्ति तो तभी है, *जब तव सुमिरन भजन न होई* = जब आपका स्मरण व भजन न हो। *केतिक बात प्रभु जातुधान की* = राक्षसों की बात ही क्या है, *रिपुहि जीति आनिबी जानकी* = शत्रु को जीतकर जानकी जी को ले आयेंगे।

हनुमान जी कहते हैं कि विपत्ति तो तब होती है, जब प्राणी आपको भूल जाए, आपका स्मरण नहीं करे, राम नाम नहीं ले। व्यक्ति जब भगवान को भूलता है तभी विपत्ति आती है। इन राक्षसों को जीतना कोई बड़ी बात नहीं है। इन्हें जीतकर जानकी जी को ले आयेंगे। ध्यान रखें, भगवान का स्मरण करने वाले को भी विपत्तियाँ आती रहती हैं, पर वे उसको प्रभावित नहीं करतीं। जबकि स्मरण न करने वालों को छोटी-सी बाधा भी बड़ी लगती है।

राम जी कहते हैं, हनुमान मैं तुम्हारा प्रति-उपकार कैसे करूँ?

सुनु कपि तोहि समान उपकारी। नहिं कोउ सुर नर मुनि तनुधारी॥ 32.5॥
प्रति उपकार करौं का तोरा। सनमुख होइ न सकत मन मोरा॥ 32.6॥

सुनु कपि = हे हनुमान जी सुनो, *तोहि समान उपकारी* = तुम्हारे समान उपकारी, *नहिं कोउ सुर नर मुनि तनुधारी* = देवताओं, मनुष्यों, मुनियों या

अन्य शरीरधारियों में से कोई नहीं हैं। *प्रति उपकार करौं का तोरा* = मैं तुम्हारे उपकार के बदले में क्या उपकार करूँ, *सनमुख होइ न सकत मन मोरा* = मेरा मन भी तुम्हारे सामने नहीं हो सकता।

हे हनुमान, मनुष्यों, देवताओं या मुनियों में कोई भी तुम्हारे समान उपकारी नहीं है। हम तुम्हारे प्रति क्या उपकार करें? जब कोई संकट में पड़े और हम उसकी सहायता करें तो वह उपकार कहलाता है। जब हम संकट में हों, वह हमारी सहायता कर दे तो वह प्रति-उपकार कहलाता है। यदि कोइ संकट में पड़े ही नहीं, उस पर संकट आने वाला हो ही नहीं, तो प्रति-उपकार कैसे करोगे उसका? नहीं कर सकते। प्रभु राम को लगा कि हमारा हनुमान तो भक्त, ज्ञानी व सेवक है, इसके जीवन में कभी कोई संकट आ ही नहीं सकता। तब इसका उपकार कैसे किया जाये? वे सोचते हैं कि हनुमान को ऐसी क्या कमी है जिसे दूर करके हम उसका प्रति-उपकार कर दें। उन्हें कोई ऐसी कमी नहीं मिलती। अंत में वे कहते हैं, हे कपि हम तुम्हारा सामना नहीं कर सकते।

हनुमान को राम अपना पुत्र मानकर कहते हैं – मैं सदैव ऋणी रहूँगा

सुनु सुत तोहि उरिन मैं नाहीं। देखेउँ करि बिचार मन माहीं॥ 32.7॥

सुनु सुत = हे पुत्र सुनो, *तोहि उरिन मैं नाहीं* = मैं तुमसे उरिन नहीं हो सकता, *देखेउँ करि बिचार मन माहीं* = यह मैंने मन में विचार करके देख लिया है।

प्रभु राम हनुमान को पुत्र कहकर संबोधित करते हैं। जब सीता माँ ने हनुमान को अपना पुत्र मान लिया तो यहाँ राम भी अपना पुत्र मान लेते हैं। श्रीराम को लगता है कि हम प्रति-उपकार नहीं कर पायेंगे तो सदैव हनुमान के ऋणी बने रहेंगे। वे कहते हैं – हे सुत सुनो, मैंने मन में विचार करके देख लिया है, मैं तुमसे उरिन नहीं हो सकता हूँ। मैं सदैव तुम्हारा ऋणी रहूँगा। इस प्रकार राम हनुमान के सामने कृतज्ञता प्रकट करते हैं।

अश्रु भरी आँखों से प्रभु राम हनुमान की ओर देखते हैं

पुनि पुनि कपिहि चितव सुरत्राता। लोचन नीर पुलक अति गाता॥ 32.8॥

पुनि पुनि = बार-बार, *कपिहि* = हनुमान की तरफ, *चितव सुरत्राता* = देवताओं के रक्षक राम देख रहे हैं, *लोचन नीर* = नेत्रों में अश्रु हैं, *पुलक अति गाता* = शरीर बहुत पुलकित है।

सुरत्राता यानि देवताओं की रक्षा करने वाले राम। सुर का अर्थ सद्‌गुण भी होता है तो सुरत्राता मायने सद्‌गुणों की रक्षा करने वाले राम। वे बार-बार हनुमान की तरफ देखते हैं। प्रभु राम पुलकित शरीर व अश्रु भरे नेत्रों से बार-बार हनुमान की तरफ इस प्रकार देखते हैं जैसे कृतज्ञ या ऋणी व्यक्ति देखता है।

हनुमान के लिये यह बहुत बड़ी उपलब्धि

प्रभु राम का बार-बार हनुमान की तरफ देखना बड़ी बात है। सब देवता, ऋषि, मुनि श्रीराम से प्रार्थना करते रहते हैं कि हे प्रभु, *मामवलोकय* अर्थात् मेरी तरफ अवलोकन करिये, मेरी तरफ देखिये। श्रीराम की दृष्टि पड़ने का मतलब है कि उसका उद्धार हो गया, उसके सारे संकट दूर हो गये, उसकी समस्यायें समाप्त हो गयीं। यहाँ प्रभु राम बिना कहे स्वयं अपनी दृष्टि डाल रहे हैं, यह हनुमान जी के लिये बहुत बड़ी उपलब्धि है।

प्रभु राम के चरणों में गिरकर हनुमान कहते हैं – रक्षा करो

सुनि प्रभु बचन बिलोकि मुख गात हरषि हनुमंत।
चरन परेउ प्रेमाकुल त्राहि त्राहि भगवंत।। दोहा 32 ।।

सुनि प्रभु बचन = प्रभु के वचन सुनकर, *बिलोकि मुख* = उनके मुख को देखकर, *गात हरषि हनुमंत* = हनुमान हर्षित हो गये। *चरन परेउ* = चरणों में अपना सिर रख दिया, *प्रेमाकुल* = प्रेम से भरकर बोले, *त्राहि त्राहि भगवंत* = हे भगवान रक्षा करो, रक्षा करो।

हनुमान ने देखा कि हमारे प्रभु के कैसे भाव हैं, कैसा बोल रहे हैं, कैसी कृतज्ञता की बातें कर रहे हैं, कैसे ऋणी होने, प्रति-उपकार न कर पाने का भाव व्यक्त कर रहे हैं। अपने प्रभु राम के मुख की तरफ भी देखा कि उनकी दृष्टि हमारे ऊपर ही पड़ रही है। मुख देखकर यह भी लगा कि वे अपने आप को कृतज्ञ मान रहे हैं। अपने से ज्यादा हमें स्थान दे रहे हैं, हमको

बहुत बड़ा बता रहे हैं। मानो हम ऋण देने वाले हो गये और प्रभु ऋण लेने वाले हो गये। मेरे प्रभु स्वयं अपने को छोटा अनुभव कर रहे हैं, मेरी इतनी प्रशंसा कर रहे हैं, जैसे मैं इनसे बड़ा हो गया हूँ। यह सब देख-सुनकर हनुमान जी का शरीर पुलकित हो गया, वे हर्षित हो गये। उन्हें उसी समय लगा कि कहीं अहंकार न आ जाये। हनुमान अपने प्रभु की कृपा प्राप्त करके प्रेम से परिपूर्ण होकर श्री राम के चरणों में पड़कर कहने लगे, हे भगवन् रक्षा करो, रक्षा करो। मायने अहंकार से मेरी रक्षा करो, रक्षा करो।

अहंकार चोर की तरह आता है, हनुमान जी जाग रहे हैं

जिसके सामने भगवान भी कृतज्ञता प्रकट करने लगें, अगर उसे अहंकार नहीं आयेगा तो दुनिया में किसे आयेगा? भगवान की एक विशेषता है कि उन्हें दीनता प्रिय लगती है, जबकि अहंकार अप्रिय लगता है। अहंकार चोर है, तस्कर है, यह बात सभी शास्त्रों में कही गयी है। जब हम सोते रहते हैं तो चोर घुस आता है, सब तहस-नहस कर देता है। इसलिये सदैव जागते रहो, भगवान का स्मरण करते रहो। हनुमान जी जाग रहे हैं, लापरवाही नहीं बरत रहे हैं, इसलिये वे श्रीराम के चरणों में पड़कर कहते हैं, रक्षा करो, रक्षा करो।

प्रभु राम हनुमान को चरणों से उठाते हैं, पर वे उठते नहीं

बार बार प्रभु चहइ उठावा। प्रेम मगन तेहि उठब न भावा॥ 33.1 ॥

बार बार प्रभु चहइ उठावा = प्रभु राम बार-बार हनुमान को उठाना चाहते हैं, *प्रेम मगन तेहि उठब न भावा* = परंतु प्रेम में डूबे हनुमान को उठने का मन नहीं होता है।

हनुमान ने अपना सिर प्रभु राम के चरणों में रख दिया। बार-बार प्रभु उन्हें उठाना चाहते हैं, उठाकर हृदय से लगाना चाहते हैं पर हनुमान उठते नहीं। उनके हृदय में अपने प्रभु के प्रति इतना प्रेम व कृतज्ञता भाव जागृत हो गया कि उनको उठना अच्छा नहीं लगता। उन्हें लगता है कि बस इनके चरण पकड़े रहो, इसी में अपनी कुशलता है। प्रभु राम हनुमान के सिर के ऊपर अपना हाथ फेरते रहे, पर उठा नहीं पाये।

शंकर जी उस दशा का स्मरण कर मग्न हो गये

प्रभु कर पंकज कपि कें सीसा। सुमिरि सो दसा मगन गौरीसा॥ 33.2॥

प्रभु कर पंकज = प्रभु का कमल के समान हाथ, *कपि कें सीसा* = हनुमान के सिर पर है, *सुमिरि सो दसा* = उस दशा का स्मरण करके, *मगन गौरीसा* = शंकर जी मग्न हो जाते हैं।

इस प्रसंग को ध्यान से समझना चाहिये। यह विशेष स्थल है। इस समय शंकर जी माँ पार्वती को कथा सुना रहे हैं। वे किसी समय हनुमान बने हुए थे, प्रभु राम के चरणों मे सिर रखे पड़े हुए थे। जीवन में जब कोई घटना घटित होती है, वही स्मरण आती है। शंकर जी को वही अनुभूति फिर से होने लगी, वही मगनता आ गयी जो हनुमान जी को हो रही थी, वे उस स्मृति में खो गए।

कथा का रुकना भी उसकी सुंदरता ही है

सावधान मन करि पुनि संकर। लागे कहन कथा अति सुंदर॥ 33.3॥

सावधान मन करि = मन को सावधान करके, *पुनि संकर* = फिर शंकर जी , *लागे कहन कथा अति सुंदर* = अत्यंत सुंदर कथा कहने लगे।

जब शंकर जी स्मृति में खो गये तो कथा रुक गयी। रामचरितमानस में शंकर जी कथा सुनाते-सुनाते ऐसे प्रेम में मग्न हो जायें कि कथा बंद हो जाये, ऐसी घटना कहीं नहीं आयी। भगवान शिव सोचने लगे कि शंकर रूप में हम अपने प्रभु राम का स्मरण करते रहते हैं पर वैसी कृपा प्राप्त नहीं हुई जैसी हमें हनुमान रूप में प्राप्त हुई थी। इससे सुंदर और क्या बात हो सकती है कि कोई भगवान के चरणों में पड़ जाये, उसे भगवान की कृपा प्राप्त हो जाये, बस फिर क्या कहना! शंकर जी ने अपने मन को सावधान किया, स्मृति से बाहर आये और आगे की कथा सुनाने लगे।

श्रीराम ने हनुमान को उठाकर हृदय से लगाया और पास में बैठाया

कपि उठाइ प्रभु हृदयँ लगावा। कर गहि परम निकट बैठावा॥ 33.4॥

कपि उठाइ = हनुमान को उठाकर, *प्रभु हृदयँ लगावा* = प्रभु राम ने हृदय से लगा लिया, *कर गहि* = हाथ पकड़कर, *परम निकट बैठावा* = अपने अत्यंत नजदीक बैठा लिया।

अंत में प्रभु राम ने हनुमान जी को उठा ही लिया, और अपने हृदय से लगा लिया। उनका हाथ पकड़कर अपने बहुत नजदीक बैठा लिया। श्रीराम स्फटिक शिला पर बैठे थे, उसी पर हनुमान जी को अपने से सटाकर बैठा लिया। श्रीराम ने समय-समय पर निषाद, भरत जी, लक्ष्मण जी को भी हृदय से लगाया है, और अपने पास बैठाया है, पर परम निकट हनुमान जी को ही बैठाया। ऐसा प्रसंग कहीं नहीं है।

राम जी पूछते हैं, तुमने मजबूत लंका को कैसे जला दिया?

कहु कपि रावन पालित लंका। केहि बिधि दहेउ दुर्ग अति बंका॥ 33.5॥

कहु कपि = हे कपि बताओ तो, *रावन पालित लंका* = रावण की इतनी सुरक्षित लंका को, *केहि बिधि* = किस प्रकार, *दहेउ दुर्ग अति बंका* = इतने मजबूत दुर्ग को जला दिया।

श्रीराम हनुमान को अपने निकट बैठाकर पूछते हैं कि रावण की तो बहुत सुरक्षित लंका है, बड़ी अटपटी नगरी है, बहुत टेढ़ा-मेढ़ा दुर्ग है, तुमने उसमें प्रवेश करके उसे जला कैसे दिया? अभी-अभी जाम्बवान् ने सब बताया ही था, पर अब श्रीराम हनुमान के मुख से कहलवाना चाहते हैं। वे एक तरह से प्रशंसा करने के लिये ही पूछ रहे हैं।

अहंकार का पौधा प्रशंसा करने से बढ़ता है

जैसे कोई छोटा-सा पौधा हो, उसमें खाद-पानी डालो तो वह बढ़ता जायेगा, वैसे ही अगर मन में अहंकार का अंकुर फुदक आया है तो वह प्रशंसा से बढ़ता जाता है। यदि उसकी प्रशंसा करो, जय-जयकार करो, बार-बार धन्यवाद दो तो अहंकार फटाफट बढ़ता जाता है। प्रभु भी अपने प्रिय हनुमान की प्रशंसा करके देखते हैं कि वहाँ अहंकार जैसा कुछ है कि नहीं।

हनुमान जी कहते हैं, प्रभु मैं ठहरा वानर, सब आपका ही प्रताप है

प्रभु प्रसन्न जाना हनुमाना। बोला बचन बिगत अभिमाना॥33.6॥
साखामृग कै बड़ि मनुसाई। साखा तें साखा पर जाई॥33.7॥
नाघि सिंधु हाटकपुर जारा। निसिचर गन बधि बिपिन उजारा॥33.8॥
सो सब तव प्रताप रघुराई। नाथ न कछु मोरि प्रभुताई॥33.9॥

प्रभु प्रसन्न जाना हनुमाना = हनुमान समझ गये कि प्रभु प्रसन्न हैं, *बोला बचन बिगत अभिमाना* = अभिमान त्याग कर बोले। *साखामृग कै बड़ि मनुसाई* = डाल के पशु यानि वानर का यही बड़ा पुरुषार्थ है, *साखा तें साखा पर जाई* = कि वह एक डाल से कूदकर दूसरी डाल में पहुँच जाता है। *नाघि सिंधु* = समुद्र को पार किया, *हाटकपुर जारा* = सोने का नगर जलाया, *निसिचर गन बधि* = राक्षसों के समूह का वध करके, *बिपिन उजारा* = अशोक वन को उजाड़ दिया। *सो सब तव प्रताप रघुराई* = यह सब तो रघुनाथ जी आपका ही प्रताप है, *नाथ न कछु मोरि प्रभुताई* = हे प्रभु, इसमें मेरे बड़ाई कुछ नहीं है।

हनुमान जी ने देखा कि प्रभु राम इस समय बहुत प्रसन्न हैं। उन्होंने अभिमान दूर रखा, निरभिमान होकर बोलते हैं, हे प्रभु, पेड़ में रहने वाला वानर एक डाल से कूदकर दूसरी डाल पर चला जाये, इतना ही उसके बस में है, इससे ज्यादा कमाल वह क्या कर सकता है। समुद्र को लांघना, सोने की लंका को जलाना, राक्षसों को मारना, अशोकवाटिका को उजाड़ना, ये सब कार्य जो हुए उनमें हमारा कुछ योगदान नहीं है। सब आपकी ही शक्ति थी, इसमें मेरी कोई भी प्रभुता नहीं है।

आप जिससे जो कराना चाहें करा सकते हैं

ता कहुँ प्रभु कछु अगम नहिं जा पर तुम्ह अनुकूल।
तव प्रभावँ बड़वानलहि जारि सकइ खलु तूल॥ दोहा 33॥

ता कहुँ प्रभु = हे प्रभु उसके लिये, *कछु अगम नहिं* = कुछ भी असंभव नहीं, *जा पर तुम्ह अनुकूल* = जिसके ऊपर आप अनुकूल हों। *तव प्रभावँ* = आप के प्रताप से, *बड़वानलहि* = बड़वानल को, *जारि सकइ* = जला सकती है, *खलु तूल* = रूई जो स्वयं जलने वाली है

हे प्रभु आप जिसके ऊपर अनुकूल हों, जिससे जो कराना चाहें, उसके लिये कुछ असंभव नहीं, वह सब कुछ कर सकता है। आपके प्रताप से रूई, जो स्वयं जलने वाली है, बड़वानल को निश्चय जला सकती है। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि हनुमान जी के अंदर अहंकार का अंकुर था ही नहीं। चाहे उनकी जितनी प्रशंसा करो, कोई फर्क नहीं पड़ता। हनुमान जी का सबसे बड़ा गुण है कि उनके अंदर अहंकार है ही नहीं।

हनुमान प्रभु से अनपायनी भक्ति का वरदान माँग लेते हैं

नाथ भगति अति सुखदायनी। देहु कृपा करि अनपायनी ॥34.1॥
सुनि प्रभु परम सरल कपि बानी। एवमस्तु तब कहेउ भवानी ॥34.2॥

नाथ भगति अति सुखदायनी = हे नाथ आपकी भक्ति बहुत सुख देने वाली है, *देहु कृपा करि अनपायनी* = कृपा करके मुझे अपनी अनपायनी भक्ति दे दीजिये। *सुनि प्रभु परम सरल कपि बानी* = प्रभु ने हनुमान की बहुत ही सरल वाणी सुनकर, *एवमस्तु* = ऐसा ही हो, *तब कहेउ* = उस समय कह दिया, *भवानी* = हे पार्वती।

हनुमान जी कहते हैं – आपकी भक्ति बहुत सुख देने वाली है, आप मुझ पर कृपा करके अनपायनी भक्ति दे दीजिये। शंकर जी पार्वती जी से कहते हैं कि हनुमान की अत्यंत सरल वाणी सुनकर प्रभु श्रीराम ने उन्हें वह भक्ति दे दी। अनपायनी भक्ति मायने कभी भी समाप्त न होने वाली भक्ति, ऐसी भक्ति जो सदा बनी रहे। हनुमान ने देखा कि मेरे प्रभु अपने आपको ऋणी समझ रहे हैं, प्रति-उपकार न कर पाने का संकट है, उसे दूर करने के लिये वे सदा रहने वाली भक्ति का वरदान माँग लेते हैं। प्रभु राम वह वरदान हनुमान को तुरंत दे देते हैं। इस प्रकार अपने कार्य के बदले में भक्ति माँग लेते हैं।

भक्ति आंतरिक भाव है जो भगवान से सदा जोड़े रखता है

भक्त वे भी हैं जो भगवान की पूजा-अर्चना करके उनसे अपनी सुख-सुविधा के लिये कुछ-न-कुछ माँगते रहते हैं। यह प्रारंभिक स्तर की भक्ति है। अपने अवगुणों से छुटकारा पाने के लिये पूजा करना, प्रार्थना करना दूसरे स्तर की भक्ति है। भगवान के दर्शन की कामना भी भक्ति का ही एक प्रकार है।

अंतिम भक्ति तुलसीदास जी के अनुसार 'अनपायनी भक्ति' है जो अपने से नहीं आती। उसे भगवान कृपा करके देते हैं, तभी मिलती है। इसे परा भक्ति भी कहते हैं।

राम का स्वभाव आनंददायक है, जो जान गया सो जान गया

उमा राम सुभाउ जेहिं जाना। ताहि भजनु तजि भाव न आना॥ 34.3॥

उमा = हे उमा, *राम सुभाउ जेहिं जाना* = राम जी का स्वभाव जो कोई जानता है, *ताहि भजनु तजि* = उसे भजन छोड़कर, *भाव न आना* = और कुछ अच्छा नहीं लगता।

शंकर जी कथा सुनाते-सुनाते पार्वती जी से कहते हैं कि जो श्रीराम का स्वभाव जानता है उसे भजन छोड़कर कुछ अच्छा नहीं लगता है। भजन शब्द संस्कृत का है जिसे हिंदी में कीर्तन से जोड़ा जाता है। यह भज् धातु से बना है जिसका अर्थ सेवा करना है। भजन मायने भगवान की निरंतर सेवा में लगे रहना। भगवान का स्वभाव आनंद स्वरूप है। जो उनका स्वभाव नहीं जानता वह तमाम दु:खदायी वस्तुओं को ही सुखदायी समझकर उन्हीं की सेवा में लगा रहता है। जो समझता है कि आनंद भगवान से ही मिलना है, वह उनका भजन यानि सेवा करता रहता है।

इस प्रसंग को हृदय में धारण करें, श्रीराम की भक्ति प्राप्त होगी

यह संबाद जासु उर आवा। रघुपति चरन भगति सोइ पावा॥ 34.4॥

यह संबाद = यह संवाद, *जासु उर आवा* = जिसके हृदय में आता है, *रघुपति चरन भगति* = श्रीराम के चरणों की भक्ति, *सोइ पावा* = उसे प्राप्त हो जाती है।

अब शंकर जी इस प्रसंग का फल बताते हैं कि जिसके हृदय में यह संवाद आये मायने उसके मन में जँच जाये, हृदय उसे स्वीकार कर ले, तो उसको भी श्रीराम के चरणों की भक्ति प्राप्त हो जायेगी। श्रीराम व हनुमान जी के बीच जो बातचीत हुई उसे ही संवाद कहा है। यह प्रसंग दोहा 30 से लेकर अभी तक चला है। इस प्रसंग का फल शंकर जी स्वयं बता रहे हैं।

वानर प्रभु राम की जय-जय करने लगे

सुनि प्रभु बचन कहहिं कपिबृंदा। जय जय जय कृपाल सुखकंदा॥ 34.5॥

सुनि प्रभु बचन = प्रभु के वचनों को सुनकर, *कहहिं कपिबृंदा* = वानरगण कहने लगे, *जय जय जय कृपाल सुखकंदा* = सुख के निधान, कृपा करने वाले राम की जय हो, जय हो, जय हो।

श्रीराम ने जो इस प्रकार से हनुमान जी के लिये बोला उसका प्रभाव सब वानरों पर भी पड़ा। सभी वानर कहने लगे, सुखनिधान प्रभु श्रीराम की जय हो, जय हो, जय हो। बार-बार स्मरण रखें कि भगवान में ही सुख है। सुख चाहते हो तो भगवान को चाहो, श्रीराम में प्रेम रखो। भगवान का स्मरण सुख है, उनका विस्मरण दु:ख है।

10. श्रीराम वानर सेना सहित समुद्र किनारे पहुँचते हैं

(दोहा 34 से दोहा 35)

हनुमान जी से सीता जी की खबर मिलते ही श्रीराम वानर सेना सहित समुद्र की तरफ चलकर रामेश्वरम् तक पहुँचते हैं। पूरी वानर सेना पर प्रभु अपनी कृपा दृष्टि डालते हैं, सेना और शक्तिशाली हो जाती है। इस प्रसंग का पाठ करते समय सोचें कि प्रभु की कृपा दृष्टि हम पर भी है। हम उन्हें न देख पायें पर वे तो हमें देख लें, इतना ही हमारे जीवन के लिये पर्याप्त है। इस प्रसंग में तुलसीदास जी पृथ्वी की स्थिति के वैज्ञानिक तथ्य को पौराणिक तरीके से बड़े ही काव्यात्मक ढंग से प्रस्तुत करते हैं। उनकी काव्य कला के दर्शन कर अपने मन को गद्गद् करें। जब हम सेवा कार्य करें तब अपने मन में यह भाव लाने का अभ्यास करें कि हम श्रीराम की सेना के एक वानर हैं। हमारे ऊपर प्रभु की दृष्टि है, कार्य उन्हीं का है, हम करते जा रहे हैं।

श्रीराम सुग्रीव से कहते हैं, तुरंत लंका की ओर चलें

तब रघुपति कपिपतिहि बोलावा। कहा चलैं कर करहु बनावा॥ 34.6॥
अब बिलंबु केहि कारन कीजे। तुरत कपिन्ह कहुँ आयसु दीजे॥ 34.7॥
कौतुक देखि सुमन बहु बरषी। नभ तें भवन चले सुर हरषी॥ 34.8॥

तब रघुपति = फिर राम जी ने, *कपिपतिहि बोलावा* = वानरों के राजा सुग्रीव को बुलाया, *कहा* = उनसे कहा, *चलैं कर* = अब चलने की, *करहु बनावा* = की तैयारी करो। *अब बिलंबु* = अब देरी, *केहि कारन कीजे* = किस कारण से की जाये, *तुरत कपिन्ह कहुँ* = तुरंत ही वानरों को, *आयसु दीजे* = आदेश दीजिये। *कौतुक देखि* = यह लीला देखकर, *सुमन बहु बरषी* = फूलों की बहुत वर्षा करके, *नभ तें* = आकाश से, *भवन चले सुर हरषी* = देवता प्रसन्न होकर अपने घरों को चले गये।

अभी तक हनुमान जी से बात हो रही थी, अब वानरों के राजा सुग्रीव को बुलाकर उनसे कहते हैं कि लंका की तरफ चलने की तैयारी करो। श्रीराम कहते हैं, अब देरी का क्या कारण है? जब तक सीता का पता नहीं चला था विलंब था, पर अब तुरंत आप वानरों को आज्ञा दें। वानर तो राजा सुग्रीव के अधीन हैं, वे तो उन्हीं के कहने से चलेंगे। इसलिये सुग्रीव से कहते हैं कि आप वानरों को चलने की आज्ञा दो। श्रीराम की यह लीला देखकर आकाश में देवता बहुत प्रसन्न हुए, फूलों की वर्षा की। सब देवता रावण से त्रस्त थे, उन्हें लगा कि अब राम जी युद्ध के लिये चल दिये हैं, रावण को मारेंगे, इसलिये सब प्रसन्न हैं। ये सब देखकर निर्भय होकर देवता अपने घर स्वर्ग की ओर चले गये।

सुग्रीव ने तुरंत सेना को बुलवाया, सेनापति आ गये

कपिपति बेगि बोलाए आए जूथप जूथ।
नाना बरन अतुल बल बानर भालु बरूथ॥ दोहा 34॥

कपिपति = वानरों के राजा सुग्रीव, *बेगि बोलाए* =शीघ्र ही बुलवाया, *आए जूथप जूथ* = सेनापतियों के समूह आ गये। *नाना बरन* = अनेक रंग के, *अतुल बल* = अतुलनीय बलशाली, *बानर भालु बरूथ* = वानर व भालुओं के समूह आ गये।

वानरों के राजा सुग्रीव ने श्रीराम की आज्ञा का तुरंत पालन किया। वानरों के समूह के स्वामी को जूथप कहते हैं, उन समूहों के स्वामी यानि कमाँडर को बुला लिया। उन सबको आदेश दिया कि तुम्हारे अधीन जितने वानर हैं, उन सबको लेकर तैयार हो जाओ। इस सेना में तरह-तरह के रंग के वानर व भालू हैं, काले हैं, लाल हैं, पीले हैं। ये सब बड़े ही शक्तिशाली हैं।

श्रीराम की दृष्टि पड़ते ही वानर सेना बड़ी शक्तिशाली हो गई

प्रभु पद पंकज नावहिं सीसा। गर्जहिं भालु महाबल कीसा॥35.1॥
देखी राम सकल कपि सेना। चितइ कृपा करि राजिव नैना॥35.2॥
राम कृपा बल पाइ कपिंदा। भए पच्छजुत मनहुँ गिरिंदा॥35.3॥

प्रभु पद पंकज = प्रभु के चरण कमल में, *नावहिं सीसा* = सिर नवाते हैं, *गर्जहिं भालु महाबल कीसा* = महान् बलवान् वानर और भालू गरज रहे हैं, *देखी राम सकल कपि सेना* = श्रीराम ने वानरों की सारी सेना देखी, *चितइ कृपा करि राजिव नैना* = कमल के समान नेत्रों से श्रीराम ने कृपापूर्ण अपनी दृष्टि डाली। *राम कृपा बल पाइ कपिंदा* = राम की कृपा पाकर वे वानर, *भए पच्छजुत मनहुँ गिरिंदा* = इतने शक्तिशाली हो गये मानो पर्वतों के पंख लग गये हों।

सब वानर आकर प्रभु के चरणों में प्रणाम करते हैं। चलने की तैयारी शुरू हो गयी। वानर व भालू बड़े शक्तिशाली हैं, वे सब गर्जना करते हैं। श्रीराम के कमल के समान नेत्र हैं, उन्हीं नेत्रों से पूरी वानर सेना पर अपनी कृपा दृष्टि डालते हैं। ऐसे कृपालु श्रीराम की दृष्टि पड़ते ही वानर और शक्तिशाली हो गये। यहाँ पर तुलसीदास जी कपि की जगह कपिंदा शब्द कहते हैं मायने वे बड़े भारी हो गये। भारीपन की तुलना पंख लगे पर्वतों से करते हैं। जैसे पर्वतों के पंख निकल आये हों और वे उड़ रहे हों, ऐसे ही वानर व भालू जब उछलते हैं तो लगता है मानो पर्वत उछल रहे हों।

राम प्रसन्नतापूर्वक वानर सेना के साथ चले, शकुन होने लगे

हरषि राम तब कीन्ह पयाना। सगुन भए सुंदर सुभ नाना॥35.4॥
जासु सकल मंगलमय कीती। तासु पयान सगुन यह नीती॥35.5॥

हरषि राम = राम जी ने प्रसन्न होकर, *तब कीन्ह पयाना* = तब प्रस्थान किया, *सगुन भए सुंदर सुभ नाना* = तरह-तरह के सुंदर शकुन होने लगे। *जासु सकल मंगलमय कीती* = जिनका यश और कीर्ति मंगलों से परिपूर्ण हैं, *तासु पयान* = उनके प्रस्थान के समय, *सगुन* = शकुन होना, *यह नीती* = यही नियम है।

जब सब वानर तैयार हो गये, तब श्रीराम वानरों को लेकर प्रसन्नतापूर्वक चल दिये। उस समय सुंदर शकुन होने लगे। प्रभु राम की जय होनी है इसलिये शकुन होने लगे। भगवान का यश मंगलकारी है। उनकी कीर्ति को सुनना, हृदय में धारण करना मंगल करने वाला है। ऐसे भगवान के लिये शकुन की क्या जरूरत है? तुलसीदास जी कहते हैं, यह लौकिक रीति है, भगवान के कार्य में शकुन को तो रहना ही है।

सीता जी को शकुन के लक्षण दिखे, रावण को अपशकुन के

प्रभु पयान जाना बैदेहीं। फरकि बाम अँग जनु कहि देहीं॥ 35.6॥
जोइ जोइ सगुन जानकिहि होई। असगुन भयउ रावनहि सोई॥ 35.7॥

प्रभु पयान = प्रभु का प्रस्थान, *जाना बैदेहीं* = जानकी जी को पता चल गया, *फरकि बाम अँग* = उनके बायें अंग ने फड़ककर, *जनु कहि देहीं* = मानो सूचना दे दी। *जोइ जोइ सगुन* = जो-जो शकुन, *जानकिहि होई* = सीता जी को होते हैं, *असगुन भयउ रावनहि सोई* = वही-वही अपशकुन रावण को होते हैं।

सीता जी के बायें अंग फड़कने लगे और वे समझ गयीं कि अब प्रभु राम चल दिये हैं। शकुन व अपशकुन दोनों सूचना देते हैं। ये भविष्यवक्ता हैं, दूर की बात जानते हैं। स्त्रियों के बायें अंग का फड़कना और पुरुषों के दायें अंग का फड़कना शकुन माना जाता है। तुलसीदास जी कहते हैं कि जो शकुन सीता जी को हो रहे हैं, वही अपशकुन रावण को हो रहे हैं। जैसे सीता जी की बायीं आँख फड़की तो उन्हें शकुन हुआ, रावण की भी बायीं आँख फड़की तो उसके लिये अपशकुन हो गया। रावण का विनाश निकट है।

अनगिनत सेना है, नाखून, पत्थर व वृक्ष हथियार हैं

चला कटकु को बरनैं पारा। गर्जहिं बानर भालु अपारा॥ 35.8॥
नख आयुध गिरि पादपधारी। चले गगन महि इच्छाचारी॥ 35.9॥
केहरिनाद भालु कपि करहीं। डगमगाहिं दिग्गज चिक्करहीं॥35.10॥

चला कटकु = सेना चल दी, *को बरनैं पारा* = उसका वर्णन कौन करे, *गर्जहिं* = गर्जना करते हैं, *बानर भालु अपारा* = वानर-भालू जिनकी गणना नहीं हो

सकती। *नख आयुध गिरि पादपधारी* = नाखून, पर्वत और वृक्ष अस्त्र हैं, *चले* = वे चलते हैं, *गगन* = आकाश से, *महि* = जमीन मार्ग से, *इच्छाचारी* = जैसी जिसकी इच्छा है। *केहरिनाद* = सिंह के समान गर्जना, *भालु कपि करहीं* = भालू और वानर करने लगे, *डगमगाहिं दिग्गज चिक्करहीं* = दिशाओं के हाथी विचलित होकर चिंघाड़ने लगे।

चलती हुई सेना का वर्णन है। सेना में कितने वानर और भालू हैं, गिना नहीं जा सकता है। वे सब शेर के समान गर्जना करते चल रहे हैं। नाखून, पर्वत और वृक्ष ही उनके अस्त्र-शस्त्र हैं। नाखून से नोच लें, पत्थर उठाकर मार दें, वृक्ष उखाड़कर फेंक दें, यही उनके हथियार हैं। जिसकी जब जैसी मर्जी होती है उस रास्ते से चलता है। कोइ आकाश में उड़ता चल रहा है तो कोई पृथ्वी पर चल रहा है। आकाश से आशय यह भी है कि वानर एक पेड़ से दूसरे पेड़ पर कूदते चल रहे हैं, जमीन पर चलते ही नहीं। शेर की तरह दहाड़ते हुए सब चल रहे हैं। दिग्गज यानि दिशाओं के हाथी विचलित होकर चिंघाड़ने लगे।

सेना के चलने से पृथ्वी में हलचल होने लगी

चिक्करहिं दिग्गज डोल महि गिरि लोल सागर खरभरे।
मन हरष सभ गंधर्ब सुर मुनि नाग किंनर दुख टरे॥ छंद॥

चिक्करहिं दिग्गज = दिशाओं के हाथी चिंघाड़ने लगे, *डोल महि* = पृथ्वी डोलने लगी, *गिरि लोल* = पर्वत हिलने लगे, *सागर खरभरे* = समुद्र खलबला उठे। *मन हरष सभ गंधर्ब सुर मुनि नाग किंनर* = गन्धर्व, देवता, मुनि, नाग, किन्नर सब मन में बहुत हर्षित हुए, *दुख टरे* = कि अब हमारे दु:ख टल गये।

श्रीराम की परम शक्तिशाली सेना जब पृथ्वी पर चलने लगी तो पृथ्वी डोलने लगी, पर्वत हिलने लगे और सागर खलबला उठे। सभी दिशाओं के हाथी डगमगा गये और चिंघाड़ने लगे। गन्धर्व, देवता, मुनि, नाग, किन्नर, सब के सब मन में हर्षित हुए कि अब हमारे दु:ख टल गये।

राम गुण गाते करोड़ों वानर दौड़ रहे हैं

कटकटहिं मर्कट बिकट भट बहु कोटि कोटिन्ह धावहीं।
जय राम प्रबल प्रताप कोसलनाथ गुन गन गावहीं।। छंद।।

कटकटहिं मर्कट = वानर किटकिटा रहे हैं, *बिकट भट बहु* = बड़े भयानक योद्धा, *कोटि कोटिन्ह धावहीं* = करोड़ों-करोड़ दौड़ रहे हैं। जय राम = राम की जय हो, *प्रबल प्रताप कोसलनाथ* = राम के प्रताप की महिमा व, *गुन गन गावहीं* = गुण गाते हुए सेना जा रही है।

वानर किटकिटा रहे हैं। बड़े भयानक करोड़ों योद्धा दौड़ रहे हैं। कोई कह रहा है, श्रीराम की जय हो, कोई श्रीराम के प्रताप की महिमा गा रहा है, कोई कोसलनाथ श्रीराम के गुणों को गा रहा है। इस प्रकार सब गाते, दौड़ते, कूदते चले जा रहे हैं।

शेषनाग कछुए की पीठ पर दांत के बल से पृथ्वी टिकाये हैं

सहि सक न भार उदार अहिपति बार बारहिं मोहई।
गह दसन पुनि पुनि कमठ पृष्ट कठोर सो किमि सोहई।। छंद।।

सहि सक न भार = इस बोझ को नहीं सह पा रहे हैं, *उदार अहिपति* = शक्तिशाली शेषनाग, *बार बारहिं मोहई* = वे बार-बार सोचते हैं, *गह दसन* = अपने दाँतों को गड़ाते हैं, *पुनि पुनि* = बार-बार, *कमठ पृष्ट कठोर* = कछुए की कठोर पीठ पर, *सो किमि सोहई* = उसकी शोभा नहीं कही जा सकती है।

यद्यपि शेषनाग बड़े शक्तिशाली हैं, लेकिन इस समय पृथ्वी का भार वे भी सहन नहीं कर पा रहे हैं। बार-बार वे सोचते हैं, इतना भार क्यों हो रहा है? फन में ताकत लगाकर पृथ्वी को टिकाये रखने की कोशिश करते हैं, पर बार-बार फन हिल जाता है। शेषनाग अपने दाँतों से कछुए की पीठ को पकड़ते हैं, दाँतों को गड़ाते हैं। दाँतों को कछुए की पीठ पर टिका दिया तो फन को आश्रय मिल गया। पृथ्वी फन पर टिकी रही।

शेषनाग कछुए की पीठ पर इस घटना को अंकित कर रहे हैं

रघुबीर रुचिर प्रयान प्रस्थिति जानि परम सुहावनी।
जनु कमठ खर्पर सर्पराज सो लिखत अबिचल पावनी॥ छंद॥

रघुबीर रुचिर प्रयान प्रस्थिति = श्रीराम जी की सुंदर प्रस्थान यात्रा को, *जानि परम सुहावनी* = परम सुहावनी जानकर, *जनु* = मानो, *कमठ खर्पर* = कछुए की कठोर पीठ पर, *सर्पराज* = शेषनाग, *सो लिखत* = लिख रहे हों, *अबिचल पावनी* = इस सुंदर कथा को सदा के लिये।

शेषनाग जब बार-बार दाँतों को गड़ाते हैं तो कछुए की कठोर पीठ खुरुच जाती है, खुरुचने से पीठ पर लकीरें बन जाती हैं। ये लकीरें क्या हैं? तुलसीदास जी कहते हैं, ऐसा समझो श्रीराम इस समय युद्ध करने के लिये लंका की तरफ जो प्रस्थान कर रहे हैं, उस प्रस्थान का इतिहास परम पवित्र है, परम सुंदर है, उसे ही शेषनाग कछुए की पीठ पर लिख रहे हैं। प्राचीनकाल में इतिहास पत्थरों के ऊपर लिखा जाता था, जिसे शिलालेख कहते हैं। तुलसीदास जी कहते हैं मानो श्रीराम के प्रस्थान का पावन इतिहास शेषनाग सदा के लिये कछुए की कठारे पीठ पर अपने दाँतों से अंकित कर रहे हैं।

पृथ्वी की स्थिति की वैज्ञानिक बात का काव्यात्मक प्रस्तुतीकरण

तुलसीदास जी कथा के साथ-साथ पृथ्वी की स्थिति की वैज्ञानिक बात का काव्यात्मक ढंग से बड़ा सुंदर चित्रण करते हैं। यह भारत का पौराणिक तरीका है। विज्ञान कहता है कि गुरुत्वाकर्षण शक्ति है, सूर्य की शक्ति है, और भी अनेक शक्तियों से पृथ्वी ब्रह्माण्ड में लटकी है। इन्हीं शक्तियों के प्रतीक हाथी, सर्प, कछुआ आदि हैं। गोल पृथ्वी शेषनाग के फन के ऊपर रखी है, शेषनाग कछुए की पीठ पर बैठे हैं। शेषनाग थोड़ा-सा भी हिले तो पृथ्वी कहीं लुढक न जाये, इसलिये चारों तरफ हाथी उसे थामे हैं, उसे रोक रखे हैं।

श्रीराम सेना सहित रामेश्वरम् पहुँचे

एहि बिधि जाइ कृपानिधि उतरे सागर तीर।
जहँ तहँ लागे खान फल भालु बिपुल कपि बीर॥ दोहा 35॥

एहि बिधि जाइ = इस प्रकार जाकर, *कृपानिधि* = कृपालु श्रीराम, *उतरे सागर तीर* = समुद्र के किनारे पहुँच गये। *जहँ तहँ लागे खान फल* = जहाँ-तहाँ फल खाने लगे, *भालु बिपुल कपि बीर* = अनेकों वीर भालू व वानर।

इस प्रकार से कृपा के सागर श्रीराम वानरसेना सहित समुद्र के किनारे पहुँच गये। भालू व वानर फलों के वृक्षों से फल खाने लगे। इस स्थान को आजकल रामेश्वरम् कहते हैं।

11. मंदोदरी रावण को समझाती है

(दोहा 36 से दोहा 37)

यहाँ से तुलसीदास जी मंदोदरी का चरित्र आरंभ करते हैं। श्रीरामचरितमानस में अनेक स्त्रियों के चरित्रों का वर्णन है। मंदोदरी का नाम साध्वी स्त्रियों में गिना जाता है। वह लंका के राजा रावण की पत्नी है, लंका की महारानी है। उसमें निशाचरी भाव नहीं है, वह धर्मात्मा है। स्त्रियों के जीवन में प्राय: यह समस्या आती है कि यदि पति धर्मविरुद्ध आचरण करने वाला हो तो स्त्री को क्या करना चाहिये। इस प्रसंग में इस समस्या का समाधान है।

रामसेना के समुद्र किनारे पहुँचने से लंका में भय व्याप्त

उहाँ निसाचर रहहिं ससंका। जब तें जारि गयउ कपि लंका॥ 36.1॥
निज निज गृहँ सब करहिं बिचारा। नहिं निसिचर कुल केर उबारा॥ 36.2॥
जासु दूत बल बरनि न जाई। तेहि आएँ पुर कवन भलाई॥ 36.3॥

उहाँ निसाचर = वहाँ लंका में राक्षस, *रहहिं ससंका* = भयभीत रहते हैं, *जब तें जारि गयउ कपि लंका* = जब से हनुमान जी लंका में आग लगा गये थे। *निज निज गृहँ सब करहिं बिचारा* = अपने-अपने घरों में सब सोचते हैं, *नहिं निसिचर कुल केर उबारा* = राक्षस कुल की रक्षा का कोई उपाय नहीं है। *जासु दूत बल बरनि न जाई* = जिसके दूत के बल का वर्णन नहीं किया जा सकता है, *तेहि आएँ पुर कवन भलाई* = उसके स्वामी के लंका में आने से कौन-सी भलाई होने वाली है?

जब से हनुमान जी लंका में आग लगाकर आये हैं, तब से लंका में सब निसाचर भयभीत रहते हैं। अपने-अपने घरों में वे चर्चा करते हैं कि अब लंकावासियों

का उबार नहीं है, अब हम सब डूबने वाले हैं। जिसके दूत में इतना बल है कि उसका वर्णन नहीं किया जा सकता, जब उसका स्वामी नगर में आयेगा तब कौन सी भलाई होने वाली है? वह तो और भी शक्तिशाली होगा। सबने देखा था कि जब आग लगी तो रावण कुछ नहीं कर पाया। लंकावासियों ने खुद ही अपने घरों की आग बुझायी थी। ये अपने घरों में ही बात करते हैं, रावण के पास जाने की इनकी हिम्मत नहीं है। ये जानते हैं, वह अहंकारी हम लोगों की बात नहीं सुनेगा।

तुलसीदास जी राम शिविर से कथा कहते हैं

अब तुलसीदास जी लंका की कथा कहते हैं। 'उहाँ' शब्द लंका के लिये प्रयोग करते हैं, 'इहाँ' शब्द श्रीराम के पास की कथा के लिये कहते हैं। तुलसीदास जी का मन श्रीराम के पास ही रमा है, वे अभी राम जी के शिविर में ही हैं, यहीं से लंका की कथा कहते हैं।

दूतियों से लंका के घरों का समाचार सुन मंदोदरी व्याकुल

दूतिन्ह सन सुनि पुरजन बानी। मंदोदरी अधिक अकुलानी॥ 36.4॥

दूतिन्ह सन = दूतियों से, *सुनि पुरजन बानी* = नगरवासियों की बातें सुनकर, *मंदोदरी अधिक अकुलानी* = मंदोदरी बहुत व्याकुल हो गई।

मंदोदरी के पास ऐसी स्त्रियाँ हैं जो दूत का काम करती हैं। ये नगर की खबर लिये रहती हैं। स्त्री होने के कारण ये घरों के अंदर चली जाती हैं, वहाँ होने वाली बातचीत सुनकर महारानी मंदोदरी को बताती रहती हैं। इन दूतियों ने बताया कि श्रीराम वानर सेना सहित समुद्र के किनारे पहुँच गये हैं। लंका के घर-घर में इसकी चर्चा है, नगरवासी सब भयभीत हैं। यह सब सुनकर मंदोदरी भी व्याकुल हो जाती है।

मंदोदरी अकेले में, विनम्रतापूर्वक रावण को समझाती है।

रहसि जोरि कर पति पग लागी। बोली बचन नीति रस पागी॥ 36.5॥

रहसि = एकान्त में, *जोरि कर* = हाथ जोड़कर, *पति पग लागी* = पति रावण के पैर पकड़ लिये, *बोली बचन नीति रस पागी* = नीति से भरपूर बात कहने लगी।

मंदोदरी चाहती है कि रावण सन्मार्ग पर आ जाये, सब मरने से बच जायें। वह रावण व लंका के कल्याण की बात सोचती है। वह रावण से डरती नहीं है। रावण से किस प्रकार से व्यवहार करती है, यह समझने लायक है। वह जानती है कि यह अहंकारी है, यदि सबके सामने कहेंगे तो सुनेगा नहीं बल्कि क्रोधित हो जायेगा, इसलिये अकेले में समझाती है। वह डाँटती नहीं, लड़ती नहीं, हाथ जोड़ती है, चरण पकड़कर विनती करती है। अहंकारी से यदि विनती करो तो भले कुछ बात मान सकता है। फिर वह नीति रस से भरपूर बात करती है। रावण कभी-कभी नीति की बात तो मान जाता है, पर धर्म विरोधी है। नीति मायने सामाजिक विधान; धर्म मायने ईश्वर, आत्मा, परमात्मा, पुनर्जन्म आदि।

मंदोदरी कहती है, अपने मंत्री के संग सीता को वापस भेज दो

कंत करष हरि सन परिहरहू। मोर कहा अति हित हियँ धरहू॥ 36.6॥
समुझत जासु दूत कइ करनी। स्रवहिं गर्भ रजनीचर घरनी॥ 36.7॥
तासु नारि निज सचिव बोलाई। पठवहु कंत जो चहहु भलाई॥ 36.8॥

कंत = हे नाथ, *करष* = विरोध, *हरि* = श्रीराम, *सन* = से, *परिहरहू* = छोड़ दो, *मोर कहा* = मेरी बात, *अति हित* = अत्यंत ही हितकर है, *हियँ धरहू* = उसको हृदय में धारण करिये। *समुझत जासु दूत कइ करनी* = जिनके दूत की करनी का स्मरण आते ही, *स्रवहिं गर्भ रजनीचर घरनी* = राक्षसों की स्त्रियों के गर्भ गिर जाते हैं। *तासु नारि* = उनकी स्त्री को, *निज सचिव बोलाई* = अपने सचिव को बुलाकर, *पठवहु* = वापस भेज दीजिये, *कंत जो चहहु भलाई* = हे नाथ यदि आप भला चाहते हो तो।

मंदोदरी कहती है, हे पतिदेव, राम जी साक्षात् हरि हैं। उनसे संघर्ष करना छोड़ दो। हम जो कह रहे हैं, बड़े हित की बात है, उसे हृदय में धारण करो। जिसके दूत के कार्य का स्मरण आने से या सुनने से निशाचरियाँ ऐसे डर जाती हैं कि उनके गर्भ गिर जाते हैं, उस दूत के स्वामी की स्त्री को अपने सचिव को बुलाकर वापस भेज दो, यदि भलाई चाहते हो तो। वह यह नहीं कहती कि तुम खुद जाओ उनकी शरण में, क्षमा माँगो आदि। मंदोदरी को पता है यह सब कहते ही वह क्रोधित होगा, इसलिये बड़ी ही होशियारी से समझाती है ताकि कैसे भी यह सही काम करे।

सीता आपके कुल का नाश करने आयी है

तव कुल कमल बिपिन दुखदाई। सीता सीत निसा सम आई॥ 36.9॥

तव कुल= आपका कुल, *कमल बिपिन*= कमल के फूलों का वन है, *दुखदाई*= दु:ख देने वाली, *सीता आई*= सीता आई हैं, *सीत निसा सम*= ठण्ढ की रात्रि के समान।

मंदोदरी कहती है सीता तुम्हारे वंश का नाश करने आयी है। बहुत सुंदर उदाहरण देती है। तुम्हारा कुल तो कमल के वन के समान सुंदर है। ठण्ढ में शीत आती है, पाला पड़ता है, तो कमल मुरझा जाता है, सूख जाता है। सीता सीत के समान है जो कुल का नाश कर देगी।

शंकर व ब्रह्मा भी तुम्हें नहीं बचा सकते

सुनहु नाथ सीता बिनु दीन्हें। हित न तुम्हार संभु अज कीन्हें॥ 36.10॥

सुनहु नाथ= हे नाथ सुनो, *सीता बिनु दीन्हें*= सीता दिये बिना, *हित न तुम्हार*= तुम्हारा हित नहीं, *संभु अज कीन्हें*= ब्रह्मा जी व शंकर जी के हित करने से भी।

इतना सब कहने पर भी रावण ध्यान नहीं देता। मुँह घुमाये हुए मंदोदरी की बातें सुनता है, बेमन से। वह कहती है, हे नाथ सुनो, सीता को दिये बिना तुम्हारा कल्याण नहीं है, भले ही शंकर जी व ब्रह्मा जी ने कितने भी वरदान तुम्हें दे दिये हों। सीता लौटाए बिना ये दोनों भी तुमको बचा नहीं सकते।

राम के बाण चलने के पहले उपाय कर लो

राम बान अहि गन सरिस निकर निसाचर भेक।
जब लगि ग्रसत न तब लगि जतनु करहु तजि टेक॥ दोहा 36॥

राम बान= श्रीराम के बाण, *अहि गन सरिस*= सर्पों के समूह के समान हैं, *निकर निसाचर भेक*= राक्षसों के समूह मेढ़क के समान हैं। *जब लगि ग्रसत न*= जब तक ये बाण निशाचरों को खा नहीं रहे हैं, *तब लगि*= तब तक, *जतनु करहु*= उपाय कर लीजिये, *तजि टेक*= हठ छोड़कर।

जब रावण कोई जवाब नहीं देता तो मंदोदरी थोड़ा कर्कश बोलती है। कहती है कि राम के बाण फुफकारते सर्पों की तरह हैं। तुम्हारे निशाचरों के समूह मेढ़क के समान है। जैसे सर्प मेढ़क को खा जाता है वैसे ही जब बाण चलेंगे तो सब निशाचर मारे जायेंगे। जब तक राम के बाण निकलकर निशाचरों को ग्रसते नहीं तब तक समय है। अपना हठ छोड़कर निशाचरों को बचाने का उपाय कर लो।

मंदोदरी की बात का रावण पर कोई असर नहीं हुआ

श्रवन सुनी सठ ता करि बानी। बिहसा जगत बिदित अभिमानी॥ 37.1 ॥

श्रवन सुनी = कानों से सुना, *सठ* = मूर्ख रावण ने, *ता करि बानी* = उसकी बात, *बिहसा* = उपहास करके हँसा, *जगत बिदित अभिमानी* = संसार में प्रसिद्ध अहंकारी।

उस मूर्ख ने मंदोदरी की बातें सिर्फ कान से सुनीं, मायने ये बातें उसके मन तक नहीं पहुँची, न ही बुद्धि ने स्वीकार किया। रावण ने मंदोदरी की बातें स्वीकार करने की बजाय उसकी बातों का हँसकर उपहास उड़ाया। सारे जगत् में रावण अभिमान के लिये प्रसिद्ध है। अभिमानी व्यक्ति दूसरे की बातों को नहीं मानते हैं।

रावण ढींगें मारकर, मंदोदरी पर प्रेम जताकर, सांत्वना देता है

सभय सुभाउ नारि कर साचा। मंगल महुँ भय मन अति काचा॥ 37.2 ॥
जौं आवइ मर्कट कटकाई। जिअहिं बिचारे निसिचर खाई॥ 37.3 ॥
कंपहि लोकप जाकीं त्रासा। तासु नारि सभीत बड़ि हासा॥ 37.4 ॥
अस कहि बिहसि ताहि उर लाई। चलेउ सभाँ ममता अधिकाई॥ 37.5 ॥

सभय = डरपोक, *सुभाउ* = स्वभाव, *नारि कर साचा* = स्त्रियों का सच में होता है, *मंगल महुँ भय* = मंगल में भी भय करती हो, *मन अति काचा* = तुम्हारा मन बहुत कच्चा है। *जौं आवइ मर्कट कटकाई* = यदि वानरों की सेना आती है, *जिअहिं बिचारे निसिचर* = बेचारे राक्षस जी जायेंगे यानि उन्हें भोजन मिल जायेगा, *खाई* = वानरों को खा जायेंगे। *कंपहि लोकप जाकीं त्रासा* = जिसके

डर से लोकपाल भी काँपते हैं, *तासु नारि सभीत* = उसकी स्त्री डरे, *बड़ि हासा* = यह बड़ी हँसी की बात है। *अस कहि बिहसि* = ऐसा कहकर रावण ने हँसकर, *ताहि उर लाई* = मंदोदरी को हृदय से लगा लिया, *चलेउ सभाँ ममता अधिकाई* = अधिक स्नेह दिखाकर दरबार में चला गया।

रावण कहता है कि यह बात सच है कि स्त्रियों का स्वभाव डरपोक होता है। उनका मन बड़ा कच्चा होता है। जहाँ मंगल ही मंगल होने वाला है, अच्छाई ही अच्छाई है, वहाँ पर भी उन्हें डर लगता है। यदि वानरों की सेना आती है तो निशाचरों को घर बैठे भोजन मिल जायेगा। बेचारे निशाचर उनको खाकर के जी जायेंगे यानि भरपेट भोजन मिल जायेगा। लोकपाल भी जिसके डर से काँपते हैं, उसकी पत्नी ऐसे डरे तो यह बड़ी हँसी की बात है। ऐसा कहकर रावण ठहाका लगाकर हँसता है। मंदोदरी को अपने हृदय से लगाकर बहुत अधिक प्रेम जताता है। फिर राजदरबार की तरफ चला जाता है।

अहंकारी व्यक्ति में ममता भी बहुत रहती है

जहाँ अहंकार है वहाँ ममता भी है। ये दोनों साथ-साथ चलते हैं। अहंकार मायने 'मैं' ममता मायने 'यह मेरा'। जैसे मंदोदरी को ममता दिखायी कि तुम मेरी पत्नी हो। संसार तो सारा हमसे डरता है, तुम मेरी हो इसलिये तुम्हें डरने की जरूरत नहीं।

रावण चला गया, मंदोदरी चिंतित

मंदोदरी हृदयँ कर चिंता। भयउ कंत पर बिधि बिपरीता॥ 37.6॥

मंदोदरी हृदयँ कर चिंता = मंदोदरी हृदय में चिंता करने लगी, *भयउ कंत पर* = मेरे पति पर, *बिधि बिपरीता* = विधाता प्रतिकूल हो गये हैं।

मंदोदरी की बातों को अनसुना करके, अपनी बातें कहकर रावण राजदरबार में चला जाता है। मंदोदरी चिंतित हो जाती है। वह सोचती है, रावण गलत है, हम सही हैं, पर यह हमारी बात नहीं मान रहा है। उसे लगा कि इस समय मेरे पति पर विधाता विपरीत हैं, इसलिये इसे कुछ समझ ही नहीं आ रहा है।

मंत्रियों की सलाह – नर-वानर से डर नहीं

बैठेउ सभाँ खबरि असि पाई। सिंधु पार सेना सब आई॥37.7॥
बूझेसि सचिव उचित मत कहहू। ते सब हँसे मष्ट करि रहहू॥37.8॥
जितेहु सुरासुर तब श्रम नाहीं। नर बानर केहि लेखे माहीं॥ 37.9॥

बैठेउ सभाँ = दरबार में जाकर रावण बैठा, *खबरि असि पाई* = ऐसी सूचना आई, *सिंधु पार* = समुद्र के किनारे, *सेना सब आई* = वानर सेना आ गई है। *बूझेसि सचिव उचित मत कहहू* = उसने मंत्रियों से पूछा कि उचित सलाह कहिये, *ते सब हँसे* = वे सब हँसे, *मष्ट करि रहहू* = चुप करके रहिये, *जितेहु सुरासुर तब श्रम नाहीं* = जब देवताओं और असुरों को बिना परेशानी के जीत लिया, *नर बानर केहि लेखे माहीं* = तब मनुष्यों और वानरों की क्या गिनती है?

रावण राजदरबार में पहुचँता है, वहाँ उसे सूचना दी जाती है कि राम-लक्ष्मण के साथ राजा सुग्रीव अपनी वानर-भालू की सेना लेकर समुद्र के किनारे ठहरे हैं। रावण मंत्रियों से सलाह लेता है कि क्या करना चाहिये, उचित सलाह दें। सब मंत्री हँसने लगे कि इसमें विचार की क्या बात है, बस चुप करके बैठिये। जब आपने इतने सुरों व असुरों को बिना किसी परिश्रम के जीत लिया, कोई कठिनाई नहीं आयी, तब इन वानरों और मनुष्यों की क्या गिनती! नर-वानर तो हमारा कुछ बिगाड़ नहीं सकते। मंत्री लोग जानते हैं कि रावण के साथ कैसा व्यवहार करना है। अहंकारी व्यक्ति के साथ रहो तो उसकी हाँ में हाँ मिलाओ, उसकी खूब तारीफ करो।

मंत्री, वैद्य व गुरु की हाँ में हाँ से राज्य, शरीर व धर्म की हानि

सचिव बैद गुर तीनि जौं प्रिय बोलहिं भय आस।
राज धर्म तन तीनि कर होइ बेगिहीं नास॥ दोहा 37 ॥

सचिव बैद गुर तीनि = मंत्री, वैद्य, गुरु ये तीनों, *जौं प्रिय बोलहिं* =यदि प्रिय लगने वाली ही बात बोलते हैं, *भय आस* = भय या लालच के कारण से। *राज धर्म तन* = तो राज्य, धर्म और शरीर, *तीनि कर* = इन तीनों का, *होइ बेगिहीं नास* = शीघ्र ही नाश हो जाता है।

तुलसीदास जी बीच-बीच में नीति के वचन भी बोलते हैं। मंत्री यदि भय या लालच से राजा को प्रिय लगने वाली बात बोले, सही सलाह न दे, तो राज्य का विनाश हो जायेगा। यदि वैद्य जैसा रोगी चाहता है वैसी ही दवा दे, जो रोगी को अच्छा लगे वही खाने-पीने को कह दे तो रोगी का शरीर जल्दी खत्म हो जायेगा। इसी प्रकार यदि गुरु शिष्य से डरे या कोई आशा रखे, उसे सही शिक्षा न दे तो धर्म का नाश होगा। इन तीनों को ही कड़वी व सत्य बात बोलनी पड़ती है, उसी में सबका हित है।

12. विभीषण रावण को समझाते हैं, विभीषण को देश निकाला

(दोहा 38 से दोहा 41)

मंदोदरी की बात रावण नहीं मानता, चाटुकार मंत्री उसे गलत सलाह देते हैं। इतने में राजदरबार में विभीषण पहुँचते हैं। रावण उसकी भी सलाह पूछता है। वह पहले नीति की बात कहता है, फिर सीता को वापस कर राम शरण में जाने की विनती करता है। रावण उसे लात मारकर भगा देता है। विभीषण का बातचीत करने का तरीका, उसकी विनम्रता, लात खाने पर भी संयम बनाये रखना, अपनी बात पर पूरा भरोसा, ये सब बातें इस प्रसंग को पढ़ते समय ध्यान रखनी चाहिये। यही तो व्यक्तित्व विकास के गुण हैं। अपना बड़ा यदि गलत राह पर है तो उसे कैसे समझायें? वह नहीं मानता तो क्या करें? ये सब बातें सीखने व समझने की हैं।

मंत्रियों द्वारा झूठी प्रशंसा रावण के विनाश में सहायक

सोइ रावन कहुँ बनी सहाई। अस्तुति करहिं सुनाइ सुनाई॥ 38.1॥

सोइ रावन कहुँ बनी सहाई = रावण के लिये वही संयोग बन गया है, *अस्तुति करहिं सुनाइ सुनाई* = मंत्री उसे सुना-सुनाकर कर यानि मुँह पर प्रशंसा करते हैं।

रावण के मंत्रियों की सलाह उसके लिये सहायक बन गई। यहाँ पर सहायक से आशय है, उसके विनाश में सहायक बन गई। वे सब मंत्री रावण के सामने सुना-सुना कर उसकी प्रशंसा करते हैं। नीति के अनुसार प्रशंसा पीठ पीछे करो, निंदा सामने करो। पर लोग जिनकी पीठ पीछे निंदा करते हैं,

उन्हीं की सामने प्रशंसा करते हैं। प्रशंसा करना अच्छा है, पर मुँह पर प्रशंसा करना ठीक नहीं माना जाता।

विभीषण राजदरबार में आये, रावण उसकी सलाह पूछता है

अवसर जानि बिभीषनु आवा। भ्राता चरन सीसु तेहिं नावा॥ 38.2॥
पुनि सिरु नाइ बैठ निज आसन। बोला बचन पाइ अनुसासन॥ 38.3॥
जौं कृपाल पूँछिहु मोहि बाता। मति अनुरूप कहउँ हित ताता॥ 38.4॥

अवसर जानि बिभीषनु आवा = इसी समय विभीषण आते हैं, *भ्राता चरन सीसु तेहिं नावा* = भाई के चरण में शीश झुकाकर प्रणाम करते हैं। *पुनि सिरु नाइ बैठ निज आसन* = फिर वे सिर नवाकर अपने आसन पर बैठ गये, *बोला बचन पाइ अनुसासन* = और आज्ञा पाकर बोले, *जौं कृपाल पूँछिहु मोहि बाता* = आपने कृपा करके मुझसे सलाह माँगी है, *मति अनुरूप* = मैं अपनी बुद्धि के अनुसार, *कहउँ हित ताता* = आपके हित की बात कहता हूँ।

राजदरबार में विभीषण आ जाते हैं। वे अपने बड़े भाई रावण को प्रणाम करके अपने आसन पर बैठ जाते हैं। विभीषण कुटिल नहीं, धर्मपरायण व नीतिपरायण हैं। चर्चा चल ही रही थी कि सेना समुद्र के किनारे आ गई है, इसलिए रावण ने विभीषण से पूछ लिया कि मंत्री ऐसा कहते हैं, तुम क्या कहते हो? विभीषण कहते हैं, आपने कृपा करके मुझसे सलाह माँगी है, तो मैं अपनी बुद्धि के अनुसार, आपके हित की बात कहता हूँ। रावण के हित की बात जो विभीषण बतला रहे हैं वह हम सबके हित की भी बात है। ध्यान से समझकर जीवन में धारण करने का अभ्यास करना चाहिये।

परायी स्त्री की तरफ न देखने से ही कल्याण

जो आपन चाहै कल्याना। सुजसु सुमति सुभ गति सुख नाना॥ 38.5॥
सो परनारि लिलार गोसाईं। तजउ चउथि के चंद कि नाईं॥ 38.6॥

जो आपन = जो व्यक्ति अपना , *चाहै कल्याना* = कल्याण चाहता है, *सुजसु सुमति सुभ गति सुख नाना* = सुंदर यश, सद्बुद्धि, शुभ गति और तरह-तरह के सुख चाहता है। *सो* = उसे, *परनारि लिलार* = परायी स्त्री के

ललाट को, *गोसाईं* = हे नाथ, *तजउ चउथि के चंद कि नाईं* = चौथ के चन्द्रमा की तरह त्याग दे।

विभीषण अभी सीधा रावण को न कहकर सामान्य व्यक्ति के लिये कहते हैं। जो व्यक्ति अपना कल्याण चाहता है, संसार में यश चाहता है, सुख चाहता है, अच्छी बुद्धि चाहता है और मरने के बाद सद्‌गति भी चाहता है, उसे परायी स्त्री के मुख को त्याग देना चाहिये। यानि उसकी तरफ देखना ही नहीं चाहिये। उदाहरण देते हैं – जिस तरह चौथ के दिन का चंद्रमा देखने से पाप लगता है, लोग उस दिन चंद्रमा की तरफ नहीं देखते, उसी तरह परायी स्त्री की तरफ आँख उठाकर मत देखो। यह धर्म का सूत्र है।

दूसरों को कष्ट देने से शक्तिशाली का भी नाश

चौदह भुवन एक पति होई। भूतद्रोह तिष्टइ नहिं सोई॥38.7॥
गुन सागर नागर नर जोऊ। अलप लोभ भल कहइ न कोऊ॥38.8॥

चौदह भुवन = यदि चौदह भुवनों का, *एक पति होई* = एक ही स्वामी हो, *भूतद्रोह* = जीवों को कष्ट दे, *तिष्टइ नहिं सोई* = तो वह भी नष्ट हो जाता है। *गुन सागर नागर नर जोऊ* = कोई व्यक्ति यदि गुणों का समुद्र व बहुत चतुर हो, *अलप लोभ* = पर उसे थोड़ा-सा भी लोभ हो, *भल कहइ न कोऊ* = तो उसे कोई भला नहीं कहता है।

विभीषण कहते हैं कि साधारण व्यक्ति की बात छोड़ दें, यदि कोई इतना बड़ा है कि वह चौदहों भुवनों का स्वामी है, वह भी अगर अन्य प्राणियों को कष्ट देता है, हिंसा करता है तो उसका विनाश हो जाता है। कोइ व्यक्ति गुणों से भरपूर है और बड़ा चतुर है, पर उसे थोड़ा भी लोभ है तो उसके लिये अच्छा नहीं। उसे लोभ छोड़ देना चाहिये।

काम, क्रोध, लोभ व मद नर्क के द्वार, इन्हें छोड़ राम-राम कहें

काम क्रोध मद लोभ सब नाथ नरक के पंथ।
सब परिहरि रघुबीरहि भजहु भजहिं जेहि संत॥ दोहा 38॥

काम क्रोध मद लोभ सब = काम, क्रोध, मद और लालच, *नाथ नरक के पंथ* = हे नाथ, ये सब नरक जाने के रास्ते हैं। *सब परिहरि* = सब छोड़कर, *रघुबीरहि* = श्रीराम को, *भजहु* = भजिये, *भजहिं जेहि संत* = जिन्हें संत लोग भी भजते हैं।

तरह-तरह की वस्तुओं की कामना करने को *काम* कहते हैं। क्रोधी व्यक्ति क्रोध को सही ठहराता है, कहता है, अरे! क्रोध नहीं करेंगे तो सब खा जायेंगे हमें। मद मायने घमण्ड, यह तो सबसे बड़ा चोर है, कब आये पता नहीं चलता। लोभ मायने और धन आये, और संपत्ति आये, कभी संताोष ही नहीं होता। व्यक्ति को पता ही नहीं चलता कि वह लोभी है। सोचता है, सब धन एकत्रित करते हैं, हम भी करें। विभीषण कहते हैं, ये चारों नरक के दरवाजे हैं, इन्हीं से नकारात्मक वृत्तियाँ हमारे मन में घुसती हैं। ये वृत्तियाँ धीरे-धीरे हमारे मन को दूषित करती हैं, हमारा मन अशांत हो जाता है, चिंता, भय व दुःख से हम पीड़ित हो जाते हैं। इसे ही कहते हैं जीवन का नरक बन जाना। हम अंदर देख ही नहीं पाते, हमें पता ही नहीं कि अंदर नरक उत्पन्न हो रहा है। स्वप्न में भी यदि भय, चिंता और दुःख आने लगे तो समझें कि हम नरक की दशा प्राप्त कर चुके हैं। इस प्रकार नरक जाग्रत अवस्था में है, स्वप्न में भी है और जब शरीर छूट जाता है, मर जाते हैं, तब भी ये नकारात्मक वृत्तियाँ हमारे साथ जाती हैं। जहाँ भी जीव रहेगा कष्ट मिलता रहेगा। इसलिये संत लोग जिस राम का भजन करते हैं, सब छोड़कर उसे करो। भजन करने, भगवान का स्मरण करने, जप करने से मन शांत होगा, नकारात्मक वृत्तियाँ दूर होंगी।

राम के ब्रह्म वाले लक्षण बताकर विभीषण समझाते हैं

तात राम नहिं नर भूपाला। भुवनेस्वर कालहु कर काला॥39.1॥
ब्रह्म अनामय अज भगवंता। ब्यापक अजित अनादि अनंता॥39.2॥

तात राम नहिं नर भूपाला = हे तात राम मनुष्यों के राजा नही हैं, *भुवनेस्वर* = वे समस्त लोकों के स्वामी, *कालहु कर काला* = काल के भी काल हैं। *ब्रह्म* = परब्रह्म परमात्मा, *अनामय* = विकाररहित, *अज* = अजन्मा हैं, *भगवंता* = ईश्वर हैं, *ब्यापक* = सर्वव्यापी हैं, *अजित* = कोई जीत नहीं सकता, *अनादि* = उनका कोई आरंभ नहीं है, *अनंता* = कभी समाप्त नहीं होते।

विभीषण कहते हैं, हे तात, आप श्रीराम को मनुष्यों जैसा राजा मत समझो। वे तो चौदहों भुवन के स्वामी हैं, काल के भी काल हैं। राम साक्षात् परब्रह्म परमेश्वर ही हैं। राम में कोई विकार नहीं है, वे शुद्ध हैं। उनकी उत्पत्ति नहीं होती, वे अपनी सत्ता से ही विद्यमान हैं। राम ही भगवान हैं। वे सर्वत्र व्याप्त हैं। उन्हें कोई जीत नहीं सकता। वे कब से हैं, इसकी कोई जानकारी ही नहीं है। वे सदा से हैं। उनका कभी नाश नहीं होता, वे अनंत हैं।

श्रीराम के सगुण रूप अवतार की बात रावण को समझाते हैं

गो द्विज धेनु देव हितकारी। कृपासिंधु मानुष तनुधारी॥39.3॥
जन रंजन भंजन खल ब्राता। बेद धर्म रच्छक सुनु भ्राता॥39.4॥

गो = पृथ्वी, *द्विज* = शास्त्रों के ज्ञाता, *धेनु* = गाय, *देव* = देवता, *हितकारी* = इनके हित के लिये, *कृपासिंधु* = कृपा के सागर, *मानुष तनुधारी* = मनुष्य शरीर धारण करते हैं। *जन रंजन* = भक्तों को सुख देने वाले, *भंजन खल ब्राता* = दुष्टों के समूह का नाश करने वाले, *बेद धर्म रच्छक* = वेद व धर्म की रक्षा करने वाले हैं, *सुनु भ्राता* = हे भाई सुनो।

अब विभीषण कहते हैं कि पृथ्वी, शास्त्रों के ज्ञाता द्विजों, गउओं व देवताओं के हित के लिये, इन पर कृपा करने के लिये उसी ब्रह्म ने मनुष्य रूप में अवतार लिया है, यही राम हैं। श्रीराम भक्तों को प्रसन्नता प्रदान करने वाले हैं। दुष्टों के समूहों का विनाश करने वाले हैं। वे वेद और धर्म की रक्षा करने वाले हैं।

प्रभु राम को सीता देकर उनकी शरण में जाओ

ताहि बयरु तजि नाइअ माथा। प्रनतारित भंजन रघुनाथा॥39.5॥
देहु नाथ प्रभु कहुँ बैदेही। भजहु राम बिनु हेतु सनेही॥39.6॥

ताहि बयरु तजि = उनसे शत्रुता छोड़कर, *नाइअ माथा* = उन्हें प्रणाम करिये, *प्रनतारित भंजन रघुनाथा* = वे राम जी शरण में आये के दु:ख दूर करते हैं। *देहु नाथ प्रभु कहुँ बैदेही* = हे नाथ, उन प्रभु को सीता जी दे दीजिये, *भजहु राम* = श्रीराम का भजन करिये, *बिनु हेतु सनेही* = वे बिना किसी लालच के स्नेह करते हैं।

इतना सब समझाने के बाद अब विभीषण साफ-साफ कह देते हैं कि श्रीराम से वैर छोड़ो, उन्हें प्रणाम करो, श्रीराम शरण में आये के दुःख दूर करते हैं, सीता जी को लेकर स्वयं जाओ, उन्हें सीता जी दे दो, राम का स्मरण करो। श्रीराम बिना किसी लालच के सबसे स्नेह रखते हैं।

शरण में जाने से श्रीराम तुम्हें क्षमा कर अपना लेंगे

सरन गएँ प्रभु ताहु न त्यागा। बिस्व द्रोह कृत अघ जेहि लागा॥39.7॥
जासु नाम त्रय ताप नसावन। सोइ प्रभु प्रगट समुझु जियँ रावन॥39.8॥

सरन गएँ प्रभु ताहु न त्यागा = शरण में जाने से श्रीराम उसको भी नहीं त्यागते हैं, *बिस्व द्रोह कृत* = संपूर्ण संसार के द्रोह का, *अघ* = पाप, *जेहि लागा* = जिसके ऊपर लगा हो। *जासु नाम त्रय ताप नसावन* = जिसका नाम ही तीनों तरह के तापों को नष्ट कर देता है, *सोइ प्रभु प्रगट* = उसी राम ने अवतार लिया है, *समुझु जियँ रावन* = हे रावण, अपने हृदय में ऐसा समझो।

विभीषण शरण में जाने की बात कहकर रावण को विश्वास दिलाता है कि सारा संसार जिसका दुश्मन हो गया हो, ऐसा व्यक्ति भी यदि राम की शरण में जाता है तो वे उसे त्यागते नहीं बल्कि स्वीकार कर लेते हैं। राम राम राम कहने मात्र से ही तीनों तरह के कष्ट, मायने दैहिक, दैविक व भौतिक नष्ट हो जाते हैं। ये वही राम हैं जिन्होंने अवतार लिया है, ऐसा अपने मन में समझ लो।

विभीषण राम का भजन करने की विनती करते हैं

बार बार पद लागउँ बिनय करउँ दससीस।
परिहरि मान मोह मद भजहु कोसलाधीस॥ दोहा 39 क॥

बार बार पद लागउँ = बार-बार आपके चरण लगता हूँ, *बिनय करउँ दससीस* = हे दशशीश आपसे विनती करता हूँ। *परिहरि मान मोह मद* = अहंकार, मोह और मद को त्यागकर, *भजहु कोसलाधीस* = कोसलपुर के राजा श्रीराम का भजन करो।

हे रावण, मैं बार-बार तुम्हारे चरणों में प्रणाम करके विनती करता हूँ कि अपना मान, अहंकार, मोह व मद छोड़कर कोसलपुर के राजा राम की शरण में जाओ। उनका स्मरण करो, इसी में कल्याण है।

मुनि पुलस्ति ने भी यही संदेश भेजा है

मुनि पुलस्ति निज सिष्य सन कहि पठई यह बात।
तुरत सो मैं प्रभु सन कही पाइ सुअवसरु तात॥ दोहा 39 ख॥

मुनि पुलस्ति = मुनि पुलस्ति ने, *निज सिष्य सन* = अपने शिष्य से, *कहि पठई यह बात* = यह बात कहकर भेजी थी। *तुरत सो मैं प्रभु सन कही* = वही बात मैने आपसे तुरंत कह दी, *पाइ सुअवसरु तात* = हे तात ठीक अवसर पाकर के।

रावण के दादा मुनि हैं जिनका नाम पुलस्ति है। विभीषण कहते हैं कि मुनि पुलस्ति ने जो बात अपने शिष्य से कहलवाकर हमारे पास भेजी थी वही बात अभी मैंने आपसे कही है। यह मत समझिये कि यह मेरी सलाह है, यह तो दादाजी की सलाह है। जब मौका मिला, आपने हमसे पूछा, तो हमने कह दिया।

विभीषण की सलाह का मंत्री माल्यवंत समर्थन करते हैं

माल्यवंत अति सचिव सयाना। तासु बचन सुनि अति सुख माना॥ 40.1॥
तात अनुज तव नीति बिभूषन। सो उर धरहु जो कहत बिभीषन॥ 40.2॥

माल्यवंत अति सचिव सयाना = माल्यवंत नाम का एक बुद्धिमान मंत्री था, *तासु बचन सुनि* = उसे विभीषण की बातें सुनकर, *अति सुख माना* = बहुत अच्छा लगा, *तात अनुज तव* = हे तात तुम्हारा छोटा भाई, *नीति बिभूषन* = नीति की बात कहता है, *सो उर धरहु जो कहत बिभीषन* = जो विभीषण कहता है, उसे हृदय में धारण करो।

माल्यवंत रावण के नाना हैं जो कि दरबार में मौजूद हैं। वे रावण के बुद्धिमान मंत्री भी हैं। उन्हें विभीषण की यह सलाह अच्छी लगी। वे रावण से कहते हैं, हे तात तुम्हारा छोटा भाई विभीषण नीति की बात कहता है, इसकी बात को तुम हृदय में धारण करो। मतलब सीता जी को वापस करो, श्रीराम की शरण में जाओ।

रावण कहता है, भगाओ दोनों को, माल्यवंत चले जाते हैं

रिपु उतकरष कहत सठ दोऊ। दूरि न करहु इहाँ हइ कोऊ॥ 40.3॥
माल्यवंत गृह गयउ बहोरी। कहइ बिभीषनु पुनि कर जोरी॥ 40.4॥

रिपु = दुश्मन, *उतकरष कहत* = की महिमा कहते हैं, *सठ दोऊ* = ये दोनों मूर्ख, *दूरि न करहु इहाँ हइ कोऊ* = अरे यहाँ कोई है जो इन्हें यहाँ से भगाये। *माल्यवंत गृह गयउ* = माल्यवंत अपने घर चले गये, *बहोरी* = फिर से, *कहइ बिभीषनु पुनि कर जोरी* = हाथ जोड़कर विभीषण कहने लगे।

माल्यवंत व विभीषण की बातें सुनकर रावण क्रोधित होकर कहता है, अरे ये दोनों शठ शत्रु की महिमा बता रहे हैं, भगाओ इन दोनों को यहाँ से। माल्यवंत समझ गये कि और बेइज्जती कराना ठीक नहीं है, वे चुपचाप उठकर अपने घर चले गये। विभीषण छोटा भाई होने के कारण अपने को अपमानित नहीं मानते, सोचते हैं बड़े भाई ने डाँट दिया, कोई बात नहीं है। वे फिर हाथ जोड़कर कुछ और कहते हैं।

विभीषण कहते हैं कि सुमति से संपत्ति, कुमति से संकट

सुमति कुमति सब कें उर रहहीं। नाथ पुरान निगम अस कहहीं॥ 40.5॥
जहाँ सुमति तहँ संपति नाना। जहाँ कुमति तहँ बिपति निदाना॥ 40.6॥

सुमति = अच्छी बुद्धि, *कुमति* = खराब बुद्धि, *सब कें उर रहहीं* = सबके हृदय में रहती हैं, *नाथ* = हे नाथ, *पुरान निगम अस कहहीं* = पुराण व वेद ऐसा कहते हैं। *जहाँ सुमति* = जहाँ अच्छी बुद्धि है, *तहँ संपति नाना* = वहाँ तरह-तरह की संपत्ति है, *जहाँ कुमति* = जहाँ खराब बुद्धि है, *तहँ बिपति निदाना* = वहाँ बहुत विपत्तियाँ हैं।

विभीषण कहते हैं कि सबके अंदर में बुद्धि होती है। बुद्धि कभी सुमति बनकर सही निर्णय लेती है तो कभी वही बुद्धि कुमति बनकर गलत निर्णय ले लेती है। हे नाथ, ऐसा पुराण व शास्त्र कहते हैं। जहाँ सुमति होती है, वहाँ संपत्ति होती है मायने मंगल, मोद, प्रसन्नता रहती है। जहाँ कुमति होती है, वहाँ तरह-तरह की परेशानियाँ, तनाव आदि रहते हैं।

आपके अंदर कुमति है, जिससे शत्रु प्रिय लग रही है

तव उर कुमति बसी बिपरीता। हित अनहित मानहु रिपु प्रीता॥ 40.7॥
कालराति निसिचर कुल केरी। तेहि सीता पर प्रीति घनेरी॥ 40.8॥

तव उर कुमति बसी बिपरीता = आपके हृदयँ में उल्टी बुद्धि आ गयी है, *हित अनहित* = हित की बात अनहित लगती है, *मानहु रिपु प्रीता* = दुश्मन को प्रिय मान रहे हो। *कालराति निसिचर कुल केरी* = जो राक्षसकुल के लिये काल रात्रि के समान हैं, *तेहि सीता पर* = उस सीता पर, *प्रीति घनेरी* = आपकी बड़ी प्रीति है।

आपके हृदय में कुमति बैठ गई है जिससे आपको हित की बात अहित लगती है और शत्रु प्रिय लगता है। निसिचर कुल के लिये सीता कालरात्रि के समान हैं, ये निशाचरों का विनाश कर देंगी। यही सीता आपको प्रिय लग रही हैं।

बच्चे जैसे जिद करके विभीषण कहते हैं–मेरी बात मानिये

तात चरन गहि मागउँ राखहु मोर दुलार।
सीता देहु राम कहुँ अहित न होइ तुम्हार॥ दोहा 40॥

तात = हे तात, *चरन गहि मागउँ* = मैं चरण पकड़कर माँगता हूँ, *राखहु मोर दुलार* = मेरा दुलार रखिये, *सीता देहु राम कहुँ* = राम को सीता दे दीजिये, *अहित न होइ तुम्हार* = इसमें आपका कोई अहित नहीं होगा।

सब तरह से समझाने के बाद भी रावण पर कोई असर नहीं हुआ। तब विभीषण कहते हैं कि मैं आपके चरण पकड़कर विनती करता हूँ कि मेरा दुलार रखते हुए, मेरी बात मानकर सीता राम को दे दीजिये। इसमें आपका कोई अहित नहीं होगा। जिस तरह छोटा बच्चा जिद करके माता-पिता से कुछ माँगता है, वे जानते हैं कि यह गलत माँग कर रहा है, पर अपने बच्चे के प्रति दुलार के कारण उसकी बात मानकर जिद पूरी कर देते हैं, उसी तरह विभीषण कहता है कि यदि हमारी बात गलत भी है तो भी छोटे भाई के प्रति दुलार के नाते गलत बात ही मान लो और राम को सीता वापस कर दो।

क्रोधित रावण विभीषण को डाँटकर लात मारकर भगा देता है

बुध पुरान श्रुति संमत बानी। कही बिभीषन नीति बखानी॥ 41.1 ॥
सुनत दसानन उठा रिसाई। खल तोहि निकट मृत्यु अब आई॥ 41.2 ॥
जिअसि सदा सठ मोर जिआवा। रिपु कर पच्छ मूढ़ तोहि भावा॥ 41.3 ॥
कहसि न खल अस को जग माहीं। भुज बल जाहि जिता मैं नाहीं॥ 41.4 ॥
मम पुर बसि तपसिन्ह पर प्रीती। सठ मिलु जाइ तिन्हहि कहु नीती॥ 41.5 ॥
अस कहि कीन्हेसि चरन प्रहारा। अनुज गहे पद बारहिं बारा॥ 41.6 ॥

बुध पुरान श्रुति = बुद्धिमानों, पुराणों व वेदों, *संमत बानी* = द्वारा अनुमोदित बात, *कही बिभीषन* = विभीषण ने कही, *नीति बखानी* = नीति को बताया। *सुनत दसानन उठा रिसाई* = यह सुनकर रावण क्रोधित होकर खड़ा हो गया, *खल* = रे दुष्ट, *तोहि निकट मृत्यु अब आई* = तेरी मृत्यु अब आ गई है। *जिअसि सदा* = तू सदा जीता तो है, *सठ मोर जिआवा* = रे मूर्ख, मेरे जिलाने से, *रिपु कर पच्छ* = शत्रु का पक्ष, *मूढ़ तोहि भावा* = मूर्ख, तुझे अच्छा लगता है। *कहसि न खल अस को जग माहीं* = रे दुष्ट, बता तो संसार में ऐसा कौन है, *भुज बल जाहि* = जिसे अपनी भुजाओं के बल से, *जिता मैं नाहीं* = मैनें जीता नहीं हो। *मम पुर बसि* = मेरे नगर में रहकर, *तपसिन्ह पर प्रीती* = तपस्वियों पर प्रेम करता है, *सठ मिलु जाइ* = रे मूर्ख उन्हीं से जा मिल, *तिन्हहि कहु नीती* = और उन्हीं को नीति की बात बता। *अस कहि कीन्हेसि चरन प्रहारा* = ऐसा कहकर रावण ने विभीषण को लात मार दी, *अनुज गहे पद बारहिं बारा* = पर छोटे भाई विभीषण ने उसके बार-बार पैर पकड़े।

विभीषण ने जो नीति की बातें रावण को समझाईं, वे बुद्धिमानों, पुराणों व श्रुतियों के अनुसार ही थीं। ये बातें सुनकर रावण क्रोध में आकर अपने सिंहासन से खड़ा हो जाता है। विभीषण को डाँटते हुए कहता है–रे दुष्ट, तेरी मृत्यु अब निकट आ गई है। अभी तक तो तू मेरे जिलाने से ही जी रहा था। मेरा ही अन्न खाकर तू बड़ा हुआ, सब सुख-सुविधा तुझे मैंने दे रखी है। पर तू मेरे हित की बात न करके मेरे शत्रु के पक्ष की बातें करता है। रावण विभीषण से पूछता है कि बता, मेरे से शक्तिशाली इस संसार में कौन है, जिसको मैंने अपनी भुजाओं के बल से न जीता हो? मेरे नगर में रहता है, परन्तु प्रेम उन तपस्वियों से करता है। रे सठ, उन्हीं के पास जा, उन्हें ही नीति

की बातें समझा। ये सब बातें कहते-कहते रावण विभीषण के पास पहुँच गया, और उसे लात मार दी। पर विभीषण ने रावण के पैर पकड़ लिये और बार-बार विनती की।

अहंकारी सोचता है, हम सबको पालते हैं, इसलिए सब हमारी मानें

अहंकारी व्यक्ति की कामना रहती है, जो मैं कहूँ वही सब करें। यदि उनके अनुसार नहीं करोगे तो उन्हें क्रोध आता है। कई बार व्यक्ति यह समझने लगता है कि मैं ही अपने से छोटों का, अपने अधीन व्यक्तियों का लालन-पालन कर रहा हूँ, उन्हें खिला रहा हूँ, उन्हें सुख-सुविधा दे रहा हूँ। यदि मैं इनके लिये नहीं करूँगा तो ये भूखे मर जायेंगे। इसलिये ये हमारी सब बातें मानें, हम जैसा कहें वैसा करें। शास्त्र कहता है कि व्यक्ति को ऐसा भ्रम नहीं पालना चाहिए। ईश्वरीय शक्ति ही सब कुछ कर रही है, ऐसा भाव मन के अंदर रखने का अभ्यास करना चाहिये। इससे मन शांत रहेगा, सब कार्य सुगमता से होंगे।

संत का लक्षण – बुराई के बदले भलाई

उमा संत कइ इहइ बड़ाई। मंद करत जो करइ भलाई॥ 41.7॥

उमा संत कइ इहइ बड़ाई = उमा, संत की यही महिमा है कि, *मंद करत* = बुराई करने वाले की, *जो करइ भलाई* = भी भलाई ही करते हैं।
शंकर जी पार्वती जी को कथा सुनाते हुए उसका रहस्य व महत्त्व भी बतलाते हैं। शंकर जी कहते हैं कि उमा, संत की यह महिमा है कि उसके साथ कोई दुर्व्यवहार करे तो भी वह उसकी भलाई ही करता है। संत को अपने कष्ट से कोई कष्ट नहीं। दूसरे को कष्ट न पहुँचे, दूसरे का भला हो, यही लक्षण संत व भक्त के होते हैं।

विभीषण आकाश मार्ग से श्रीराम के पास चल देते हैं

तुम्ह पितु सरिस भलेहिं मोहि मारा। रामु भजें हित नाथ तुम्हारा॥ 41.8॥
सचिव संग लै नभ पथ गयऊ। सबहि सुनाइ कहत अस भयऊ॥ 41.9॥

रामु सत्यसंकल्प प्रभु सभा कालबस तोरि।
मैं रघुबीर सरन अब जाउँ देहु जनि खोरि॥ दोहा 41॥

तुम्ह पितु सरिस = आप पिता के समान हो, *भलेहिं मोहि मारा* = हमें मार लिये कोइ बात नहीं, *रामु भजें हित नाथ तुम्हारा* = पर राम के स्मरण में ही आपका हित है। *सचिव संग लै* = अपने मंत्रियों को साथ लेकर, *नभ पथ गयऊ* = आकाश मार्ग से चल दिया, *सबहि सुनाइ कहत अस भयऊ* = सबको सुनाकर ऐसा कहने लगा।
रामु सत्यसंकल्प = राम जी का संकल्प सत्य है, *प्रभु* = हे नाथ, *सभा कालबस तोरि* = तुम्हारी सभा काल के बस में है, *मैं रघुबीर सरन अब जाउँ* = मैं अब श्रीराम की शरण में जाऊँगा, *देहु जनि खोरि* = कोई हमें दोष मत देना।

रावण के लात मारने पर भी विभीषण को क्रोध नहीं आया। वे कहते हैं, आप तो हमारे पिता के समान हो, आपने भले ही मुझे मारा है, उसमें मेरी हानि नहीं है। हे नाथ, हम अपनी ओर से यही कहेंगे कि आप राम का भजन करो। रावण के भगाने पर विभीषण दरबार से बाहर निकलते हुए सबको सुना-सुना कर कहते हैं कि श्रीराम सत्यसंकल्प हैं। जो उनका संकल्प होता है वही सत्य होता है। हे रावण, तुम्हारी सभा अब काल के बस में है। मैं श्रीराम की शरण में जा रहा हूँ, अब हमें कोई दोष मत देना। विभीषण के अपने सलाहकार मंत्री थे, उनको लेकर वे आकाश मार्ग से श्रीराम की शरण में चल देते हैं।

13. विभीषण श्रीराम शरण में, भक्ति व लंका का राजपद पाया

(दोहा 42 से दोहा 50)
तुलसीदास जी इस प्रसंग का वर्णन 9 दोहों में करते हैं। वास्तव में हम सब की दशा भी विभीषण जैसी है। बनते तो भगवान के भक्त हैं, पर सेवा करते हैं काम, क्रोध, लोभ, मोह की। रावण द्वारा राज्य से निकाल देने पर विभीषण श्रीराम के चरणों का स्मरण करते हुए उनके पास जा रहे हैं, मन में शंका है कि वे अपनायेंगे कि नहीं। सुग्रीव उसे बंधक बनाना चाहते हैं पर राम जी शरण में आये की रक्षा का वचन निभाते हुए अपने पास बुला लेते हैं। विभीषण दूर से ही प्रभु का दर्शन कर भावविभोर हो जाते हैं, दण्डवत् प्रणाम करते हैं और श्रीराम उन्हें उठाकर अपने हृदय से लगा लेते हैं। विभीषण अपनी कमियाँ बताते हैं, श्रीराम अपना स्वभाव बताते हैं। राम के प्रेम में विभीषण के मन की सारी इच्छायें बहकर समाप्त हो जाती हैं। अब उन्हें कुछ चाहिये ही नहीं। जब कुछ नहीं चाहिये तो श्रीराम उन्हें लंका का राजा बना देते हैं। वे भक्ति माँगते

हैं, श्रीराम भक्ति भी दे देते हैं। इस प्रकार श्रीराम की शरण में जाने से विभीषण को लंका जैसे विशाल देश का राज्य मिला और श्रीराम की भक्ति जो बहुत दुर्लभ है, वह भी प्राप्त हो गयी। इसके बाद वे तुरंत भगवान की सेवा में लग जाते हैं, समुद्र से विनती की सलाह देते हैं, आगे भी सेवा कार्य करते हैं। हमें भी धीरे-धीरे अभ्यास करके राम चरणों में प्रेम उत्पन्न करना चाहिये। उस प्रेम में ही मन लगाकर तमाम वासनाओं को बहा दें, मन शांत होगा, प्रभु की कृपा होगी, संसार की तमाम वस्तुयें अपने आप मिलेंगी। प्रभु चरणों में भक्ति से सुख, संतोष व शांति, सब चीजों की प्राप्ति होगी। इसके बाद दूसरों की सेवा में लग जायें। यही भगवान का सबसे बड़ा कार्य है।

विभीषण के जाते ही रावण तेजहीन एवं निशाचर आयुहीन

अस कहि चला बिभीषनु जबहीं। आयूहीन भए सब तबहीं॥ 42.1 ॥
साधु अवग्या तुरत भवानी। कर कल्यान अखिल कै हानी॥ 42.2 ॥
रावन जबहिं बिभीषन त्यागा। भयउ बिभव बिनु तबहिं अभागा॥ 42.3 ॥

अस कहि चला बिभीषनु जबहीं = ऐसा कहकर विभीषण जैसे ही चला, *आयूहीन भए सब तबहीं* = त्यों ही सब राक्षस आयुहीन हो गये। *साधु अवग्या तुरत भवानी* = हे भवानी, साधु के अपमान का फल तुरन्त होता है, *कर कल्यान अखिल कै हानी* = संपूर्ण कल्याण का नाश कर देता है। *रावन जबहिं बिभीषन त्यागा* = रावण ने जिस क्षण विभीषण को त्यागा, *भयउ बिभव बिनु तबहिं अभागा* = उसी क्षण उस अभागे का ऐश्वर्य चला गया।

ऐसा कहकर विभीषण लंका से जब चल दिये तो सबकी आयु समाप्त हो गई, वे सब मृत्यु के निकट पहुँच गये। शंकर जी पार्वती जी से कहते हैं कि साधु की बात न मानने से समस्त कल्याण की हानि होती है। विभीषण के छोड़कर जाने से उस अभागे रावण की सारी शक्ति व तेज कमजोर हो गया।

विभीषण प्रसन्नता से राम के पास चल दिये

चलेउ हरषि रघुनायक पाहीं। करत मनोरथ बहु मन माहीं॥ 42.4 ॥
देखिहउँ जाइ चरन जलजाता। अरुन मृदुल सेवक सुखदाता॥ 42.5 ॥

चलेउ हरषि रघुनायक पाहीं = विभीषण प्रसन्नतापूर्वक राम जी के पास चले, *करत मनोरथ बहु मन माहीं* = मन में बहुत-से मनोरथ आते हैं, *देखिहउँ जाइ* = वहाँ जाकर देखूँगा, *चरन* = चरण जों, *जलजाता* = कमल के समान, *अरुन* = लाल, *मृदुल* = कोमल, *सेवक सुखदाता* = भक्तों को सुख देने वाले हैं।

विभीषण बड़ी प्रसन्नता से राम जी से मिलने जा रहे हैं। समुद्र पार करते समय विभीषण के मन में चल रहे विचारों का तुलसीदास जी वर्णन करते हैं। विभीषण मन में सोचते हैं कि वहाँ जाकर श्रीराम के चरणों का दर्शन करूँगा जो ताजे खिले हुए कमलों के समान लाल व कोमल हैं। इन चरणों का स्मरण ही भक्तों को बहुत सुख दे देता है।

पाँच कथाओं के द्वारा विभीषण राम चरण का स्मरण करते हैं

जे पद परसि तरी रिषिनारी। दंडक कानन पावनकारी॥42.6॥
जे पद जनकसुताँ उर लाए। कपट कुरंग संग धर धाए॥42.7॥
हर उर सर सरोज पद जेई। अहोभाग्य मैं देखिहउँ तेई॥42.8॥

जिन्ह पायन्ह के पादुकन्हि भरतु रहे मन लाइ।
ते पद आजु बिलोकिहउँ इन्ह नयनन्हि अब जाइ॥ दोहा 42॥

जे पद = जिन चरणों, *परसि* = का स्पर्श पाकर, *तरी रिषिनारी* = ऋषि पत्नी अहिल्या तर गईं, *दंडक कानन पावनकारी* = दंडक वन पवित्र हो गया, *जे पद* = जिन चरणों को, *जनकसुताँ उर लाए* = जानकी जी हृदय में धारण किये रहती हैं, *कपट कुरंग संग धर धाए* = जो कपट मृग को पकड़ने पृथ्वी पर दौड़े थे। *हर उर* = शंकर जी के हृदय, *सर* = के सरोवर में, *सरोज पद जेई* = जो चरण कमल के समान विराजते हैं, *अहोभाग्य मैं देखिहउँ तेई* = मेरा अहोभाग्य है कि उन्हीं को मैं देखूँगा।
जिन्ह पायन्ह के पादुकन्हि = जिन चरणों की पादुकाओं में, *भरतु रहे मन लाइ* = भरत जी ने अपने मन को लगा रखा है। *ते पद* = उन्हीं चरणों को, *आजु* = आज, *बिलोकिहउँ* = मैं देखूँगा, *इन्ह नयनन्हि अब जाइ* = अब इन्हीं नेत्रों से वहाँ पहुँचकर।

तुलसीदास जी विभीषण के हृदय में उठ रहे राम चरण दर्शन की उत्सुकता को श्रीरामचरितमानस में वर्णित 5 कथाओं से बता रहे हैं। इन कथाओं का स्मरण करने से भगवान के चरणों में प्रेम उत्पन्न होगा व हमारे जीवन में सुख-शांति अवश्य आयेगी।

1 – गौतम ऋषि की पत्नी श्राप से पत्थर की मूर्ति बन गई थी, श्रीराम ने विश्वामित्र जी के कहने से अपने चरणों का स्पर्श उस मूर्ति में कराया, वह जीवंत हो गई। उसने श्रीराम की स्तुति की और अपने पति के पास चली गयी। उन्हीं चरणों के दर्शन आज मुझे होंगे।

2 – श्रीराम के चरण दंडकवन में पड़ने से वह वन श्रापमुक्त होकर फिर से हरा-भरा हो गया।

3 – सीता जी ने आखिरी बार श्रीराम के चरण तभी देखे थे जब वे कपट मृग को मारने उसके पीछे दौड़े थे। उन चरणों को ही सीता जी तब से अपने हृदय में संजोकर रखी हैं। उनका मन श्रीराम के उन्हीं चरणों में लगा रहता है। वही चरण मैं भी देखूँगा।

4 – शंकरजी अपने हृदय-सरोवर में सदैव श्रीराम के कमल समान चरणों का दर्शन करते रहते हैं। मेरा इतना बड़ा भाग्य है कि मैं भी उन्हीं चरणों का दर्शन करूँगा।

5 – चित्रकूट में श्रीराम ने अपने चरणों की पादुकायें भरत जी को दी थीं। भरत जी अयोध्या में राम के इंतजार में उन्हीं पादुकाओं की पूजा-अर्चना करते हैं, उन्हीं में अपने मन को लगाये रहते हैं। ऐसे महान् चरणों को मैं अपने इन नेत्रों से देखूँगा।

विभीषण समुद्र पार आये, सुग्रीव राम जी को सूचना देते हैं

एहि बिधि करत सप्रेम बिचारा। आयउ सपदि सिंधु एहिं पारा॥ 43.1॥
कपिन्ह बिभीषनु आवत देखा। जाना कोउ रिपु दूत बिसेषा॥ 43.2॥
ताहि राखि कपीस पहिं आए। समाचार सब ताहि सुनाए॥ 43.3॥
कह सुग्रीव सुनहु रघुराई। आवा मिलन दसानन भाई॥ 43.4॥

एहि बिधि = इस प्रकार, *करत सप्रेम बिचारा* = प्रेम सहित विचार करते हुए, *आयउ सपदि* = शीघ्र ही आ गया, *सिंधु एहिं पारा* = समुद्र के इस पार। *कपिन्ह बिभीषनु आवत देखा* = वानरों ने विभीषण को आते देखा, *जाना कोउ*

रिपु दूत बिसेषा = उन्होंने समझा कि शत्रु का कोई विशेष दूत है। *ताहि राखि* = उसको वहीं रोककर, *कपीस पहिं आए* = राजा सुग्रीव के पास आये, *समाचार सब ताहि सुनाए* = सुग्रीव को सूचना देते हैं। *कह सुग्रीव सुनहु रघुराई* = सुग्रीव राम जी के पास जाकर कहते हैं, *आवा मिलन दसानन भाई* = रावण का भाई मिलने आया है।

इस प्रकार प्रेमपूर्वक श्रीराम के चरणों का स्मरण करते हुए विभीषण शीघ्र ही समुद्र के इस पार आ गये। सैनिक शिविर के बाहर वानरों ने जब विभीषण को आते देखा तो वे समझे कि यह हमारे शत्रु रावण का कोई विशेष दूत है। विभीषण ने वानरों को बताया कि हम रावण के भाई हैं, श्रीराम के दर्शन करना चाहते हैं। वानर विभीषण को वहीं रोककर सुग्रीव को सूचना देते हैं। सुग्रीव राम जी के पास जाकर कहते हैं कि रावण का भाई विभीषण आपसे मिलने आया है।

सुग्रीव विभीषण को बंधक बनाने की सलाह देते हैं

कह प्रभु सखा बूझिऐ काहा। कहइ कपीस सुनहु नरनाहा॥ 43.5॥
जानि न जाइ निसाचर माया। कामरूप केहि कारन आया॥ 43.6॥
भेद हमार लेन सठ आवा। राखिअ बाँधि मोहि अस भावा॥ 43.7॥

कह प्रभु = राम जी कहते हैं, *सखा बूझिऐ काहा* = हे मित्र तुम्हारी क्या राय है? *कहइ कपीस* = सुग्रीव कहते हैं, *सुनहु नरनाहा* = हे महाराज सुनिये। *जानि न जाइ निसाचर माया* = राक्षसों की माया को जाना नहीं जा सकता है, *कामरूप* = अपनी इच्छा से रूप बदलकर, *केहि कारन आया* = पता नहीं किस कारण से आया हो। *भेद हमार लेन सठ आवा* = यह मूर्ख हो सकता है हमार भेद लेने आया हो, *राखिअ बाँधि* = इसे बाँध कर रखें, *मोहि अस भावा* = मुझे तो ऐसा ही ठीक लगता है।

राम जी सुग्रीव से पूछते हैं, हे मित्र बताओ तुम्हारी क्या राय है? सुग्रीव कहते हैं कि इन राक्षसों की माया जानी नहीं जा सकती, ये तो अपनी इच्छा के अनुसार तरह-तरह के रूप धारण कर लेते हैं। हो सकता है यह रावण का कोई दूत हो जो विभीषण का वेष रखकर हमारा भेद लेने आ गया हो। मेरी सलाह है कि इसे बंधक बना लें, वापस जाने न दें।

श्रीराम कहते हैं, हमारी प्रतिज्ञा है शरणागत की रक्षा करना

सखा नीति तुम्ह नीकि बिचारी। मम पन सरनागत भयहारी॥ 43.8॥
सुनि प्रभु बचन हरष हनुमाना। सरनागत बच्छल भगवाना॥ 43.9॥

सरनागत कहुँ जे तजहिं निज अनहित अनुमानि।
ते नर पावँर पापमय तिन्हहि बिलोकत हानि॥ दोहा 43॥

सखा = हे मित्र, *नीति तुम्ह नीकि बिचारी* = तुमने नीति के अनुसार तो ठीक कहा है, *मम पन* = पर मेरी प्रतिज्ञा तो, *सरनागत भयहारी* = शरण में आये का भय दूर करना है। *सुनि प्रभु बचन* = प्रभु राम के वचन सुनकर, *हरष हनुमाना* = हनुमान जी प्रसन्न हो गये, *सरनागत बच्छल भगवाना* = कि भगवान शरण में आये व्यक्ति की रक्षा करते हैं। *सरनागत कहुँ जे तजहिं* = शरण में आये व्यक्ति को जो छोड़ देता है, *निज अनहित अनुमानि* = अपने अहित का अनुमान करके। *ते नर* = वे मनुष्य, *पावँर* = क्षुद्र हैं, *पापमय* = पापमय हैं, *तिन्हहि बिलोकत हानि* = उनकी तरफ देखने में भी हानि है।

राम जी कहते हैं कि हे मित्र सुग्रीव, तुमने बहुत अच्छी नीति की बात कही है। एक राजा की दृष्टि से ठीक कहा है कि उसे बंधक बना लें। परंतु हमारी बात तो कुछ और है। हमने तो शरण में आये व्यक्ति का भय दूर करने की प्रतिज्ञा ले रखी है। यहाँ पर भय शब्द के अंतर्गत मरने का भय, हानि का भय, मान-अपमान का भय, सब आ गया। हनुमान जी प्रभु राम की बात सुनकर बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने मन में सोचा कि जो प्रभु की शरण में आता है, प्रभु उसकी रक्षा करते हैं, उसका पालन करते हैं। हनुमान जी इसलिये भी प्रसन्न हैं कि वे विभीषण को पहले ही आश्वासन दे आये थे कि रावण को छोड़कर राम की शरण में आओ, वे तुम्हें अपना लेंगे। राम जी कहते हैं कि जो अपने अहित का अनुमान करके शरणागत में आये व्यक्ति को छोड़ देते हैं, वे मनुष्य छोटे विचार के हैं, पापी हैं, उनकी ओर तो देखना भी नहीं चाहिये।

प्रभु राम का व्यवहार जीवन में उतारने लायक है

राम जी का व्यवहार देखने, समझने व जीवन में उतारने लायक है। वानरों ने सुग्रीव को खबर दी, क्योंकि वे राजा हैं। सुग्रीव कह देते, पकड़ के ले

आओ विभीषण को और बाँध लो। पर वे जानते हैं कि श्रीराम साथ में हैं, उन्हीं के अधीन युद्ध लड़ना है, इसलिये वे श्रीराम से पूछते हैं। श्रीराम भी स्वयं आदेश नहीं देते, पहले सुग्रीव की सलाह पूछते हैं। उसकी सलाह को नीति के अनुसार उचित कहते हैं। इसके बाद विनम्रता से अपने प्रण की बात बताते हैं कि हमें तो विभीषण को शरण में लेना ही पड़ेगा। प्रभु की बात से सब सहमत होकर जय-जय करते हैं। फिर विभीषण को लाते हैं। राम जी शक्तिशाली होने के बावजूद भी धैर्य और विनम्रता का परिचय देते हैं, उनके बातचीत करने का यह तरीका समझने लायक है।

मेरे सामने आते ही जीव के समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं

कोटि बिप्र बध लागहिं जाहू। आएँ सरन तजउँ नहिं ताहू॥44.1॥
सनमुख होइ जीव मोहि जबहीं। जन्म कोटि अघ नासहिं तबहीं॥44.2॥

कोटि = करोड़, *बिप्र* = शास्त्र के ज्ञाता, *बध* = की हत्या, *लागहिं जाहू* = का पाप जिसे लगा हो, *आएँ सरन* = वह भी यदि शरण में आये, *तजउँ नहिं ताहू* = तो उसे भी मैं नहीं त्यागता हूँ। *सनमुख होइ जीव मोहि जबहीं* = जब भी जीव मेरे सामने आता है, *जन्म कोटि अघ* = उसके करोड़ों जन्म के पाप, *नासहिं तबहीं* = उसी क्षण समाप्त हो जाते हैं।

शास्त्र के ज्ञाता को विप्र कहते हैं। विप्र का वध करना बहुत बड़ा पाप है। राम जी कहते हैं जिसने करोड़ों विप्रों का वध किया हो, यदि वह भी मेरी शरण में आता है तो मैं उसे स्वीकार कर लेता हूँ। इसका कारण समझाते हैं कि जीव जब मेरे सामने होता है तो उसके करोड़ों जन्म के पाप उसी क्षण नष्ट हो जाते हैं। जीव दो तरह से देखता है, एक तो संसार की तरफ जिसमें वह चाहता है और मिले, और मिले, यह भी काम हो, वह भी काम हो; दूसरा, भगवान की तरफ जिसमें वह उनका ध्यान करता है, स्मरण करता है, जप करता है। जब वह संसार की तरफ देखता है तो उसकी पीठ भगवान की तरफ रहती है, जब भगवान की तरफ देखता है तो उसका सामना भगवान से हो जाता है व संसार की तरफ पीठ हो जाती है। इस स्थिति में उसका चित्त शांत होने लगता है, पाप नष्ट होने लगते हैं, उसे शांति व सुख का अनुभव होता है।

पापी को भजन नहीं भाता, निर्मल मन है तभी तो आया है

पापवंत कर सहज सुभाऊ। भजनु मोर तेहि भाव न काऊ॥ 44.3॥
जौं पै दुष्टहृदय सोइ होई। मोरें सनमुख आव कि सोई॥ 44.4॥
निर्मल मन जन सो मोहि पावा। मोहि कपट छल छिद्र न भावा॥ 44.5॥

पापवंत कर सहज सुभाऊ = पापी का सहज स्वभाव होता है, *भजनु मोर* = मेरा भजन, *तेहि भाव न काऊ* = उसे कभी अच्छा नहीं लगता। *जौं पै दुष्टहृदय सोइ होई* = यदि वह निश्चय ही दुष्ट हृदय का होता तो, *मोरें सनमुख आव कि सोई* = तो वह मेरे सामने कैसे आ सकता था। *निर्मल मन जन* = जो मनुष्य निर्मल मन का होता है, *सो मोहि पावा* = वही मुझे पा सकता है, *मोहि* = मुझे, *कपट छल छिद्र न भावा* = कपट, छल, छिद्र अच्छे नहीं लगते।

श्रीराम कहते हैं कि पापी का सहज स्वभाव है कि उसे मेरा भजन अच्छा नहीं लगता। यदि विभीषण दुष्ट होता तो मेरी तरफ आता ही नहीं। जिसका मन निर्मल है, सत्त्वगुण प्रधान है, वही मुझे प्राप्त करता है। मुझे कपट, छल, छिद्र पसंद नहीं है। इसलिये कोई ये सब लेकर मेरे पास आ नहीं सकता। पाप के प्रभाव से भगवान में न तो विश्वास होगा, न उनकी लीला भजन या गुण में रुचि आयेगी। भगवान के प्रति भक्ति आये तो समझो कि पुण्यों का उदय हो गया है।

समस्त निशाचरों को तो लक्ष्मण क्षण में ही मार दें

भेद लेन पठवा दससीसा। तबहुँ न कछु भय हानि कपीसा॥ 44.6॥
जग महुँ सखा निसाचर जेते। लछिमनु हनइ निमिष महुँ तेते॥ 44.7॥

भेद लेन पठवा दससीसा = यदि रावण ने उसे भेद लेने भी भेजा हो तो, *तबहुँ न कछु भय हानि कपीसा* = तो भी हे सुग्रीव, हमारा उससे कोई नुकसान नहीं है। *जग महुँ सखा निसाचर जेते* = हे मित्र, संसार में जितने भी निशाचर हैं, *लछिमनु हनइ निमिष महुँ तेते* = लक्ष्मण क्षणभर में सबको मार सकता है।

अगर तुम्हारी यह बात मान लें कि रावण ने इसे भेद लेने के लिये भेजा है, तो उससे भी अपना कोई नुकसान नहीं है। हे सखा, हमारे छोटे भाई लक्ष्मण

में ही इतनी ताकत है कि एक रावण और लंका तो क्या, संसार में जितने भी निशाचर है, उन्हें एक क्षण में ही वह मार सकता है। भगवान के पास तो कुछ छिपा नहीं है, सब खुला है। यदि कोई उनका भेद लेना चाहे तो ले ले। वे तो चाहते ही हैं कि कोई हमारा भेद ले, हमें समझे, हमारा ज्ञान प्राप्त करे।

राम हँसकर कहते हैं कि विभीषण को लेकर आओ

जौं सभीत आवा सरनाईं। रखिहउँ ताहि प्रान की नाईं॥ 44.8॥

उभय भाँति तेहि आनहु हँसि कह कृपानिकेत।
जय कृपाल कहि कपि चले अंगद हनू समेत॥ दोहा 44॥

जौं सभीत = यदि वह भयभीत होकर, *आवा सरनाईं* = मेरी शरण में आया है, *रखिहउँ ताहि प्रान की नाईं* = तो मैं उसको अपने प्राणों के समान रखूँगा। *उभय भाँति* = दोनों ही स्थिति में, *तेहि आनहु* = उसे आने दो, *हँसि कह कृपानिकेत* = कृपानिधान राम हँसकर बोले। *जय कृपाल* = कृपालु राम की जय हो, *कहि* = ऐसा कहते हुए, *कपि चले* = वानर चल दिये, *अंगद हनू समेत* = उनके साथ अंगद व हनुमान जी भी गये।

यदि वह भयभीत होकर स्वयं ही हमारी शरण में आया होगा तो उसे मैं अपने प्राण के समान रखूँगा। कृपानिधान श्रीराम ने हँसकर कहा, वह शरण में आया हो या भेद लेने, दोनों ही दशा में उसे लेकर आओ। जय कृपालु कहकर वानर अंगद व हनुमान जी सहित विभीषण को लाने चल दिये। हनुमान जी से विभीषण का परिचय था ही, वे आगे-आगे चल दिये।

विभीषण को लेकर वानर चले, दूर से श्रीराम के दिव्य दर्शन हुए

सादर तेहि आगें करि बानर। चले जहाँ रघुपति करुनाकर॥ 45.1॥
दूरिहि ते देखे द्वौ भ्राता। नयनानंद दान के दाता॥ 45.2॥
बहुरि राम छबिधाम बिलोकी। रहेउ ठटुकि एकटक पल रोकी॥ 45.3॥

सादर तेहि आगें करि बानर = विभीषण को आदर के साथ आगे करके वानर, *चले जहाँ रघुपति करुनाकर* = जहाँ करुनानिधान श्रीराम थे वहाँ चल दिये।

दूरिहि ते देखे द्वौ भ्राता = विभीषण ने दूर से ही दोनों भाइयों को देखा, *नयनानंद दान के दाता* = नेत्रों को आनंद का दान देने वाले थे, *बहुरि राम छबिधाम बिलोकी* = एक बार फिर श्रीराम की सुंदर छवि को देखा, *रहेउ ठटुकि* = कुछ देर के लिये रुक गये, *एकटक पल रोकी* = पलकों को बिना झपकाये देखते रह गये।

विभीषण को सम्मानपूर्वक आगे करके सब वानर उनके पीछे होकर राम जी के पास चलते हैं। विभीषण ने दूर से ही देख लिया कि श्रीराम व लक्ष्मण दोनों भाई विराजमान हैं। श्रीराम को देखते ही नेत्रों को बहुत अच्छा लगा कि कैसे सुंदर हैं, कैसा दिव्य रूप है। श्रीराम के सुंदर स्वरूप को देखकर विभीषण थोड़ा दूर ही रुक गये, एकटक बिना पलक झपकाये देखते रह गये।

श्रीराम के दिव्य रूप का निकट से दर्शन

भुज प्रलंब कंजारुन लोचन। स्यामल गात प्रनत भय मोचन॥45.4॥
सिंघ कंध आयत उर सोहा। आनन अमित मदन मन मोहा॥45.5॥

भुज प्रलंब = विशाल भुजायें हैं, *कंजारुन लोचन* = लाल कमल के समान नेत्र हैं, *स्यामल गात* = साँवला शरीर है, *प्रनत भय मोचन* = शरण में आये के भय दूर करते हैं। *सिंघ कंध* = कंधे सिंह के समान हैं, *आयत उर* = चौड़ी छाती है, *सोहा* = शोभायमान है, *आनन* = मुख इतना सुंदर है कि, *अमित मदन मन मोहा* = असंख्य कामदेवों का मन मोहित हो जाये।

विभीषण ने श्रीराम को जैसा देखा, उसका वर्णन तुलसीदास जी करते हैं। प्रभु श्रीराम की भुजायें लंबी हैं। कमल के समान लाल नेत्र हैं। शरीर नीले रंग का है। कंधे सिंह के समान हैं मायने बहुत मजबूत हैं। छाती चौड़ी है जो बहुत शोभायमान है। मुख की सुंदरता देखकर लगा कि करोड़ों कामदेव का सौंदर्य भी इनके मुख के सौंदर्य के सामने फीका है। श्रीराम के रूप को देखकर विभीषण को लगा कि जो इनकी शरण में आयेगा उसके सारे भय ये दूर कर देंगे।

राम के दिव्य रूपों में मन को लगायें

श्रीराम ने ऋषि-मुनियों, अयोध्या के लोगों, जनकपुर के लोगों, राजाओं, वनवासियों, गाँव के लोगों इत्यादि को दर्शन दिये। जिसने जैसे दर्शन किये वैसे ही राम के रूपों का चित्रण तुलसीदास जी श्रीरामचरितमानस में करते हैं। ये सभी रूप अपने चित्त में स्मरण कर लेने चाहिये। ध्यान करते समय इन्हीं रूपों पर मन को लगायें। सरलता से आनंद के साथ ध्यान लगेगा। नेत्रों में भी अश्रु आयेंगे, मन पुलकित होगा। राम का रूप आज भी वैसा ही है।

नेत्रों में अश्रु भरे विभीषण अपना परिचय देते हैं

नयन नीर पुलकित अति गाता। मन धरि धीर कही मृदु बाता॥ 45.6॥
नाथ दसानन कर मैं भ्राता। निसिचर बंस जनम सुरत्राता॥ 45.7॥
सहज पापप्रिय तामस देहा। जथा उलूकहि तम पर नेहा॥ 45.8॥

नयन नीर = नेत्रों में आँसू, *पुलकित अति गाता* = शरीर बहुत पुलकित हो गया, *मन धरि धीर* = मन में धीरज रखकर, *कही मृदु बाता* = कोमल वचन बोले। *नाथ दसानन कर मैं भ्राता* = हे नाथ, मैं रावण का भाई हूँ, *निसिचर बंस जनम* = मेरा जन्म राक्षसकुल में हुआ है, *सुरत्राता* = हे देवताओं के रक्षक। *सहज पापप्रिय* = स्वभाव से ही मुझे पाप प्रिय हैं, *तामस देहा* = तामसी शरीर है, *जथा उलूकहि* = जैसे उल्लू को, *तम पर नेहा* = अंधकार पर सहज स्नेह होता है।

श्रीराम के दर्शन करके, प्रेम के कारण विभीषण के आँखों में आँसू आ गये। सारा शरीर पुलकित हो गया, वे भाव-विभोर हो गये। फिर अपने भावों को समन्वित करके, बुद्धि को सजग करके परिचय देते हैं। कहते हैं, हे नाथ मैं रावण का भाई हूँ, मेरा जन्म निशाचर वंश में हुआ है। मेरा शरीर तामसी प्रवृत्ति का है इसलिये पापों में मुझे सहज प्रेम है। जैसे उल्लू को रात्रि का अंधेरा ही अच्छा लगता है, वैसे ही हमें अज्ञान अच्छा लगता है।

शरण में लेने की प्रार्थना कर दण्डवत् प्रणाम करते हैं

श्रवन सुजसु सुनि आयउँ प्रभु भंजन भव भीर।
त्राहि त्राहि आरति हरन सरन सुखद रघुबीर॥ दोहा 45॥

श्रवन सुजसु = कानों से आपका यश, *सुनि आयउँ* = सुनकर आया हूँ, *प्रभु भंजन भव भीर* = हे प्रभु आप संसार के भय का नाश करने वाले हैं। *त्राहि त्राहि* = रक्षा कीजिये, रक्षा कीजिये, *आरति हरन* = दु:खों को दूर करने वाले, *सरन सुखद रघुबीर* = हे रघुबीर, आप शरण में आये को सुख देने वाले हैं।

हमने अपने कानों से आपका यश सुना है, इसलिये इन सब कमियों के बावजूद भी आपकी शरण में आये हैं। हे दु:खों का हरण करने वाले रघुबीर, आप मुझे अपनी शरण में ले लीजिये, आपकी शरण सब प्रकार का सुख देने वाली है। जो आपकी शरण में आता है, उसको फिर कोई दु:ख नहीं होता है। मेरी रक्षा करिये, रक्षा करिये। यह कहकर विभीषण श्रीराम को दण्डवत् प्रणाम करते हैं।

शरण में जाने का तरीका

भगवान की शरण में वही जाता है जो पहले उनके यश को सुनता है। श्रीराम भी नौ प्रकार की भक्ति में सबसे पहली भक्ति बताते हैं सत्संग। अच्छे लोगों के साथ रहो। वहाँ भगवान का यश, महिमा सुनने को मिलेगी। श्रवण करते-करते मन में परिवर्तन आयेगा। फिर भगवान की शरण में जाने का भाव उत्पन्न होगा।

राम विभीषण को हृदय से लगाकर अपना लेते हैं

अस कहि करत दंडवत देखा। तुरत उठे प्रभु हरष बिसेषा॥ 46.1 ॥
दीन बचन सुनि प्रभु मन भावा। भुज बिसाल गहि हृदयँ लगावा॥ 46.2 ॥
अनुज सहित मिलि ढिग बैठारी। बोले बचन भगत भयहारी॥ 46.3 ॥

अस कहि करत दंडवत देखा = ऐसा कहकर दण्डवत् करते हुए देखकर, *तुरत उठे प्रभु हरष बिसेषा* = प्रभु श्रीराम प्रसन्न होकर तुरन्त उठे। *दीन बचन सुनि* = अहंकार रहित बातें सुनकर, *प्रभु मन भावा* = प्रभु को अच्छा लगा, *भुज बिसाल गहि* = लंबी भुजाओं से उठाकर, *हृदयँ लगावा* = हृदय से लगा लिया। *अनुज सहित मिलि* = छोटे भाई लक्ष्मण सहित भेंट करके, *ढिग बैठारी* = अपने पास बैठा लिया, *बोले बचन भगत भयहारी* = भक्तों का भय दूर करने वाले श्रीराम कहते हैं।

श्रीराम ने सुना कि विभीषण त्राहि-त्राहि कह रहा है, फिर देखा कि वह दण्डवत् प्रणाम कर रहा है। यह सुनकर व देखकर श्रीराम प्रसन्न हो गये। उन्हें अच्छा लगा कि यह अहंकार त्याग कर हमारी शरण में आया है। राम तुरंत उठते हैं, अपनी विशाल भुआओं से विभीषण को उठाते हैं, फिर अपने हृदय से लगा लेते हैं। इस प्रकार प्रभु विभीषण को अपना बना लेते हैं। राम जिसे गले लगाते हैं लक्ष्मण भी उसे गले लगाते हैं। राम जिसे प्रणाम करते हैं लक्ष्मण भी उसे प्रणाम करते हैं। विभीषण को लक्ष्मण जी भी गले लगाते हैं। अब प्रभु विभीषण को अपने पास बैठा लेते हैं। फिर भक्तों का भय दूर करने वाले राम विभीषण से बातचीत शुरू करते हैं।

श्रीराम पूछते हैं, कुशल हो, लंका में धर्म पालन कैसे करते हो?

कहु लंकेस सहित परिवारा। कुसल कुठाहर बास तुम्हारा॥ 46.4॥
खल मंडली बसहु दिनु राती। सखा धरम निबहइ केहि भाँती॥ 46.5॥
मैं जानउँ तुम्हारि सब रीती। अति नय निपुन न भाव अनीती॥ 46.6॥
बरु भल बास नरक कर ताता। दुष्ट संग जनि देइ बिधाता॥ 46.7॥

कहु लंकेस सहित परिवारा कुसल = हे लंकेश, परिवार सहित अपनी कुशल कहो, *कुठाहर बास तुम्हारा* = तुम्हारा निवास तो कुठाँव में है। *खल मंडली बसहु दिनु राती* = दिन-रात तुम्हें दुष्टों के बीच रहना पड़ता है, *सखा* = हे मित्र, *धरम निबहइ केहि भाँती* = तुम्हारे धर्म का निर्वाह कैसे होता है। *मैं जानउँ तुम्हारि सब रीती* = मुझे पता है कि तुम कैसे रहते हो, *अति नय निपुन* = तुम नीति व धर्म के मार्ग में चलते हो, *न भाव अनीती* = तुम्हें अनीति पसंद नहीं है। *बरु भल बास नरक कर ताता* = हे तात, नरक में वास करना फिर भी ठीक है, *दुष्ट संग जनि देइ बिधाता* = पर दुष्ट का साथ विधाता न दें।

श्रीराम विभीषण को लंकेश यानि लंका के राजा कहकर संबोधित करते हैं। कहते हैं कि हे लंकेश, अपने परिवार सहित अपनी कुशल बताओ। तुम्हारा वास तो कुठाँव में है। दुष्टों के बीच तुम्हें दिन-रात रहना पड़ता है। हे मित्र, तुम्हारे धर्म का निर्वहन वहाँ कैसे होता है? हनुमान जी ने तो राम जी से बताया ही होगा विभीषण के बारे में। इसलिये राम जी कहते हैं कि मुझे पता है कि तुम कैसे रहते हो। तुमको अनीति पसंद नहीं है। तुम नीति व धर्म के मार्ग में चलने

वाले हो। तुम वहाँ नीति का पालन कैसे कर पाते हो? नरक में वास करना फिर भी ठीक है पर विधाता किसी को दुष्टों का साथ न दें।

लंका में रहने व श्रीराम के पास रहने में अंतर को समझें

विभीषण ने जब श्रीराम के दर्शन किये, उनकी शरण में गये तो उन्हें लंका में रहने व यहाँ रहने का फर्क मालूम पड़ा। उन्हें दोनों जीवन के अनुभव हैं। श्रीराम के प्रश्नों के उत्तर में विभीषण जो आगे कहेंगे वह दोनों जीवन के फर्क का वर्णन है। अपने जीवन में हम जब तक श्रीराम का स्मरण नहीं करते थे, श्रीरामचरितमानस या अन्य आध्यात्मिक ग्रंथ नहीं पढ़ते थे, गुरु मंत्र का जप नहीं करते थे, उस समय के जीवन की दशा और इन सबको करने के बाद जीवन में आये परिवर्तनों पर विचार करें, तब विभीषण जो कहने जा रहे हैं, वह समझ में आयेगा।

आपके दर्शन से अब सब कुशल है

अब पद देखि कुसल रघुराया। जौं तुम्ह कीन्हि जानि जन दाया॥ 46.8॥

अब पद देखि = अब आपके चरणों को देखकर, *कुसल रघुराया* = हे रघुबीर सब कुशल है, *जौं तुम्ह कीन्हि जानि जन दाया* = मुझे दीन जानकर आपने अपने चरणों में ले लिया है।

विभीषण कहते हैं, हम जैसे रहते थे, रहते आये, लेकिन अब सारी समस्या समाप्त हो गई है। आपके चरणों के दर्शन से, आपने मुझे दीन समझकर अपना लिया, इसलिये अब तो सब कुशल-ही-कुशल है। अब कोई चिंता नहीं। बीती बात समाप्त हो गई।

राम नाम के बिना स्वप्न में भी विश्राम नहीं

तब लगि कुसल न जीव कहुँ सपनेहुँ मन बिश्राम।
जब लगि भजत न राम कहुँ सोक धाम तजि काम॥ दोहा 46॥

तब लगि कुसल न जीव कहुँ = जीव को तब तक कुशल नहीं है, *सपनेहुँ मन बिश्राम* = स्वप्न में भी उसके मन को शांति नहीं है। *जब लगि भजत न राम कहुँ* =

जब तक वह श्रीराम का भजन नहीं करता, *सोक धाम तजि काम* = विभिन्न कामनाओं को छोड़कर जो दु:ख का कारण हैं।

विभीषण कहते हैं कि जीव को तब तक कुशल नहीं है, सपने में भी वह भय, चिंता व शोक से व्याकुल है, उसे ठीक से नींद नहीं आती, जब तक वह आपको नहीं भजता। स्मरण का तरीका बताते हैं कि सभी कामनाओं, जो शोक का कारण हैं, को त्यागकर स्मरण करें। इसे दो तरह से समझ सकते हैं – एक तो जब भी आप स्मरण करने बैठेंगे, बहुत-से कार्य आ पड़ेंगे। उन्हें छोड़ स्मरण करें। दूसरा, जब पूजा करें तो उतने समय के लिये सब कामनायें व चिंतायें छोड़कर प्रसन्न चित्त से पूजा करें। भले 10 मिनट ही पूजा करें, पर ठीक से करें।

मन के राक्षस तभी तक, जब तक राम हृदय में नहीं आते

तब लगि हृदयँ बसत खल नाना। लोभ मोह मच्छर मद माना॥ 47.1 ॥
जब लगि उर न बसत रघुनाथा। धरें चाप सायक कटि भाथा॥ 47.2 ॥

तब लगि हृदयँ बसत खल नाना = बहुत-से खल हृदय में तभी तक बसते हैं, *लोभ मोह मच्छर मद माना* = खल हैं लोभ, मोह, डाह, मद और मान। *जब लगि* = जब तक, *उर* = हृदय में, *न बसत रघुनाथा* = श्रीराम नहीं बसते, *धरें चाप सायक कटि भाथा* = धनुष-बाण लेकर, कमर में तरकस कसकर।

हमारे हृदय में लोभ, मोह, ईर्ष्या, घमण्ड, मान-अपमान इत्यादि दुष्ट तब तक ही रहते हैं जब तक श्रीराम हृदय में नहीं आते। राम किस रूप में हृदय में आयें? तो कहते हैं धनुष लेकर, बाण लेकर व कमर में तरकस बाँधकर पूरी तैयारी के साथ आयें। तभी तो हृदय के दुष्टों को मारकर शांति प्रदान करेंगे।

राम के प्रताप के सूर्य से 'मेरेपन' का अंधकार दूर हो गया

ममता तरुन तमी अँधिआरी। राग द्वेष उलूक सुखकारी॥ 47.3 ॥
तब लगि बसति जीव मन माहीं। जब लगि प्रभु प्रताप रबि नाहीं॥ 47.4 ॥

ममता = ममता, *तरुन तमी अँधिआरी* = तो पूरी अंधेरी रात के समान है, *राग द्वेष* = जो राग व द्वेष को, *उलूक* = उल्लू के समान, *सुखकारी* = सुख देने

वाली है। *तब लगि बसति* = ये तभी तक रहती है, *जीव मन माहीं* = जीव के हृदय में, *जब लगि* = जब तक, *प्रभु प्रताप रबि* = प्रभु राम के प्रताप का सूर्य, *नाहीं* = उदय नहीं होता।

हमारे हृदय में ममता यानि मेरापन है। राग और द्वेष को यह ममता बहुत अच्छी, बड़ी सुखकारी लगती है, जैसे उल्लू को काली अंधेरी रात्रि बड़ी अच्छी लगती है। यह अंधकार तभी तक रहता है जब तक सूर्य का उदय न हो। सूर्य उगा तो अंधकार अपने आप बिना प्रयास के गायब। इसी प्रकार हृदय में श्रीराम का प्रताप आया तो मेरापन गायब, राग द्वेष समाप्त। ध्यान रखें विभीषण राम जी से मिलने के बाद अपने अनुभव राम जी को बता रहे हैं।

अब मैं कुशल हूँ, मेरे भय दूर, तीनों ताप मिट गये

अब मैं कुसल मिटे भय भारे। देखि राम पद कमल तुम्हारे॥ 47.5॥
तुम्ह कृपाल जा पर अनुकूला। ताहि न ब्याप त्रिबिध भव सूला॥ 47.6॥

अब मैं कुसल = अब मैं कुशल हूँ, *मिटे भय भारे* = मेरे भारी भय मिट गये हैं, *देखि राम पद कमल तुम्हारें* = हे राम आपके चरण कमल के दर्शन करके। *तुम्ह कृपाल जा पर अनुकूला* = हे कृपालु राम, आप जिस पर अनुकूल होते हो, *ताहि न ब्याप* = उसे व्याप्त नहीं होती, *त्रिबिध भव सूला* = संसार के तीनों प्रकार के रोग।

विभीषण कहते हैं, अब हम कुशल से हैं, क्योंकि आपकी शरण में आ गये हैं। आपके चरण कमल देखकर हमारे सब भय मिट गये हैं। हे प्रभु, आप जिस पर कृपा कर दें, जिस पर आप अनुकूल हो जायें, उसे दैहिक, दैविक व भौतिक, तीनों तरह के रोग व्याप्त नहीं होते।

मेरा असीम सौभाग्य कि आपने हृदय से लगाया, चरणों के दर्शन हुए

मैं निसिचर अति अधम सुभाऊ। सुभ आचरनु कीन्ह नहिं काऊ॥ 47.7॥
जासु रूप मुनि ध्यान न आवा। तेहिं प्रभु हरषि हृदयँ मोहि लावा॥ 47.8॥

अहोभाग्य मम अमित अति राम कृपा सुख पुंज।
देखेउँ नयन बिरंचि सिव सेब्य जुगल पद कंज॥ दोहा 47॥

मैं निसिचर = मैं राक्षस हूँ, *अति अधम सुभाऊ* = मेरा स्वभाव भी अत्यंत खराब है, *सुभ आचरनु* = शुभ कार्य, *कीन्ह नहिं काऊ* = कभी नहीं किया। *जासु रूप* = जिसके रूप को, *मुनि ध्यान न आवा* = मुनि लोग भी ध्यान में नहीं देख पाते, *तेहिं प्रभु* = उन्हीं प्रभु ने, *हरषि* = प्रसन्नता से, *हृदयँ मोहि लावा* = मुझे अपने हृदय से लगा लिया।
अहोभाग्य मम = मेरा कितना बड़ा भाग्य है, *अमित अति* = भाग्य की कोई सीमा नहीं, *राम कृपा सुख पुंज* = हे कृपा व सुख के पुंज राम। *देखेउँ नयन* = मैने अपनी आँखों से ही देख लिया, *बिरंचि सिव सेब्य* = ब्रह्माजी व शंकरजी जिनकी सेवा करते हैं, *जुगल पद कंज* = दोनों चरणों को जो कमल के समान हैं।

मैं राक्षस हूँ। मेरा स्वभाव भी खराब है। मैंने कभी कोई शुभ कार्य नहीं किया है। आपके जिस रूप को मुनि लोग भी ध्यान में नहीं देख पाते, उसी स्वरूप ने मुझ में इतनी कमियों के बावजूद भी, प्रसन्नता से अपने हृदय से लगा लिया। हे सुख के पुंज श्रीराम! यह मेरा असीम सौभाग्य है। ब्रह्मा जी व शंकर जी भी जिन चरणों की सेवा में लगे रहते हैं, उन्हीं कमल के समान चरणों का मैंने अपनी इन्हीं आँखों से दर्शन किया है। यह कैसे सौभाग्य की बात है!

राम अपना स्वभाव बताकर लोगों की निराशा दूर कर रहे हैं

लोग सोचते हैं, हम भगवान की शरण में कैसे जायेंगे? हमसे भजन कैसे होगा? भक्ति व ज्ञान कैसे आयेगा? हम तो बहुत पापी हैं। हमसे यह सब नहीं हो पायेगा आदि। मन में ऐसा निराशा का भाव आता है। श्रीराम उसी निराशा का भाव दूर करने के लिये आगे की चौपाइयों में कहते हैं कि हमें स्मरण तो करो, हम सब समस्याओं का निवारण करेंगे। आप जैसे हो वैसे ही, बिना अपने को बदले हमारा स्मरण तो करो, हमारा नाम तो लो, हमारी शरण में तो आकर देखो, सुधारने का दायित्व हमारा है। तुम तो बस अभी से इस रास्ते पर चल दो।

जिसके विरोध में सब हों, उसे भी मैं सज्जन बना देता हूँ

सुनहु सखा निज कहउँ सुभाऊ। जान भुसुंडि संभु गिरिजाऊ॥48.1॥
जौं नर होइ चराचर द्रोही। आवै सभय सरन तकि मोही॥48.2॥
तजि मद मोह कपट छल नाना। करउँ सद्य तेहि साधु समाना॥48.3॥

सुनहु सखा = हे मित्र सुनो, *निज कहउँ सुभाऊ* = मैं अपना स्वभाव कहता हूँ, *जान भुसुंडि संभु गिरिजाऊ* = जिसे काकभुशुंडि, शिव जी व पार्वती जी जानते हैं। *जौं नर होइ चराचर द्रोही* = यदि किसी व्यक्ति के विरोध में सारा संसार हो गया है, *आवै सभय* = वह भयभीत होकर आता है, *सरन तकि मोही* = मेरी शरण में, *तजि मद मोह कपट छल नाना* = यदि वह मद, मोह, कपट व छल छोड़कर आता है, *करउँ सद्य तेहि* = उसे मैं बहुत शीघ्र बना देता हूँ, *साधु समाना* = साधु के समान।

श्रीराम विभीषण को अपना स्वभाव बताते हुए प्रेम से सखा कहकर संबोधित करते हैं। कहते हैं काकभुशुंडि, शंकर जी व पार्वती जी मेरे स्वभाव को जानते हैं। किसी व्यक्ति के विरोध में संसार के समस्त चराचर प्राणी हों, वह विरोध से भयभीत हो, यदि ऐसा व्यक्ति भी मद, मोह, कपट व छल छोड़कर मेरी शरण में आता है, तो उसकी दुर्गति दूर करके मैं शीघ्र उसे साधु समान बना देता हूँ।

संसार के सभी रिश्तों से बँधे मन को समेट कर मेरे चरणों में बाँधो

जननी जनक बंधु सुत दारा। तनु धनु भवन सुहृद परिवारा॥ 48.4॥
सब कै ममता ताग बटोरी। मम पद मनहि बाँध बरि डोरी॥ 48.5॥

जननी जनक बंधु सुत दारा = माता, पिता, भाई, पुत्र व पत्नी। *तनु धनु भवन सुहृद परिवारा* = शरीर, धन, मकान, मित्र और परिवार। *सब कै ममता* = इन सबमें मेरेपन के, *ताग बटोरी* = धागे को तोड़कर समेट लें, *बरि डोरी* = फिर धागों को बटकर एक डोरी बना लें, *मनहि बाँध* = उस डोरी में अपने मन को बाँधकर, *मम पद* = मेरे चरणों में बाँध दें।

इन दो चौपाइयों में प्रभु राम ने बहुत ही सुंदर बात कही है। हम श्रीराम का स्मरण नहीं कर पाते, क्योंकि हमारा मन संसार के व्यक्तियों व वस्तुओं से मेरेपन के धागे से बँधा हुआ है। यहाँ पर चार चीजे हैं–

1. हमारा मन,
2. मेरापन या ममता का धागा,
3. रिश्ते जैसे पिता, भाई, पुत्र, पत्नी, मित्र, परिवार व वस्तुयें,
4. श्रीराम के चरण।

हमने अपने मन को ममता के धागे के एक छोर से बाँध रखा है, धागे का दूसरा छोर रिश्तों में बँधा है। जितने रिश्ते या वस्तुयें हैं उतने ही धागे हैं। इस प्रकार बहुत सारे धागों से मन बँधा है। अब प्रभु कहते हैं कि धागे का जो छोर मन से बँधा है उसे बँधा रहने दो, रिश्तों व वस्तुओं वाले छोर को काट दो। काटने से बहुत सारे धागे फैलेंगे, इन सब धागों को समेटकर गूँथ कर बाँध लो। अब ये पतले धागे एक मोटी डोरी बन गये। ध्यान रहे, इस डोरी का एक हिस्सा मन से पहले से बँधा है। दूसरे हिस्से को कहते हैं कि मेरे चरणों से बाँध दो। चार चीजे अभी भी हैं। मन अभी भी ममता के धागों से बँधा है। धागों का जो सिरा रिश्तों में बँधा था अब वह भगवान के चरणों में बँध गया। ध्यान रखने की सबसे बड़ी बात यह है कि भगवान रिश्तों या वस्तुओं को तोड़ने या छोड़ने को नहीं कह रहे हैं। माता, पिता, भाई, पुत्र, पत्नी, मित्र, परिवार के अन्य सदस्य, शरीर, धन, मकान आदि सब रहेंगे, सबसे प्रेम भी करना है, सबके प्रति कर्तव्य भी निभाना है, बस मेरेपन का भाव जो तनाव उत्पन्न करता है उसे छोड़कर, मेरेपन का भाव भगवान के साथ जोड़ना है। वे हमारे सारे रिश्तों को निभाने में, उनके साथ आनंद उठाने में हमारी मदद करेंगे। यह भाव अभ्यास से आयेगा। शुरुआत 5 मिनट से ही करें। 5 मिनट के लिये मन को सब जगह से समेट कर भगवान के चरणों के स्मरण में लगाने का प्रयास करें।

जैसे लोभी धन की देखभाल करता है वैसे मैं भक्त की करता हूँ

समदरसी इच्छा कछु नाहीं। हरष सोक भय नहिं मन माहीं॥48.6॥
अस सज्जन मम उर बस कैसें। लोभी हृदयँ बसइ धनु जैसें॥48.7॥

समदरसी = सबमें भगवान को देखे, *इच्छा कछु नाहीं* = कोई कामना नहीं है, *हरष सोक भय नहिं मन माहीं* = हर्ष, शोक, डर मन में नहीं है। *अस सज्जन मम उर बस कैसें* = ऐसे व्यक्ति मेरे हृदय में वैसे ही बसते हैं, *लोभी हृदयँ बसइ धनु जैसें* = जैसे लालची व्यक्ति के हृदय में धन बसा रहता है।

जो व्यक्ति सबमें भगवान को देखता है, जिसकी अपनी कोई इच्छा नहीं है, जिसके मन में हर्ष, शोक, भय नहीं है, वही सज्जन है। ऐसे व्यक्ति मेरे हृदय में ही वास करते हैं। जैसे लोभी व्यक्ति धन को रखता है, देखभाल करता है,

बार-बार निकालता है, गिनता है, फिर रख देता है, उसके मन में सदा धन की ही याद बनी रहती है, उसी प्रकार हम सदैव भक्त की देखभाल किया करते हैं, उसका त्याग नहीं करते।

तुम जैसे लोग मुझे प्रिय हैं, जिनके लिये अवतार लेता हूँ

तुम्ह सारिखे संत प्रिय मोरें। धरउँ देह नहिं आन निहोरें॥ 48.8॥

तुम्ह सारिखे संत प्रिय मोरें = तुम्हारे जैसे सज्जन ही हमें प्रिय हैं, *धरउँ देह* = मैं तुम्हारे जैसे लोगो के लिये ही शरीर धारण करता हूँ, *नहिं आन निहोरें* = दूसरा चाहे जितनी विनती करे, शरीर नहीं धारण करते।

श्रीराम बीच-बीच में विभीषण का उत्साह बढ़ाते रहते हैं। सज्जन के लक्षण बताने के बाद कहते हैं कि तुम्हारे जैसे सज्जन मुझे प्रिय लगते हैं। तुम्हारे जैसे संतों के लिये ही हम शरीर धारण करते हैं। दूसरे व्यक्ति चाहे जितना निहोरा करें, हम अवतार नहीं लेते हैं।

सगुण भगवान की पूजा व परहित में लगे लोग प्रिय

सगुन उपासक परहित निरत नीति दृढ़ नेम।
ते नर प्रान समान मम जिन्ह कें द्विज पद प्रेम॥ दोहा 48॥

सगुन उपासक = जो सगुण भगवान की उपासना करें, *परहित निरत* = जो दूसरों के हित में लगे रहते हैं, *नीति दृढ़ नेम* = जो नीति के मार्ग में मजबूती से चलते हैं, *ते नर* = वे मनुष्य, *प्रान समान मम* = मेरे प्राणों के समान हैं, *जिन्ह कें* = जिन्हें, *द्विज* = शास्त्र के ज्ञाता, *पद प्रेम* = के चरणों में प्रेम है।

श्रीराम यहाँ पर साधना की चार बातें समझाते हैं–

1. सगुण भगवान की उपासना करें। ऐसा भगवान जिसका एक नाम हो, एक रूप हो।
2. परहित में लगे रहें। अन्य व्यक्तियों का हित जिसमें हो, वही करें। दूसरों की सहायता में निरंतर लगे रहना भी साधना ही है।
3. नीति के मार्ग पर मजबूती से चलें।

4. जिन्हें शास्त्रों का ज्ञान है, वे द्विज या विप्र कहलाते हैं। ऐसे लोगों के चरणों से प्रेम करें, मायने उनके पास जायें, शास्त्रों में क्या लिखा है उनसे समझकर जीवन में अपनायें। इस प्रकार की साधना में लगे लोग मुझे अपने प्राणों के समान प्रिय हैं।

विभीषण के अंदर श्रीराम उत्साह लाते हैं

सुनु लंकेस सकल गुन तोरें। तातें तुम्ह अतिसय प्रिय मोरें॥49.1॥
राम बचन सुनि बानर जूथा। सकल कहहिं जय कृपा बरूथा॥49.2॥

सुनु लंकेस सकल गुन तोरें = हे लंकेश, सुनो तुम्हारे अंदर सभी गुण हैं, *तातें* = इसलिये, *तुम्ह अतिसय प्रिय मोरें* = तुम मुझे बहुत प्रिय हो। *राम बचन सुनि* = राम जी के वचन सुनकर, *बानर जूथा सकल कहहिं* = वानरों के सभी समूह कहने लगे, *जय कृपा बरूथा* = कृपा के सागर श्रीराम की जय हो।

अब श्रीराम कहते हैं कि हे लंकेश सुनो, तुममें तो सकल गुण हैं, इसलिये तुम मुझे बहुत प्रिय हो। वानर जो राम जी की बातें सुन रहे थे, वे सब बोले, कृपा के सागर राम की जय हो। जब राम जी संतों के लक्षण बताते हैं, सज्जन में क्या गुण होने चाहिये, यह बतलाते हैं तो विभीषण को लगा होगा कि श्रीराम हमारे अंदर कमियाँ देख रहे होंगे, इसलिये ये सब गुण बता रहे हैं। तब प्रभु राम उन्हें आश्वासन देते हैं कि अरे, तुम्हारे अंदर तो ये सब गुण हैं ही, तभी तो तुम्हें हनुमान मिले और तुम रावण को छोड़कर हमारी शरण में आये। तुम्हारे अंदर जो हीन भाव आ गया था, उसे दूर करने के लिये हम यह सब कह रहे थे। मेरा प्रिय होने के लिये क्या गुण होने चाहिये यह बता दिया। राम आनंदस्वरूप हैं। जो राम को प्रिय है उसे भी आनंद की प्राप्ति होती है।

श्रीराम के अमृत वचन सुन विभीषण भाव-विभोर

सुनत विभीषनु प्रभु कै बानी। नहिं अघात श्रवनामृत जानी॥49.3॥
पद अंबुज गहि बारहिं बारा। हृदयँ समात न प्रेमु अपारा॥49.4॥

सुनत विभीषनु प्रभु कै बानी = प्रभु राम की बातें सुनकर विभीषण का, *नहिं अघात* = मन नहीं भरता, *श्रवनामृत जानी* = कानों के लिये अमृत के समान

समझते हैं। *पद अंबुज गहि बारहिं बारा* = बार-बार श्रीराम के चरण कमलों को पकड़ते हैं, *हृदयँ समात न प्रेमु अपारा* = अपार प्रेम है कि हृदय में समाता नहीं।

विभीषण को राम जी की बातें कानों में अमृत के समान लगीं। वे प्रसन्न हो गये, आनंद आ गया। उन्हें लगा कि भगवान और वचन बोलते रहें, कानों को संतोष ही नहीं हो रहा था। वे बार-बार राम जी के चरण पकड़कर प्रणाम करते हैं। उनके हृदय में राम जी का प्रेम समा ही नहीं रहा है। वे बहुत प्रसन्न हैं।

मेरी वासनायें प्रेम में बह गईं, अब भक्ति प्रदान करिये

सुनहु देव सचराचर स्वामी। प्रनतपाल उर अंतरजामी॥ 49.5॥
उर कछु प्रथम बासना रही। प्रभु पद प्रीति सरित सो बही॥ 49.6॥
अब कृपाल निज भगति पावनी। देहु सदा सिव मन भावनी॥ 49.7॥

सुनहु देव = हे देव सुनो, *सचराचर स्वामी* = आप चर-अचर सबके स्वामी हैं, *प्रनतपाल* = शरण में आये का पालन करते हैं, *उर अंतरजामी* = सबके हृदय की बात जानते हैं। *उर* = हृदय में, *कछु प्रथम बासना रही* = पहले कुछ इच्छा भी थी, *प्रभु पद प्रीति सरित* = आपके चरणों के प्रेम की धारा में, *सो बही* = वह बह गयी। *अब कृपाल* = अब हे कृपाल, *निज भगति पावनी देहु* = अपनी पवित्र भक्ति दीजिये, *सदा सिव मन भावनी* = जो सदा शिव जी के मन को प्रिय लगती है।

विभीषण कहते हैं, हे देव आप चर व अचर सबके स्वामी हैं। आप सबके हृदय की बात जानते हैं, शरण में आये का पालन करते हैं। पहले मेरे हृदय में वासना थी। जैसे नदी में बाढ़ आये तो सब गंदगी पानी के साथ बह जाती है, वैसे ही हृदय में आपके प्रेम की बाढ़ आ गयी, मेरी सब वासनायें उसी में बह गयीं। अब हे कृपाल! शंकरजी के हृदय में जो भक्ति सदा वास करती है, वैसी ही पवित्र भक्ति हमें प्रदान करें।

श्रीराम भक्ति प्रदान कर लंका का राज्य भी दे देते हैं

एवमस्तु कहि प्रभु रनधीरा। मागा तुरत सिंधु कर नीरा॥ 49.8॥
जदपि सखा तव इच्छा नाहीं। मोर दरसु अमोघ जग माहीं॥ 49.9॥
अस कहि राम तिलक तेहि सारा। सुमन बृष्टि नभ भई अपारा॥ 49.10॥

एवमस्तु कहि = ऐसा ही हो कहकर, *प्रभु रनधीरा* = रणधीर प्रभु राम ने, *मागा तुरत सिंधु कर नीरा* = तुरंत ही समुद्र का जल मंगवाया। *जदपि सखा तव इच्छा नाहीं* = यद्यपि हे मित्र तुम्हारी इच्छा नहीं है, *मोर दरसु* = पर मेरा दर्शन, *अमोघ जग माहीं* = संसार में निष्फल नहीं जाता। *अस कहि* = ऐसा कहकर, *राम तिलक तेहि सारा* = राम जी ने विभीषण का राजतिलक कर दिया, *सुमन बृष्टि नभ भई अपारा* = आकाश से पुष्पों की अपार वर्षा हुई।

श्रीराम ने कहा, ठीक है हम तुम्हें भक्ति प्रदान करते हैं। हे सखा, यद्यपि तुम्हारी सब कामनाएँ खत्म हो गयी हैं, पर मेरा दर्शन संसार में निष्फल नहीं होता है। वे तुरंत समुद्र का जल मंगवाते हैं और विभीषण का राजतिलक कर लंका का राजा घोषित कर देते हैं। यह सब देखकर देवताओं ने आकाश से पुष्पों की वर्षा की। भगवान जब हमारी भक्ति को स्वीकारते हैं तो भक्ति सदैव के लिये हो जाती है, फिर हम उससे गिर नहीं सकते। जब तक वे स्वीकार नहीं करते हम भक्ति से गिरते-उठते रहते हैं।

रावण ने घोर तपस्या से जो संपत्ति पायी, राम ने बिना मांगे दे दी

रावण क्रोध अनल निज स्वास समीर प्रचंड।
जरत बिभीषनु राखेउ दीन्हेउ राजु अखंड॥ दोहा 49 क॥

जो संपति सिव रावनहि दीन्हि दिएँ दस माथ।
सोइ संपदा बिभीषनहि सकुचि दीन्हि रघुनाथ॥ दोहा 49 ख॥

रावण क्रोध अनल = रावण के क्रोध की अग्नि, *निज स्वास समीर* = विभीषण के वचन जो पवन की तरह उस अग्नि को हवा देकर, *प्रचंड* = और प्रचंड कर रहे थे। *जरत बिभीषनु* = उस अग्नि मे जलते हुए विभीषण को, *राखेउ* = राम ने बचा लिया, *दीन्हेउ राजु अखंड* = और उसे अखंड राज्य दे दिया।
जो संपति = जो संपत्ति यानि लंका राज्य, *सिव रावनहि दीन्हि* = शिवजी ने रावण को दी थी, *दिएँ दस माथ* = दस सिर चढ़ाने पर, *सोइ संपदा* = वही संपत्ति यानि लंका का राज्य, *बिभीषनहि* = विभीषण को, *सकुचि* = संकोच के साथ, *दीन्हि रघुनाथ* = राम जी ने प्रदान किया।

रावण के क्रोध की अग्नि को विभीषण के वचन हवा देकर और तेज कर रहे थे। श्रीराम ने विभीषण को रावण की क्रोध की ज्वाला में जलने से बचाकर लंका का अखंड राज्य भी प्रदान कर दिया। रावण ने घोर तपस्या कर अपने दस सिर चढ़ाये तब कहीं जाकर शंकर जी ने उसे जो संपत्ति दी, वही संपत्ति विभीषण के बिना मांगे श्रीराम संकोच के साथ दे रहे हैं। उन्हें लगा कि यह हमारा कितना बड़ा भक्त है, हमारी शरण में आया है, हम इसे सिर्फ लंका का राजा बना रहे हैं, कहीं यह कम तो नहीं है।

भगवान का नाम नहीं लेने वाले बिना सींग-पूँछ के पशु हैं

अस प्रभु छाड़ि भजहिं जे आना। ते नर पसु बिनु पूँछ बिषाना॥50.1॥
निज जन जानि ताहि अपनावा। प्रभु सुभाव कपि कुल मन भावा॥50.2॥

अस प्रभु छाड़ि = ऐसे प्रभु को छोड़कर, *भजहिं जे आना* = जो दूसरों को भजते है। *ते नर* = वे मनुष्य, *पसु बिनु पूँछ बिषाना* = वे बिना सींग व पूँछ के पशु के समान हैं। *निज जन जानि ताहि अपनावा* = अपना सेवक जानकर राम जी ने विभीषण को अपना लिया, *प्रभु सुभाव* = प्रभु का यह स्वभाव, *कपि कुल मन भावा* = सभी कपियों के मन को अच्छा लगा।

जो लोग ऐसे प्रभु राम का स्मरण छोड़कर अन्य चीजों को भजते हैं वे मनुष्य बिना सींग, बिना पूँछ के पशु हैं। वानरों ने भी देखा कि कैसा सुंदर स्वभाव है प्रभु राम का, शत्रु के भाई को भी अपना भक्त जानकर अपना लिया। यह सब देखकर वानरों के मन को अच्छा लगा।

14. श्रीराम समुद्र से विनती करते हैं, रावण के दूतों की कथा

(दोहा 50 से दोहा 57)

विभीषण की बात मानकर श्रीराम समुद्र से विनती करते हैं। तीन दिन तक वे समुद्र किनारे बैठे रहते हैं। इस बीच तुलसीदास जी रावण के दूतों की कथा कह देते हैं, जो विभीषण के पीछे-पीछे लंका से आये थे। ये वानर का वेष बनाकर उन्हीं के बीच छुपकर श्रीराम के चरित्रों को देखते हैं। हम भी तो नकली वेष बनाये हैं। अंदर से कुछ हैं, ऊपर से कुछ और दिखते हैं। श्रीराम चरित्र देखते-देखते दूत कपट वेष भूलकर वास्तविक वेष में आ जाते हैं। लक्ष्मण जी

उन्हें वानरों से पिटने से बचाकर रावण के नाम संदेश देकर वापस भेज देते हैं। ये दूत राक्षसी स्वभाव भूलकर जब रावण को समझाने लगते हैं, वह इन्हें लात मारकर भगा देता है। ये प्रभु राम के पास आकर मुक्त हो जाते हैं। इस प्रसंग को बार-बार पढ़कर हम भी अंदर व बाहर एक जैसे हो सकते हैं। हमारा भी कपट वेष छूट जाये, कुछ दिन पिटाई हो, फिर लक्ष्मण जी बचा लें, ज्ञान और भक्ति मिले।

सुग्रीव व विभीषण से राम पूछते हैं, समुद्र कैसे पार करें?

पुनि सर्बग्य सर्ब उर बासी। सर्बरूप सब रहित उदासी॥ 50.3॥
बोले बचन नीति प्रतिपालक। कारन मनुज दनुज कुल घालक॥ 50.4॥
सुनु कपीस लंकापति बीरा। केहि बिधि तरिअ जलधि गंभीरा॥ 50.5॥
संकुल मकर उरग झष जाती। अति अगाध दुस्तर सब भाँती॥ 50.6॥

पुनि सर्बग्य = फिर सब जानने वाले, *सर्ब उर बासी* = सबके हृदय में वास करने वाले, *सर्बरूप* = सभी रूपों में हैं, *सब रहित उदासी* = पर उन पर किसी का प्रभाव नहीं पड़ता, *बोले बचन नीति प्रतिपालक* = श्रीराम जी नीति की रक्षा करने वाले वचन बोलते हैं, *कारन मनुज* = भक्तों की रक्षा के कारण मनुष्य बने हुए, *दनुज कुल घालक* = राक्षसों के कुल का नाश करने वाले हैं। *सुनु कपीस लंकापति बीरा* = वानरों के राजा सुग्रीव व लंका के राजा विभीषण, हे वीर सुनो, *केहि बिधि तरिअ* = किस प्रकार पार करें, *जलधि गंभीरा* = इस गहरे समुद्र को। *संकुल मकर उरग झष जाती* = यह अनेक जाति के मगरों, साँपों और मछलियों से भरा हुआ है, *अति अगाध* = अत्यंत अथाह है, *दुस्तर सब भाँती* = सब प्रकार से कठिन है।

राम जी भूत, भविष्य व वर्तमान जानते हैं, सबके हृदय में वास करते हैं, सभी रूपों में वे व्याप्त हैं, पर किसी का भी उन पर प्रभाव नहीं पड़ता है। वे नीति के पालक हैं। उन्होंने राक्षसों के कुल के विनाश के लिये मनुष्य शरीर धारण किया है। ऐसे गुणों से भरपूर श्रीराम वानरों के राजा सुग्रीव व लंका के राजा विभीषण से पूछते हैं, यह अथाह समुद्र गहरा तो है ही पर इसमें अनेकों जाति के मगर, साँप और मछलियाँ भी भरे हैं। यह पार करने में बहुत ही कठिन है। इसे पार करने का उपाय आप दोनों बताइये।

विभीषण कहते हैं, समुद्र से विनती कर रास्ता मांगा जाये

कह लंकेस सुनहु रघुनायक। कोटि सिंधु सोषक तव सायक॥50.7॥
जद्यपि तदपि नीति असि गाई। बिनय करिअ सागर सन जाई॥50.8॥

प्रभु तुम्हार कुलगुर जलधि कहिहि उपाय बिचारि।
बिनु प्रयास सागर तरिहि सकल भालु कपि धारि॥ दोहा 50॥

कह लंकेस सुनहु रघुनायक = विभीषण कहते हैं, हे राम सुनिए, *कोटि सिंधु सोषक तव सायक* = आपके बाण तो करोड़ समुद्रों को भी सुखा देने वाले हैं। *जद्यपि तदपि नीति असि गाई* = पर नीति ऐसी कही गई है कि, *बिनय करिअ सागर सन जाई* = पहले समुद्र के पास जाकर विनती करें। *प्रभु तुम्हार कुलगुर जलधि* = हे प्रभु, यह समुद्र आपके कुल मे बड़े हैं, *कहिहि उपाय बिचारि* = ये विचार करके उपाय बता देंगे। *बिनु प्रयास* = बिना प्रयास के, *सागर तरिहि* = समुद्र पार कर लेंगे, *सकल भालु कपि धारि* = वानरों-भालुओं की पूरी सेना।

विभीषण कहते हैं कि हे राम, आपके बाणों में इतनी ताकत है कि एक सिंधु क्या, करोड़ों समुद्रों को सुखा दें, पर नीति कहती है कि पहले सागर के पास जाकर उससे विनय करें, कहें कि लंका तक जाना है, रास्ता प्रदान करें। नीति के साथ ही यह भी देखिये कि समुद्र तो आपके वंश के हैं, बड़े हैं, विनती करने से ये सोचकर कोई उपाय बता देंगे। यदि वे उपाय बता दें तो हो सकता है बिना किसी प्रयास के ही वानरों की सेना समुद्र पार हो जाये।

श्रीराम सहमत पर लक्ष्मण कहते हैं, बाण से समुद्र को सोख दें

सखा कही तुम नीकि उपाई। करिअ दैव जौं होइ सहाई॥51.1॥
मंत्र न यह लछिमन मन भावा। राम बचन सुनि अति दुख पावा॥51.2॥
नाथ दैव कर कवन भरोसा। सोषिअ सिंधु करिअ मन रोसा॥51.3॥
कादर मन कहुँ एक अधारा। दैव दैव आलसी पुकारा॥51.4॥

सखा कही तुम नीकि उपाई = हे मित्र तुमने ठीक उपाय कहा है, *करिअ* = यही किया जाये, *दैव जौं होइ सहाई* = यदि दैव सहायक हों, *मंत्र न यह लछिमन मन भावा* = यह सलाह लक्ष्मण जी को पसंद नहीं आयी, *राम बचन सुनि* =

राम जी की बातें सुनकर, *अति दुख पावा* = उन्हें बहुत दु:ख हुआ। *नाथ दैव कर कवन भरोसा* = हे नाथ दैव का कौन भरोसा, *सोषिअ सिंधु* = समुद्र को सोख दीजिये, *करिअ मन रोसा* = मन में क्रोध ले आइये। *कादर मन* = कायर के मन का, *कहुँ एक अधारा* = दैव एक आधार है, *दैव दैव आलसी पुकारा* = आलसी लोग ही दैव-दैव पुकारते हैं।

राम जी ने विभीषण की बात का समर्थन करते हुए कहा कि समुद्र से विनती करते हैं, यदि दैव सहायक होंगे तो काम बन जायेगा। यह सलाह लक्ष्मण जी को बिल्कुल अच्छी नहीं लगी। यह देखकर कि प्रभु राम भी उसका समर्थन कर रहें हैं, उन्हें बहुत दु:ख लगा। वे बिना पूछे ही अपनी सलाह देते हुए कहते हैं कि हे नाथ, दैव का क्या भरोसा है? आप तो समुद्र को सोख दीजिये। कायर को ही देवता का आधार है। कायर मायने जो खतरा नहीं उठाना चाहते, आलसी मायने जो काम नहीं करना चाहते। आलसी लोग काम न करके देवताओं को साधते रहते हैं।

लक्ष्मण को समझाकर राम समुद्र के सामने बैठ गये

सुनत बिहसि बोले रघुबीरा। ऐसेहिं करब धरहु मन धीरा॥51.5॥
अस कहि प्रभु अनुजहि समुझाई। सिंधु समीप गए रघुराई॥51.6॥
प्रथम प्रनाम कीन्ह सिरु नाई। बैठे पुनि तट दर्भ डसाई॥51.7॥

सुनत बिहसि बोले रघुबीरा = यह सुनकर राम जी हँसकर बोले, *ऐसेहिं करब* = ऐसा ही करेंगे, *धरहु मन धीरा* = मन में धैर्य रखो। *अस कहि प्रभु अनुजहि समुझाई* = ऐसा कहकर राम जी ने छोटे भाई को समझाया, *सिंधु समीप गए रघुराई* = फिर श्रीराम समुद्र के पास जाते हैं। *प्रथम प्रनाम कीन्ह सिरु नाई* = पहले समुद्र को सिर झुकाकर प्रणाम किया, *बैठे पुनि तट* = फिर सुमद्र किनारे बैठे, *दर्भ डसाई* = कुश का आसन बिछाकर।

लक्ष्मण की बात सुनकर राम हँस दिये। बोले, अरे लक्ष्मण जैसा तुम कहोगे वैसा ही करेंगे, बस तुम मन में थोड़ा धैर्य धारण करे रहो। दोनों काम करेंगे। विभीषण ने जैसा कहा, वैसे हम समुद्र से थोड़ी प्रार्थना कर लेंगे। अगर न समुद्र सुने न दैव, तब फिर धनुष उठा लेंगे। इस प्रकार लक्ष्मण को समझाकर कि

वीरता एक गुण है तो धैर्य भी गुण है, उतावलापन ठीक नहीं, राम जी समुद्र के करीब जाते हैं। समुद्र को सिर नवाकर प्रणाम किया, कुश का आसन बिछाया फिर उस पर बैठ गये। इस प्रकार वे समुद्र से रास्ता देने की विनती करने लगे।

रावण के दूत कपट से वानर बने राम चरित्र देख रहे थे

जबहिं बिभीषन प्रभु पहिं आए। पाछें रावन दूत पठाए॥51.8॥
सकल चरित तिन्ह देखे धरें कपट कपि देह।
प्रभु गुन हृदयँ सराहहिं सरनागत पर नेह॥ दोहा 51॥

जबहिं बिभीषन प्रभु पहिं आए = जब विभीषण राम जी के पास आये थे, *पाछें रावन दूत पठाए* = उनके पीछे रावण ने अपने दूत भेज दिये थे। *सकल चरित तिन्ह देखे* = उन दूतों ने सारे चरित्रों को देखा, *धरें कपट कपि देह* = कपट से वानरों का वेष धारण करके। *प्रभु गुन हृदयँ सराहहिं* = वे भगवान के गुणों की हृदय में बड़ाई कर रहे थे, *सरनागत पर नेह* = शरण में आये व्यक्ति पर राम का प्रेम देखकर के।

लंका से चलकर जब विभीषण श्रीराम के पास आये तब रावण ने उनके पीछे कुछ दूत लगा दिये थे। इन लोगों ने कपट से वानर-वेष धारण कर लिया। वानरों के बीच में घुसकर इन्होंने भी श्रीराम के सभी चरित्रों को देखा।

कपट वेष भूलकर दूत असली वेष में आ गये

प्रगट बखानहिं राम सुभाऊ। अति सप्रेम गा बिसरि दुराऊ॥52.1॥

प्रगट = सबके सामने, *बखानहिं* = वर्णन करने लगे, *राम सुभाऊ* = राम जी के सुंदर स्वभाव का, *अति सप्रेम* = अत्यंत प्रेम के कारण, *गा बिसरि दुराऊ* = कपट वेष भूल गये।

इन दूतों को श्रीराम का स्वभाव बहुत अच्छा लगा। श्रीराम कितने प्रेम से बोलते हैं, कैसे शरण में आये से व्यवहार करते हैं, सबकी सलाह लेते हैं, विभीषण की बात मानकर समुद्र से प्रार्थना करने लगे। इन्होंने अभी तक रावण का दरबार देखा था जहाँ रावण सब काम डरा-धमकाकर करवाता था। किसी की

बात नहीं सुनता था। वहाँ भय का वातावरण था जबकि यहाँ प्रेम ही प्रेम है। पहले तो दूत मन-ही-मन प्रभु के गुणों की बड़ाई करने लगे, अब इन दूतों के मुख से जोर से निकलने लगा, प्रभु कैसे उदार हैं, कैसे दयालु हैं। राम के गुणों का वर्णन करने से उपजे प्रेम में उन्हें कपट भूल गया, वानर वेष भूलकर, जैसे वे लंका में थे, वैसे असली वेष में आ गये।

अनजाने में भी राम-राम कहो तो कपट छूट जाता है

यहाँ यह पता लगता है कि अगर अनजाने में भी भगवान के गुण गायें, उनका नाम लें तो कपट छूट जाता है। हम लोग भी प्राय: कपट वेष रखे रहते हैं, मन में कुछ रहता है, ऊपर से कहते कुछ और हैं। प्रभु का स्मरण करते-करते इस कपट व दुराव की हमें जीवन में जरूरत ही नहीं पड़ेगी। सब काम अपने सहज व असली वेष में ही होने लगेंगे।

सुग्रीव दूतों का अंग भंग करने का आदेश देते हैं

रिपु के दूत कपिन्ह तब जाने। सकल बाँधि कपीस पहिं आने॥ 52.2॥
कह सुग्रीव सुनहु सब वानर। अंग भंग करि पठवहु निसिचर॥ 52.3॥
सुनि सुग्रीव बचन कपि धाए। बाँधि कटक चहु पास फिराए॥ 52.4॥
बहु प्रकार मारन कपि लागे। दीन पुकारत तदपि न त्यागे॥ 52.5॥

रिपु के दूत कपिन्ह तब जाने = वानरों को जब पता चला कि ये शत्रु के दूत हैं, *सकल बाँधि* = उन सबको बाँधकर, *कपीस पहिं आने* = वानरों के राजा सुग्रीव के पास ले आये। *कह सुग्रीव सुनहु सब वानर* = सुग्रीव कहते हैं, सब वानर सुनो, *अंग भंग करि पठवहु निसिचर* = इन निशाचरों के अंग भंग करके भेज दो। *सुनि सुग्रीव बचन कपि धाए* = सुग्रीव की आज्ञा सुनकर वानर दौड़े, *बाँधि* = उन लोगों को फिर से बाँध दिये, *कटक चहु पास फिराए* = सेना के चारों तरफ घुमाया। *बहु प्रकार मारन कपि लागे* = फिर उन्हें तरह-तरह से मारने लगे, *दीन पुकारत तदपि न त्यागे* = दूतों ने बहुत विनती की पर वानर उन्हें मारते रहे।

जब दूतों का कपट वेष छूट गया तो वानरों ने पहचान लिया कि ये तो शत्रु के दूत हैं। उन सबको बाँधकर राजा सुग्रीव के पास ले जाते हैं। सुग्रीव कहते हैं कि इनके अंग भंग करके इन्हें वापस भेज दो। यह सुनकर वानर दौड़े, दूतों

को फिर से बाँधकर सेना के चारों तरफ घुमाया। फिर वानर इन्हें मारने लगे। दूतों ने हाथ-पाँव जोड़े, घिघियाते रहे पर वानर उन्हें मारते रहे।

सुग्रीव की सोच राजा जैसे पर राम-लक्ष्मण की सोच अलग है

सुग्रीव हमेशा एक राजा के समान व्यवहार करते हैं। उस समय की प्रथा के अनुसार किसी राजा का गुप्तचर या दूत पकड़ा जाने पर दूसरे राजा उसका नाक-कान काटकर वापस भेज देता था। अंग भंग मायने नाक कान काटना। पहले भी सुग्रीव ने विभीषण को बाँधने की सलाह दी थी। पर श्रीराम ने विभीषण को अपना लिया। इन दूतों को भी लक्ष्मण जी छुड़वा देते हैं। राम व लक्ष्मण की सोच राजा की सोच के आगे है। वे दोनों दूरदर्शी सोच रखते हैं।

'बाँधि' शब्द दो बार आया है, तुलसीदास जी की बारीकी समझें

श्रीरामचरितमानस में तुलसीदास जी बारीक-से-बारीक बातों का ध्यान रखते हैं। वानर दूतों को बाँधकर सुग्रीव के पास ले जाते हैं। इसलिये बाँधि शब्द आया। पर जब सुग्रीव के पास खड़ा करते हैं तो उनके बँधन छोड़ देते हैं, यह नियम है। सुग्रीव ने जब अंग भंग की सजा सुना दी तो वानरों ने दूतों को फिर से बाँध दिया। यहाँ पर बाँधि शब्द दुबारा आया। आज भी देखें, अपराधी को हथकड़ी बाँधकर रखते हैं, पर कोर्ट में जज के सामने हथकड़ी खोल देते हैं। फिर पेशी के बाद हथकड़ी डालकर जेल ले जाते हैं।

राम की शपथ लेने पर लक्ष्मण जी ने दूतों को छुड़वा दिया

जो हमार हर नासा काना। तेहि कोसलाधीस कै आना॥52.6॥
सुनि लछिमन सब निकट बोलाए। दया लागि हँसि तुरत छोड़ाए॥52.7॥

जो हमार हर नासा काना = यदि हमारे नाक-कान काटे, *तेहि कोसलाधीस कै आना* = तो कोसल के राजा श्रीराम की कसम है। *सुनि लछिमन सब निकट बोलाए* = लक्ष्मण जी ने सब सुनकर अपने पास बुला लिया, *दया लागि हँसि तुरत छोड़ाए* = उन पर दया कर हँसकर तुरंत उनके बँधन खुलवा दिये।

दूतों ने देखा कि ये वानर मारते ही जा रहे हैं, तब उन्हें यह उपाय सूझा कि क्यों न हम श्रीराम का नाम लें। दूत कहने लगे, देखो हम भी श्रीराम की शरण

में हैं, जैसे विभीषण को स्वीकारा वैसे हम भी हैं। देखो हमारे नाक-कान मत काटना, हम श्रीराम की शरण में हैं, उनकी शपथ लेते हैं। लक्ष्मण जी ने जब सुना कि ये श्रीराम की दुहाई दे रहे हैं तो अपने पास बुलवा लिया। उन्हें दया आ गयी, हँसकर कहा, छोड़ो-छोड़ो मारो नहीं इन्हें, नाक-कान मत काटो, बंधन भी खोल दो।

लक्ष्मण जी क्यों हँसे?

लक्ष्मण जी के हँसने के कई कारण हैं। एक तो इन दूतों ने स्वयं ही रावण की हार और श्रीराम की विजय मान ली। रावण का नाम लेने से देख लिया कुछ नहीं होने वाला है, जबकि राम नाम लेने से बच गये। लक्ष्मण जी ने सोचा समुद्र किनारे आने की खबर देने के लिये रावण के पास दूत तो भेजना ही पड़ता, अब इन्हें ही अपना दूत बनाकर भेज देंगे।

लक्ष्मण जी दूतों से रावण को संदेश भेजते हैं।

रावन कर दीजहु यह पाती। लछिमन बचन बाचु कुलघाती॥ 52.8॥

कहेहु मुखागर मूढ़ सन मम संदेसु उदार।
सीता देइ मिलहु न त आवा कालु तुम्हार॥ दोहा 52॥

रावन कर दीजहु यह पाती = यह पत्र रावण को दे देना, *लछिमन बचन बाचु कुलघाती* = उससे कहना, हे कुल का नाश करने वाले इसे पढ़ लो। *कहेहु मुखागर मूढ़ सन* = फिर उस मूर्ख से जबानी, *मम संदेसु उदार* = मेरा उदार संदेश कहना कि, *सीता देइ* = सीता को देकर, *मिलहु* = राम जी से आकर मिलो, *न त* = नहीं तो, *आवा कालु तुम्हार* = तुम्हारी मृत्यु समझो आ गयी है।

लक्ष्मण जी ने सोचा कि जब राम का नाम लेते हो तो राम का काम भी करो। हम रावण के लिये एक पत्र देते हैं, तुम लोग उसे दे देना और कह देना कि हे कुल का नाश करने वाले रावण, लक्ष्मण का पत्र पढ़ ले। फिर जबानी संदेश भी देते हैं कि उससे जाकर कह देना कि सीता जी को वापस कर राम जी से आकर मिल ले, नहीं तो उसका काल बहुत नजदीक आ गया है। कुल सहित उसका विनाश हो जायेगा।

राम गुण गाते दूत लंका पहुँचे, रावण उनसे कुशलता पूछता है

तुरत नाइ लछिमन पद माथा। चले दूत बरनत गुन गाथा॥ 53.1॥
कहत राम जसु लंकाँ आए। रावन चरन सीस तिन्ह नाए॥ 53.2॥
बिहसि दसानन पूँछी बाता। कहसि न सुक आपनि कुसलाता॥ 53.3॥

तुरत नाइ लछिमन पद माथा = उन्होंने तुरंत ही लक्ष्मण जी के चरणों में प्रणाम किया, *चले दूत बरनत गुन गाथा* = श्रीराम के गुणों का वर्णन करते हुए दूत चल दिये। *कहत राम जसु लंकाँ आए* = राम जी का यश गाते-गाते लंका आ गये, *रावन चरन सीस तिन्ह नाए* = रावण के दरबार में जाकर उसे प्रणाम करते हैं। *बिहसि दसानन पूँछी बाता* = रावण ने हँसकर उनसे पूछा, *कहसि न सुक आपनि कुसलाता* = रे शुक, अपनी कुशल बतलाओ।

उन दूतों ने तुरंत लक्ष्मण जी के चरणों में प्रणाम किया और पत्र लेकर चल दिये। वानर समुद्र के किनारे बहुत दूर तक हैं, इन्हीं के बीच से दूत वापस जा रहे हैं। फिर से वानर मारे नहीं, इसलिये श्रीराम के गुणों का वर्णन करते चले जा रहे हैं। लंका पहुँचकर सीधे राजदरबार में गये। वहाँ रावण को प्रणाम करके दूत चुपचाप खड़े हैं। रावण हँसकर कहता है, अरे शुक, तुम अपनी कुशलता क्यों नहीं कहते? शुक चुपचाप खड़ा है, बोलता नहीं। सोचता है, क्या बतायें, क्या न बतायें।

दूत से विभीषण के बारे में रावण पूछता है

पुनि कहु खबरि बिभीषन केरी। जाहि मृत्यु आई अति नेरी॥ 53.4॥
करत राज लंका सठ त्यागी। होइहि जव कर कीट अभागी॥ 53.5॥

पुनि कहु खबरि बिभीषन केरी = फिर विभीषण की खबर बताओ, *जाहि मृत्यु आई अति नेरी* = जिसकी मृत्यु अति निकट आ गई है। *करत राज लंका* = लंका का राज्य कर रहा था, *सठ त्यागी* = मूर्ख ने लंका छोड़ दी, *होइहि जव कर कीट अभागी* = वह दुर्भाग्यशाली वहाँ जाकर अब जौ का कीड़ा यानि घुन बन गया।

रावण शुक से पूछता है, विभीषण की खबर कहो जिसकी मृत्यु निकट ही है। वह आराम से यहाँ लंका में राज कर रहा था, राज्य के सुख भोग रहा था,

अब वह मूर्ख यह सब छोड़कर वहाँ चला गया। उसका दुर्भाग्य तो देखो, वहाँ जाकर वह जौ का कीड़ा बन गया। एक कहावत है, गेहूँ के साथ घुन भी पिसता है। उसी कहावत को कहता है कि ये सारी सेना जब मारी जायेगी तो उसी के साथ विभीषण भी मारा जायेगा।

रावण वानर सेना के बारे में पूछता है

पुनि कहु भालु कीस कटकाई। कठिन काल प्रेरित चलि आई॥ 53.6॥
जिन्ह के जीवन कर रखवारा। भयउ मृदुल चित सिंधु बिचारा॥ 53.7॥

पुनि कहु भालु कीस कटकाई = अब बताओ वानरों और भालुओं की सेना का क्या हाल है, *कठिन काल प्रेरित चलि आई* = जो कठिन काल की प्रेरणा से यहाँ चले आये हैं। *जिन्ह के जीवन कर रखवारा* = और जिनके जीवन का रक्षक, *भयउ मृदुल चित सिंधु बिचारा* = बेचारा कोमल स्वभाव वाला समुद्र बन गया है।

अब बताओ वानर-भालू कितने हैं, कैसी सेना है? उनका जीवनकाल समाप्त हो रहा है, इसलिये काल की प्रेरणा से अपना जीवन समाप्त करने लंका की तरफ चले आये हैं। जितने दिन तक समुद्र पार नहीं कर पायेंगे, समझो उतने दिन का उनका जीवन है। बेचारा समुद्र कितने कोमल स्वभाव का है, जिसने इनकी मृत्यु को रोक रखा है।

तपस्वियों के बारे में बताओ, वे हैं कि डर के वापस चले गये?

कहु तपसिन्ह कै बात बहोरी। जिन्ह के हृदयँ त्रास अति मोरी॥ 53.8॥

की भइ भेंट कि फिरि गए श्रवन सुजसु सुनि मोर।
कहसि न रिपु दल तेज बल बहुत चकित चित तोर॥ दोहा 53॥

कहु तपसिन्ह कै बात बहोरी = फिर तपस्वियों की बात बताओ, *जिन्ह के हृदयँ* = जिनके हृदय में, *त्रास अति मोरी* = मेरा बहुत डर बैठा है। *की भइ भेंट* = उनसे तुम्हारी भेंट हुई, *कि फिरि गये* = कि वे वापस चले गये, *श्रवन सुजसु सुनि मोर* = मेरा यश सुनकर के। *कहसि न* = तुम कहते क्यों नहीं, *रिपु दल* = शत्रु

के दल का, *तेज बल* = तेज और बल, *बहुत चकित चित तोर* = तेरा चित्त तो बहुत ही भौचक्का हो रहा है।

राम-लक्ष्मण के लिये रावण तपस्वी शब्द कहता है। अब उन दोनों तपस्वियों के बारे में बताओ जिनके हृदय में हमारा बहुत डर है। तुम्हें वे समुद्र किनारे मिले भी कि नहीं। हो सकता है वे अपने कानों से यह सुनकर कि रावण बड़ा शक्तिशाली है, लौट गये हों। अरे शुक, तुम कुछ बताते क्यों नहीं? शत्रु की सेना कैसी है? शक्तिशाली है या कमजोर है? सारी बातें बताओ। तुम्हारा चित्त इतना भौचक्का क्यों है?

रावण सारे प्रश्न उत्तर सहित ही पूछता है

रावण चाहता कि मैं जो सोचूँ उसी में सब हाँ में हाँ मिलायें। इसलिये वह शुक से सारे प्रश्न उत्तर सहित पूछता है। वह चाहता है कि शुक कहे, विभीषण लंका छोड़कर वहाँ बहुत कष्ट में है, वानरों में कोई बल नहीं, राम-लक्ष्मण हमसे भयभीत हैं। शुक सोचता है, उत्तर तो सारे उल्टे हैं, कैसे इसे बतायें?

दूत कहते हैं कि विभीषण को राम ने लंका का राजा बना दिया

नाथ कृपा करि पूँछेहु जैसें। मानहु कहा क्रोध तजि तैसें॥54.1॥
मिला जाइ जब अनुज तुम्हारा। जातहिं राम तिलक तेहि सारा॥54.2॥

नाथ कृपा करि पूँछेहु जैसें = हे नाथ, आपने जैसे कृपा करके पूछा है, *मानहु कहा* = मेरा कहना मानिये, *क्रोध तजि तैसें* = उसी प्रकार क्रोध को छोड़कर। *मिला जाइ जब अनुज तुम्हारा* = जब आपका छोटा भाई उनसे जाकर मिला, *जातहिं राम तिलक तेहि सारा* = पहुँचने के साथ ही राम ने उसका राजतिलक कर दिया।

दूत कहते हैं, हे नाथ आपने जिस प्रकार कृपा करके पूछा है, उसी प्रकार हमारी बातें क्रोध छोड़कर सुनिये। वे जानते हैं कि हम जो बताने जा रहे हैं, वह रावण की उम्मीद से उल्टा है, इसलिये वह बहुत क्रोधित होगा। दूत कहते हैं, जैसे ही आपका छोटा भाई राम से मिला, मिलते ही राम ने उसका राजतिलक करके लंका का राजा बना दिया। शुक कहना चाहता है कि राम को लंका के राज्य

का लालच नहीं। 'राज्य तो तुम्हारा ही है, वह तुम्हारे भाई का हो या तुम्हारा, हमें तो सीता चाहिये।' राम कितने नीतिवान् हैं।

वानरों ने हमें बाँधा-पीटा, फिर राम नाम से बचे

रावन दूत हमहि सुनि काना। कपिन्ह बाँधि दीन्हे दुख नाना॥54.3॥
श्रवन नासिका काटैं लागे। राम सपथ दीन्हें हम त्यागे॥ 54.4॥

रावन दूत हमहि सुनि काना = यह सुनकर कि हम रावण के दूत हैं, *कपिन्ह बाँधि दीन्हे दुख नाना* = वानरों ने हमें बाँध कर बहुत दु:ख दिये। *श्रवन नासिका काटैं लागे* = वे लोग हमारे नाक-कान काटने लगे, *राम सपथ दीन्हें हम त्यागे* = राम की शपथ लेने पर हमें छोड़ दिया।

अब शुक अपनी बात बताता है। जैसे ही वानरों को मालूम हुआ कि हम रावण के दूत हैं, उन्होंने हमें बाँध लिया। राजा सुग्रीव ने आज्ञा दी कि इनके नाक-कान काट दो। वानर जब हमें मारने लगे, नाक-कान काटने लगे, तब हमने राम की शपथ खाई, उन्हीं की दुहाई दी, तब जाकर उन्होंने छोड़ा। जब तक हम आपकी दुहाई देते रहे उन्होंने सुना नहीं। मानो वे आपसे डरते नहीं, राम नाम लेने पर ही छोड़ा।

वानर-भालू सेना बड़ी विशाल व शक्तिशाली है

पूँछिहु नाथ राम कटकाई। बदन कोटि सत बरनि न जाई॥54.5॥
नाना बरन भालु कपि धारी। बिकटानन बिसाल भयकारी॥54.6॥
जेहिं पुर दहेउ हतेउ सुत तोरा। सकल कपिन्ह महँ तेहि बलु थोरा॥54.7॥
अमित नाम भट कठिन कराला। अमित नाग बल बिपुल बिसाला॥54.8॥

पूँछिहु नाथ राम कटकाई = आपने राम की सेना के बारे में पूछा है, *बदन कोटि सत बरनि न जाई* = उसका तो सौ करोड़ मुखों से भी वर्णन नहीं किया जा सकता। *नाना बरन* = अनेक रंगों के, *भालु कपि धारी* = वानरों व भालुओं की सेना है, *बिकटानन* = बहुत बड़े मुख हैं, *बिसाल* = बड़े भारी शरीर हैं, *भयकारी* = बहुत भयानक है। *जेहिं पुर दहेउ* = जिस वानर ने लंका जलाई थी, *हतेउ सुत तोरा* = आपके पुत्र को मारा था, *सकल कपिन्ह महँ* = सारे वानरों

में, *तेहि बलु थोरा* = उसमें बहुत थोड़ा बल है। *अमित नाम* = असंख्य नाम वाले, *भट कठिन कराला* = बड़े ही कठोर और भयंकर योद्धा हैं, *अमित नाग बल* = उनमें असंख्य हाथियों का बल है, *बिपुल बिसाला* = और वे बड़े ही विशाल हैं।

आपने यह भी पूछा कि वानर-भालुओं की सेना कैसी है? तो उसका एक मुख से क्या वर्णन करें, करोड़ मुख हों तो भी वर्णन नहीं कर सकते। तरह-तरह के वानर व भालू हैं। उनके मुख भयंकर हैं, बड़े-बड़े शरीर हैं, बड़े शक्तिशाली हैं। अब यह समझाने के लिये कि वानर कितने बलशाली हैं दूत उदाहरण देता है कि जिस वानर ने लंका में आग लगायी, आपके पुत्र को मारा वह अन्य वानरों की तुलना में कम शक्तिशाली था। उनके नाम क्या बतायें, अगणित नाम हैं, सब एक से एक वीर हैं। उन वानरों के अंदर अनेक हाथियों का बल है।

दूत कुछ वानर सेनापतियों के नाम बताता है

द्विबिद मयंद नील नल अंगद गद बिकटासि।
दधिमुख केहरि निसठ सठ जामवंत बलरासि॥ दोहा 54॥

ए कपि सब सुग्रीव समाना। इन्ह सम कोटिन्ह गनइ को नाना॥ 55.1॥

द्विबिद मयंद नील नल अंगद गद बिकटासि = उनके नाम हैं द्विविद, मयंद, नील, नल, अंगद, गद। *दधिमुख केहरि निसठ सठ जामवंत* = दधिमुख, केसरी, निशठ, शठ और जाम्बवान्, *बलरासि* = इन सभी में बहुत बल है। *ए कपि सब सुग्रीव समाना* = ये सब कपि सुग्रीव के समान हैं, *इन्ह सम कोटिन्ह* = इनके जैसे करोड़ों हैं, *गनइ को नाना* = उन सबको कोई गिन ही नहीं सकता।

उनमें से कुछ के नाम हैं द्विविद, मयंद, नील, नल, अंगद, गद, दधिमुख, केसरी, निशठ, शठ और जाम्बवान्। इन सभी में बहुत बल है। ये सब कपि सुग्रीव के समान हैं। इनके जैसे करोडों और हैं, उन सबको कोई गिन ही नहीं सकता।

वानर सेना के उत्साह व कार्य का विस्तार से वर्णन

राम कृपाँ अतुलित बल तिन्हहीं। तृन समान त्रैलोकहि गनहीं॥ 55.2॥
अस मैं सुना श्रवन दसकंधर। पदुम अठारह जूथप बंदर॥ 55.3॥
नाथ कटक महँ सो कपि नाहीं। जो न तुम्हहि जीतै रन माहीं॥ 55.4॥
परम क्रोध मीजहिं सब हाथा। आयसु पै न देहिं रघुनाथा॥ 55.5॥
सोषहिं सिंधु सहित झष ब्याला। पूरहिं न त भरि कुधर बिसाला॥ 55.6॥
मर्दि गर्द मिलवहिं दससीसा। ऐसेइ बचन कहहिं सब कीसा॥ 55.7॥
गर्जहिं तर्जहिं सहज असंका। मानहुँ ग्रसन चहत हहिं लंका॥ 55.8॥

सहज सूर कपि भालु सब पुनि सिर पर प्रभु राम।
रावन काल कोटि कहुँ जीति सकहिं संग्राम॥ दोहा 55॥

राम कृपाँ अतुलित बल तिन्हहीं = राम जी की कृपा से उनमें अतुलनीय बल है, *तृन समान त्रैलोकहि गनहीं* = वे तीनों लोकों को तुच्छ समझते हैं। *अस मैं सुना श्रवन दसकंधर* = हे रावण मैने कानों से ऐसा सुना है कि, *पदुम अठारह जूथप बंदर* = अठारह पद्म तो केवल वानरों के सेनापति हैं। *नाथ कटक महँ सो कपि नाहीं* = उस सेना में ऐसा कोई वानर नहीं, *जो न तुम्हहि जीतै रन माहीं* = जो कि युद्ध में आपको न जीत ले। *परम क्रोध मीजहिं सब हाथा* = सब के सब अत्यंत क्रोध से हाथ मीजते हैं, *आयसु पै न देहिं रघुनाथा* = पर रघुनाथ जी उन्हें आज्ञा नहीं देते हैं। *सोषहिं सिंधु सहित झष ब्याला* = हम मछलियों व सर्पों सहित समुद्र को सोख देंगे, *पूरहिं न त भरि कुधर बिसाला* = नहीं तो बड़े-बड़े पहाड़ों से इसे पाट देंगे। *मर्दि गर्द मिलवहिं दससीसा* = और रावण को मसल कर धूल में मिला देंगे। *ऐसेइ बचन कहहिं सब कीसा* = सब वानर ऐसे ही वचन बोलते हैं। *गर्जहिं तर्जहिं सहज असंका* = वे सब सहज व निडर होकर गर्जते व डपटते हैं, *मानहुँ ग्रसन चहत हहिं लंका* = मानो अभी ही लंका को निगल जायेंगे।
सहज सूर कपि भालु सब = सब वानर व भालू सहज ही शूरवीर हैं, *पुनि सिर पर प्रभु राम* = फिर उनके ऊपर राम जी हैं। *रावन काल कोटि कहुँ जीति सकहिं संग्राम* = हे रावण, वे संग्राम में करोड़ों कालों को जीत सकते हैं।

ये सब वानर राम कृपा से इतने बलवान् हैं कि सारे संसार को तिनके के समान गिनते हैं। अपने से बलशाली किसी को मानते ही नहीं हैं। हे रावण, मैंने ऐसा

सुना है कि अठारह खरब तो सेनापति ही हैं। हे नाथ, उस सेना मे ऐसा कोई वानर नहीं है जो आपको युद्ध में न जीत ले। ये सब क्रोध से किटकिटा रहे हैं पर श्रीराम अभी उन्हें आदेश नहीं दे रहे हैं। राम कहते हैं अभी प्रतीक्षा करो, समय से काम होगा। वानर कहते हैं कि समुद्र को पी जायेंगे, जीव-जंतुओं को खा जायेंगे, अपने आप रास्ता बन जायेगा। कुछ कहते हैं, बड़े-बड़े पर्वतों से समुद्र भर दो, रास्ता बन जायेगा। रावण को पकड़ो और पैरों से रगड़कर धूल में मिला दो। वानरों को न भय है न शंका है, ऐसे गरज-गरज के उछल रहे हैं मानो लंका को ही खा जायेंगे। सब वानर और भालू तो वैसे ही शक्तिशाली हैं फिर श्रीराम उनके संरक्षक हैं। रावण तो क्या, वे काल को भी युद्ध में जीत सकते हैं। इस प्रकार दूतों ने वानर सेना का वर्णन किया। दूत का काम है यथार्थ बात बताये।

राम अतुलित बलशाली, फिर भी समुद्र से विनती कर रहे हैं

राम तेज बल बुधि बिपुलाई। सेष सहस सत सकहिं न गाई॥ 56.1॥
सक सर एक सोषि सत सागर। तव भ्रातहि पूँछेउ नय नागर॥ 56.2॥
तासु बचन सुनि सागर पाहीं। मागत पंथ कृपा मन माहीं॥ 56.3॥

राम तेज बल बुधि बिपुलाई = राम जी में सामर्थ्य, बल, बुद्धि इतना अधिक है कि, *सेष सहस सत* = एक हजार मुख वाले सौ शेष नाग, *सकहिं न गाई* = भी नहीं गा सकते। *सक सर एक सोषि सत सागर* = वे एक ही बाण से सैकड़ों सागर सुखा सकते हैं, *तव भ्रातहि पूँछेउ* = पर आपके भाई से उपाय पूछते हैं, *नय नागर* = नीति में निपुण हैं। *तासु बचन सुनि सागर पाहीं* = विभीषण की सलाह मानकर, *मागत पंथ* = समुद्र से रास्ता माँगते हैं, *कृपा मन माहीं* = उनके मन में कृपा भरी है।

रावण ने पूछा था कि तपस्वी की बात बताओ। दूत कहते हैं कि राम का तेज, बल व बुद्धि इतना अधिक है कि एक हजार मुख वाले सौ शेषनाग भी उनका वर्णन नहीं कर सकते हैं। राम में इतना बल है कि एक बाण से ही सात समुद्रों का पानी सुखा दें। पर वे चतुर व बुद्धिमान भी हैं। आपके भाई विभीषण से सलाह माँगी और उनके कहने पर विनम्रतापूर्वक समुद्र से रास्ता माँग रहे हैं। उनके अंदर कृपा है, वे चाहते हैं कि उनके कारण से अन्य लोगों को बड़ाई प्राप्त हो। रावण ने जितना पूछा था, उतना दूत शुक ने बता दिया।

रावण कहता है, शत्रु की झूठी तारीफ न करो, मैं सब समझ गया

सुनत बचन बिहसा दससीसा। जौं असि मति सहाय कृत कीसा॥56.4॥
सहज भीरु कर बचन दृढ़ाई। सागर सन ठानी मचलाई॥56.5॥
मूढ़ मृषा का करसि बड़ाई। रिपु बल बुद्धि थाह मैं पाई॥56.6॥
सचिव सभीत बिभीषन जाकें। बिजय बिभूति कहाँ जग ताकें॥ 56.7॥

सुनत बचन बिहसा दससीसा = दूत के बचन सुनते ही रावण खूब हँसा और बोला, *जौं असि मति* = जब उनकी ऐसी बुद्धि है, *सहाय कृत कीसा* = तभी तो वानरों को अपना सहायक बनाया है। *सहज भीरु कर बचन दृढ़ाई* = स्वभाव से ही डरपोक विभीषण की बात सच मानकर, *सागर सन ठानी मचलाई* = उन्होंने समुद्र से बालहठ ठान लिया है। *मूढ़ मृषा का करसि बड़ाई* = अरे मूर्ख झूठी बड़ाई क्या करता है, *रिपु बल बुद्धि थाह मैं पाई* = मैने शत्रु के बुद्धि और बल की थाह पा ली है। *सचिव सभीत बिभीषन जाकें* = जिसके विभीषण जैसे डरपोक मंत्री हों, *बिजय बिभूति कहाँ जग ताकें* = उसे संसार में विजय और विभूति कहाँ मिल सकती है।

रावण दूत की बात सुनते ही हँस पड़ा। कहता है, अब हमें पता चल गया कि इनकी बुद्धि कितनी है। तभी तो इन्होंने वानरों की सहायता ली है। विभीषण तो वैसे भी डरपोक है, वह तो हमसे भी सीता को वापस कर उनकी शरण में जाने को कह रहा था। अब उसने तपस्वी को कह दिया कि समुद्र की शरण में जाओ, समुद्र से विनती करो, रास्ता माँगो। वे तपस्वी भी विभीषण की बात सही मानकर समुद्र के सामने बच्चे की तरह मचल रहे हैं। रे मूर्ख, उनकी झूठ-मूठ की क्या बड़ाई कर रहा है। हमें असली बात पता चल गई कि उनमें शक्ति है ही नहीं। अंत में रावण निष्कर्ष देता है कि जिसके मंत्री विभीषण जैसे डरपोक होंगे, उसे संसार में विजय और विभूति नहीं मिल सकती है।

दूत क्रोध में आकर लक्ष्मण जी का पत्र रावण को देता है

सुनि खल बचन दूत रिस बाढ़ी। समय बिचारि पत्रिका काढ़ी॥ 56.8॥
रामानुज दीन्ही यह पाती। नाथ बचाइ जुड़ावहु छाती॥ 56.9॥
बिहसि बाम कर लीन्ही रावन। सचिव बोलि सठ लाग बचावन॥56.10॥

सुनि खल बचन = दुष्ट रावण के वचन सुनकर, *दूत रिस बाढ़ी* = दूत को गुस्सा आ गया, *समय बिचारि पत्रिका काढ़ी* = उसने मौका समझकर पत्रिका निकाली। *रामानुज दीन्ही यह पाती* = लक्ष्मण जी ने यह पत्र दिया है, *नाथ बचाइ* = हे नाथ इसे पढ़वाकर, *जुड़ावहु छाती* = छाती ठण्ढी करिये। *बिहसि बाम कर लीन्ही रावन* = रावण ने हँसकर उसे बायें हाथ से लिया, *सचिव बोलि* = मंत्री को बुलवाकर, *सठ लाग बचावन* = वह मूर्ख पत्र पढ़वाने लगा।

दुष्ट रावण की बातें सुनकर दूत को क्रोध आ गया कि यह हमारी बातों को झूठा कह रहा है। अवसर पाकर दूत लक्ष्मण जी के पत्र को निकालकर रावण को देता है। कहता है, हे नाथ यह पत्र राम के छोटे भाई लक्ष्मण ने दिया है, इसे पढ़वाकर अपनी छाती ठण्ढी कर लो। रावण हँसकर निरादर करते हुए बायें हाथ से पत्र लेता है। मंत्री को बुलावकर वह मूर्ख पत्र पढ़वाने लगता है।

अपनी बातों से मन को बहलाने से कुल सहित तेरा नाश होगा

बातन्ह मनहि रिझाइ सठ जनि घालसि कुल खीस।
राम बिरोध न उबरसि सरन बिष्नु अज ईस॥ दोहा 56 क॥

बातन्ह मनहि रिझाइ सठ = रे मूर्ख, बातों में ही अपने मन को रिझाकर, *जनि घालसि कुल खीस* = अपने कुल को नष्ट-भ्रष्ट मत कर। *राम बिरोध* = श्रीराम का विरोध करके, *न उबरसि* = बच नहीं पायेगा, *सरन बिष्नु अज ईस* = भले तू विष्णु, ब्रह्मा या शंकर की शरण में जा।

इन दो दोहों में तुलसीदास जी बता रहे हैं कि पत्र में क्या लिखा था। अपनी बातों से अपने मन को रिझाकर हे रावण, तू अपने कुल का विनाश न कर। तू अपने मन में ही अपने को शक्तिशाली समझते हुए अहंकार की बातें करता रहेगा तो इससे कल्याण नहीं होगा। श्रीराम का विरोध करके तेरी भलाई नहीं है, भले ही तेरी सहायता के लिये ब्रह्मा, विष्णु या महेश आ जायें।

विभीषण जैसे शरण में आ जा, अन्यथा राम बाण से जल जायेगा

की तजि मान अनुज इव प्रभु पद पंकज भृंग।
होहि कि राम सरानल खल कुल सहित पतंग॥ दोहा 56 ख॥

की तजि मान = या तो तू अपना अभिमान छोड़कर, *अनुज इव* = अपने छोटे भाई की तरह, *प्रभु पद पंकज भृंग* = प्रभु के चरण कमलों का भौंरा बन जा। *होहि कि* = या फिर तू बन जा, *राम सरानल* = राम जी की बाण रूपी अग्नि में, *खल* = रे दुष्ट, *कुल सहित पतंग* = अपने परिवार सहित पतंगा।

जैसे तेरे छोटे भाई ने श्रीराम की शरण ली है, उसी प्रकार तू भी अपना अभिमान छोड़कर प्रभु श्रीराम के चरण कमलों का भौंरा बन जा, यानि उनकी शरण में आ जा। अन्यथा यह समझ ले कि श्रीराम का बाण अग्नि के समान है और तेरा कुल पतंगे के समान। जैसे अग्नि में पतंगे स्वयं आकर नष्ट हो जाते हैं, वैसे ही तेरा कुल समाप्त हो जायेगा।

अंदर से भयभीत रावण हँसकर कहता है, सब फालतू की बात

सुनत सभय मन मुख मुसकाई। कहत दसानन सबहि सुनाई॥ 57.1॥
भूमि परा कर गहत अकासा। लघु तापस कर बाग बिलासा॥ 57.2॥

सुनत सभय मन = यह सुनकर अंदर से भयभीत हो गया, *मुख मुसकाई* = पर ऊपर से हँसकर, *कहत दसानन सबहि सुनाई* = सबको सुनाकर रावण कहता है। *भूमि परा* = जमीन पर पड़ा है, *कर गहत अकासा* = पर आकाश पकड़ना चाहता है, *लघु तापस कर* = छोटे तपस्वी की बात, *बाग बिलासा* = वाणी का विलास है।

रावण के मन में पत्र की बातें सुनकर भय उत्पन्न हुआ पर दिखावे की हँसी हँसकर सबको सुनाकर कहता है कि देखो, यह छोटा तपस्वी भूमि पर पड़ा है और पकड़ना चाहता है आकाश को। यह छोटा तपस्वी बातें लंबी-चौड़ी करता है। यह सब इसकी वाणी का विलास है, कुछ भी झूठ-मूठ बोलता रहता है।

शुक के समझाने पर रावण उसे भी लात मारकर भगा देता है

कह सुक नाथ सत्य सब बानी। समुझहु छाड़ि प्रकृति अभिमानी॥ 57.3॥
सुनहु बचन मम परिहरि क्रोधा। नाथ राम सन तजहु बिरोधा॥ 57.4॥
अति कोमल रघुबीर सुभाऊ। जद्यपि अखिल लोक कर राऊ॥ 57.5॥

मिलत कृपा तुम्ह पर प्रभु करिही। उर अपराध न एकउ धरिही॥ 57.6॥
जनकसुता रघुनाथहि दीजे। एतना कहा मोर प्रभु कीजे॥ 57.7॥
जब तेहिं कहा देन बैदेही। चरन प्रहार कीन्ह सठ तेही॥ 57.8॥

कह सुक नाथ सत्य सब बानी = शुक कहता है, हे नाथ सब बातें सत्य हैं, *समुझहु छाड़ि प्रकृति अभिमानी* = आप अभिमान छोड़कर समझिये। *सुनहु बचन मम परिहरि क्रोधा* = क्रोध छोड़कर मेरी बात सुनिये, *नाथ राम सन तजहु बिरोधा* = हे नाथ राम के साथ वैर भाव छोड़ दीजिये। *अति कोमल रघुबीर सुभाऊ* = श्रीराम का स्वभाव बहुत कोमल है। *जद्यपि अखिल लोक कर राऊ* = यद्यपि वे पूरे संसार के राजा हैं। *मिलत कृपा तुम्ह पर प्रभु करिही* = मिलते ही श्रीराम आप पर कृपा करेंगे, *उर अपराध न एकउ धरिही* = हृदय में एक भी अपराध न रखेंगे। *जनकसुता रघुनाथहि दीजे* = सीता जी राम को लौटा दीजिये, *एतना कहा मोर प्रभु कीजे* = मेरी इतनी बात मान लीजिये। *जब तेहिं कहा देन बैदेही* = जैसे ही उसने सीता को देने की बात कही, *चरन प्रहार कीन्ह सठ तेही* = दुष्ट रावण ने उसे लात मार दी।

शुक कहता है, हे नाथ इस पत्र में लक्ष्मण ने जो बातें लिखी हैं, वे सब सत्य हैं, वाणी-विलास नहीं है। आपकी अहंकारी प्रकृति है, इसलिये इसे मिथ्या समझ रहे हैं। अहंकार में दूसरों की सत्य बातें झूठी दिखाई देती हैं। अब शुक अपनी तरफ से भी रावण को समझाते हुआ कहता है, हे नाथ क्रोध को छोड़कर मेरी बात सुनिये। राम के साथ वैर भाव छोड़ दीजिये, वे तीनों लोकों के स्वामी हैं, फिर भी उनका स्वभाव बड़ा कोमल है। इसलिये जब आप उनकी शरण में जाएँगे तो आपके सारे अपराधों को भुलाकर क्षमा कर देंगे। शुक प्रार्थना करता है कि सीता जी को वापस कर दो। मेरी इतनी बात मान लो। जैसे ही उसने सीता जी को देने की बात कही, दुष्ट रावण ने उसे लात मारकर भगा दिया।

शुक श्रीराम के पास गया, श्रापमुक्त हो फिर से मुनि हो गया

नाइ चरन सिरु चला सो तहाँ। कृपासिंधु रघुनायक जहाँ॥ 57.9॥
करि प्रनामु निज कथा सुनाई। राम कृपाँ आपनि गति पाई॥ 57.10॥
रिषि अगस्ति कीं साप भवानी। राछस भयउ रहा मुनि ग्यानी॥ 57.11॥
बंदि राम पद बारहिं बारा। मुनि निज आश्रम कहुँ पगु धारा॥ 57.12॥

नाइ चरन सिरु चला सो तहाँ = वह रावण को प्रणाम करके वहाँ चल दिया, *कृपासिंधु रघुनायक जहाँ* = जहाँ कृपा के सागर श्रीराम थे। *करि प्रनामु निज कथा सुनाई* = शुक ने प्रणाम करके अपनी कथा बतायी, *राम कृपाँ आपनि गति पाई* = श्रीराम की कृपा से अपनी गति उसने पाई। *रिषि अगस्ति कीं साप भवानी* = हे भवानी ऋषि अगस्त्य के श्राप से, *राछस भयउ रहा मुनि ग्यानी* = राक्षस हो गया था, पहले ज्ञानी मुनि था। *बंदि राम पद बारहिं बारा* = श्रीराम के चरणों में बार-बार वंदना करके, *मुनि निज आश्रम* = मुनि अपने आश्रम को, *कहुँ पगु धारा* = चले गये।

शुक रावण को प्रणाम करके कृपा के सागर, श्रीराम के पास चला जाता है। श्रीराम को प्रणाम कर अपनी कथा सुनाता है। शंकर जी कहते हैं, हे पार्वती पहले यह ज्ञानी मुनि था, अगस्त्य ऋषि ने इसे श्राप दे दिया जिससे लंका में राक्षस होकर रावण का दूत बन गया। राम जी ने जब इस पर कृपा कर दी, वह श्रापमुक्त होकर फिर से ज्ञानी मुनि बन गया। श्रीराम के चरणों की बार-बार वंदना करके मुनि अपने आश्रम चले गये।

15. अग्नि बाण से डरकर समुद्र सेतु बनाने की विनती करता है

(दोहा 58 से 60)

श्रीराम तीन दिन तक समुद्र के सामने बैठे रहे। जब वह न तो प्रकट हुआ न रास्ता दिया तब कुपित हो श्रीराम लक्ष्मण जी से धुनष-बाण मँगाते हैं, अग्नि बाण से समुद्र को सुखाने का विचार करते हैं। बाण संधान करने के पहले सात नीति वचन बोलकर एक प्रकार से समुद्र को डाँटते हैं। ये नीति वचन हम सबके लिये भी हितकारी हैं। इसके बाद भी समुद्र की तरफ से कोई जवाब नहीं आता। तब श्रीराम अग्नि बाण का संधान कर लेते हैं। उसकी प्रचंड अग्नि से समुद्र के अंदर ज्वाला उठती है, जीव-जंतु व्याकुल होते हैं। बाण चलने के पहले ही समुद्र प्रकट होकर क्षमा माँगता है, 'हे प्रभु नल-नील की सहायता से पुल बनाइये। मैं भी सहायक बनूँगा।' अग्नि बाण को समुद्र अपने दूसरे छोर पर रहने वाले दुष्टों पर चलवाकर उन्हें मरवा देता है। श्रीराम कैसे कार्य करते हैं, कैसे कदम उठाते हैं, कैसे बातचीत करते हैं, यह सब हमें जीवन में उतारने का प्रयास करना चाहिये। यह श्रीराम-समुद्र संवाद बहुत आनंददायक है। अपने आप को इस बातचीत का साक्षी मानकर पाठ करें, लगेगा हम भी इस संवाद में शामिल हैं।

विनती का कोई असर नहीं, श्रीराम अग्नि बाण से सुखाने को तैयार

बिनय न मानत जलधि जड़ गए तीनि दिन बीति।
बोले राम सकोप तब भय बिनु होइ न प्रीति॥ दोहा 57॥

लछिमन बान सरासन आनू। सोषौं बारिधि बिसिख कृसानू॥ 58.1॥

बिनय न मानत = विनय नहीं सुनता, *जलधि जड़* = जड़ समुद्र, *गए तीनि दिन बीति* = तीन दिन बीत जाने पर भी। *बोले राम सकोप तब* = तब रामजी क्रोध करके बोले, *भय बिनु होइ न प्रीति* = बिना भय के प्रेम नहीं होता।
लछिमन बान सरासन आनू = हे लक्ष्मण धनुष-बाण लाओ, *सोषौं बारिधि* = समुद्र को सोख दूँगा, *बिसिख कृसानू* = अग्नि बाण से।

समुद्र के तट पर श्रीराम बैठे हुए विनती करते रहे कि समुद्र वानर सेना को उस पार जाने के लिये रास्ता प्रदान करे। समुद्र ने न तो रास्ता दिया, न प्रकट होकर श्रीराम के पास आया। वह यथावत् लहराता रहा। श्रीराम तीन दिन तक प्रतीक्षा करते रह गये। उसके बाद श्रीराम कुपित होकर लक्ष्मण जी से बोले कि मेरा धनुष-बाण लाओ, मैं अग्नि बाण से इस समुद्र को सुखा देता हूँ। उस समय बाण मंत्र की शक्ति से चलते थे।

विनय, प्रेम, उदारता, ज्ञान, वैराग्य, समता, रामकथा, कब व्यर्थ हैं?

सठ सन बिनय कुटिल सन प्रीती। सहज कृपन सन सुंदर नीती॥ 58.2॥
ममता रत सन ग्यान कहानी। अति लोभी सन बिरति बखानी॥ 58.3॥
क्रोधिहि सम कामिहि हरिकथा। ऊसर बीज बएँ फल जथा॥ 58.4॥

सठ सन बिनय = मूर्ख से विनती करना, *कुटिल सन प्रीती* = कुटिल के साथ प्रेम, *सहज कृपन सन सुंदर नीती* = कंजूस से उदारता की बात करना, *ममता रत सन ग्यान कहानी* = ममता में फँसे व्यक्ति से ज्ञान की कथा कहना, *अति लोभी सन बिरति बखानी* = अत्यंत लोभी व्यक्ति से वैराग्य की महिमा बताना, *क्रोधिहि सम* = क्रोध करने वाले से समभाव की बातें, *कामिहि हरिकथा* = कामनाओं से ग्रस्त व्यक्ति से रामकथा कहना, *ऊसर बीज बएँ फल जथा* = वैसे ही व्यर्थ है जैसे बंजर भूमि में बीज बोने से बीज व्यर्थ चला जाता है।

इन तीन चौपाइयों में श्रीराम 7 तरह के स्वभाव वाले लोगों के बारे में बताते हैं, उनकी तुलना बंजर भूमि से करते हैं। जिस प्रकार बंजर में बीज बोओगे तो फसल नहीं उगेगी, बीज व्यर्थ चला जायेगा, उसी प्रकार इन स्वभाव के व्यक्तियों के दिमाग में जितना समझाओ सब व्यर्थ जायेगा।

1. *मूर्ख से विनय*– मूर्ख व्यक्ति से विनती करना बेकार है। वह सोचेगा कि इसमें शक्ति नहीं इसलिये हमसे विनय कर रहा है।
2. *कुटिल से प्रेम*– कुटिल व्यक्ति से प्रेम करना बेकार है। इस स्वभाव के व्यक्ति चालाक होते हैं। अवसर आया, लाभ उठा लिया फिर चलते बने। यह सोच कर इनसे प्रेम रखना कि जरूरत में कभी काम आयेंगे व्यर्थ है।
3. *कंजूस से उदारता*– कंजूस व्यक्ति से उदारता की बातें करना बेकार है। इस स्वभाव के व्यक्ति को जो कुछ प्राप्त होता है उसे वे खर्च नहीं करना चाहते।
4. *ममता से ज्ञान*– ममता में पड़ा व्यक्ति सदैव मेरेपन में ही मस्त रहता है। मेरा धन, मेरा घर, मेरा पुत्र, मेरी पुत्री आदि के अलावा उसे कुछ समझ में ही नहीं आता। ऐसे व्यक्ति से ज्ञान की बातें करना व्यर्थ है। वह ज्ञान सीख भी ले तो उसका प्रयोग सिर्फ अपने लिये ही करेगा।
5. *लोभी से वैराग्य*– अति लोभी से वैराग्य की बातें मत करो। लोभ मायने और चाहिये, और चाहिये। उससे कहो, अब बस करो, पर्याप्त है, तो कहेगा अरे वाह! इतने में क्या होगा? वैराग्य मायने संतुष्ट रहना।
6. *क्रोधी से समता*– जो व्यक्ति स्वभाव से ही क्रोधी है वह हमेशा अपने आप को दूसरों से श्रेष्ठ समझता है। उससे कहो, सब बराबर हैं, सबमें सम भाव रखो, तो कहेगा ये सब बेकार की बातें हैं, हमसे अच्छा कोई है ही नहीं।
7. *कामी से रामकथा*– संसार की तमाम चीजों की कामनायें रखने वाले व्यक्ति कामी कहलाते हैं। उनसे भगवान की कथा कहो तो उन्हें समझ में नहीं आयेगी। कथाओं में निष्कामता की बातें रहती हैं। वह कहेगा, कामना नहीं करेंगे तो जीवन कैसे चलेगा, सफलता कैसे मिलेगी?

यदि हमारा स्वभाव भी इन सातों प्रकार का है, या इनमें से किसी भी प्रकार का है, तो उससे छूटने का अभ्यास करना चाहिये।

श्रीराम अग्नि बाण का संधान करते हैं, समुद्र में हलचल

अस कहि रघुपति चाप चढ़ावा। यह मत लछिमन के मन भावा॥58.5॥
संधानेउ प्रभु बिसिख कराला। उठी उदधि उर अंतर ज्वाला॥58.6॥

अस कहि रघुपति चाप चढ़ावा = ऐसा कहकर राम जी ने धनुष में डोरी चढ़ायी, *यह मत लछिमन के मन भावा* = यह बात लक्ष्मण जी के मन को अच्छी लगी। *संधानेउ प्रभु बिसिख कराला* = प्रभु ने धनुष में अग्नि बाण का संधान किया, उठी *उदधि उर अंतर* ज्वाला= समुद्र के हृदय के अंदर अग्नि की ज्वाला उठी।

इतना सब कहने पर भी समुद्र पर कोई असर नहीं हुआ तो श्रीराम ने धनुष में डोरी चढ़ाई फिर उसके ऊपर अग्नि बाण रखा। लक्ष्मण जी ने कहा अब ठीक है। जैसे ही बाण धनुष पर आया, समुद्र के अंदर ज्वाला उठने लगी। समुद्र का तापमान बढ़ गया, पानी उबलने लगा।

जब समुद्री जीव-जंतु जलने लगे तब उपहार लेकर समुद्र प्रकट हुआ

मकर उरग झष गन अकुलाने। जरत जंतु जलनिधि जब जाने॥ 58.7॥
कनक थार भरि मनि गन नाना। बिप्र रूप आयउ तजि माना॥ 58.8॥

मकर = मगर, *उरग* = साँप, *झष गन* = मछलियों के समूह, *अकुलाने* = व्याकुल होने लगे, *जरत जंतु* = जीवों को जलते, *जलनिधि जब जाने* = जब समुद्र ने देखा। *कनक थार भरि* = सोने की थाली में भरकर, *मनि गन नाना* = अनेक मणियों को, *बिप्र रूप* = विप्र का वेष रखकर, *आयउ तजि माना* = अभिमान छोड़कर आता है।

मगर, सर्प, मछलियाँ, सब जीव-जंतु तड़पने लगे। जब समुद्र ने देखा कि सब जीव-जंतु व्याकुल हो रहे हैं, जल रहे हैं, तब उसकी समझ में आया। वह तुरंत ही सोने की थाली में तरह-तरह के रत्न लेकर श्रीराम के सामने विप्र रूप धारण कर प्रकट होता है। विप्र मायने शास्त्र के ज्ञाता। चूँकि श्रीराम विप्र का वध नहीं करेंगे, इस कारण वह इस रूप में प्रकट हुआ। धनुष पर बाण चढ़ा है, बाण छूटने न पाये इसके पहले ही समुद्र अपना अभिमान छोड़कर आता है।

समुद्र का एक अधिष्ठान देवता है जो प्रकट होता है

समुद्र का एक अधिष्ठान देवता है, जो समुद्र से निकलकर श्रीराम के सामने आ जाता है। जितने पर्वत हैं उनका भी देवता होता है। सूर्य का भी देवता है, पृथ्वी का भी देवता है। उन देवताओं के कारण ही सृष्टि का संचालन होता

रहता है। देवता जब तक वास करता है तब तक सृष्टि का कार्य वहाँ से होता रहता है। यह नियम है। समुद्र का देवता विप्र बनकर आता है।

श्रीराम एकदम से दंडनीति नहीं अपनाते

लक्ष्मण जी व्यक्ति को देखकर उसके स्वभाव के अनुसार कार्य करते हैं। उन्हें समुद्र का स्वभाव पता था कि यह विनती से नहीं मानेगा। पर राम जी व्यक्ति के स्वभाव को जानते हुए भी एकदम से दंडनीति नहीं अपनाते। पहले वे विनती करते हैं। तीन दिन समुद्र से विनती की, जब असर नहीं हुआ तो कटु वचन कहते हैं, डाँटते हैं। अंत में दंड देने के लिये अग्नि बाण का संधान करते हैं। फिर भी उसे अभी चलाया नहीं, सिर्फ संधान किया है।

काटेहिं पइ कदरी फरइ कोटि जतन कोउ सींच।
बिनय न मान खगेस सुनु डाटेहिं पइ नव नीच॥ दोहा 58॥

काटेहिं पइ कदरी फरइ = केला का पेड़ तो काटने से ही फल देता है, *कोटि जतन कोउ सींच* = चाहे कोई सींचने के करोड़ों उपाय करे, *बिनय न मान* = विनती से नहीं मानता, *खगेस सुनु* = हे गरुड़ सुनो, *डाटेहिं पइ नव नीच* = नीच स्वभाव का व्यक्ति डाँटने से ही झुकता है।

केला का पेड़ काटने पर फल देता है, नीच डाँटने पर मानता है

कागभुशुंडी कथा सुनाते हुए गरुड़ को इस कथा की शिक्षा बताते हैं। केला काटने से ही फल देता है। एक बार केले के पेड़ मे फल लग गये, फिर उसे चाहे जितना सींचो वह फलेगा नहीं, जब तक उसे नीचे से काट न दो। इसी प्रकार नीच स्वभाव का व्यक्ति विनम्रता से नहीं मानता, उसका अहंकार और बढ़ता जाता है। ऐसे स्वभाव के व्यक्ति को जब डाँटेंगे तभी वह झुकेगा, बात मानेगा, काम करेगा।

समुद्र कहता है आपकी प्रेरणा से ही माया ने हमें जड़ बनाया है

सभय सिंधु गहि पद प्रभु केरे। छमहु नाथ सब अवगुन मेरे॥ 59.1॥
गगन समीर अनल जल धरनी। इन्ह कइ नाथ सहज जड़ करनी॥ 59.2॥
तव प्रेरित मायाँ उपजाए। सृष्टि हेतु सब ग्रंथनि गाए॥ 59.3॥

सभय सिंधु = समुद्र ने भयभीत होकर, *गहि पद प्रभु केरे* = प्रभु श्रीराम के चरण पकड़कर कहा, *छमहु नाथ सब अवगुन मेरे* = हे नाथ मेरे सब अवगुणों को क्षमा करिये। *गगन* = आकाश, *समीर* = वायु, *अनल* = अग्नि, *जल* = पानी, *धरनी* = पृथ्वी, *इन्ह कइ नाथ* = हे नाथ इन सबके, *सहज जड़ करनी* = कर्म स्वभाव से ही जड़ हैं। *तव प्रेरित* = आपकी प्रेरणा से, *मायाँ उपजाए सृष्टि हेतु* = माया ने सृष्टि की रचना के लिये इन्हें उत्पन्न किया है, *सब ग्रंथनि गाए* = सभी शास्त्रों में ऐसा ही कहा गया है।

समुद्र के यहाँ दो रूप देखने को मिलते हैं। पहले श्रीराम स्वयं उसके आगे हाथ जोड़े विनती कर रहे थे, लेकिन वह सुन नहीं रहा था। अब जब बाण की ज्वाला उठने लगी तो भयभीत होकर एकदम विनम्र हो गया। प्रभु राम के चरण पकड़कर माफी मांग रहा है। कहता है, हमारे अपराध आप क्षमा कर दें। कहता है, हे नाथ, आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी, इन सभी को आपकी ही प्रेरणा से आपकी माया ने सृष्टि की रचना के लिये स्वभाव से जड़ बनाया है।

हे प्रभु, आपकी जिसको जैसी आज्ञा है, वह वैसा ही करने में लगा है

प्रभु आयसु जेहि कहँ जस अहई। सो तेहि भाँति रहें सुख लहई॥59.4॥

प्रभु आयसु = आपकी आज्ञा, *जेहि कहँ* = जिसके लिये, *जस अहई* = जैसी है, *सो तेहि भाँति रहें* = वह उसी प्रकार रहने में, *सुख लहई* = सुख पाता है।

आपकी आज्ञा जिसको जैसी है, वह वैसा ही करता है। आकाश को आज्ञा है कि व्यापक होकर विद्यमान रहो, सबको स्थान दो। वह वैसे ही आज्ञा पालन में लगा है। वायु से आपने कहा है कि सबको श्वास प्रदान करे, सबका जीवन चले, वायु उतना ही काम करती है। अग्नि से कह दिया ताप दे, प्रकाश दे, वह उसी काम में लगी है। आपके कहने से ही जल तरलता व शीतलता प्रदान करता है। आपने पृथ्वी को ठोस बना दिया, उसके ऊपर प्राणी बस गये। इन पंच महाभूतों के अपने-अपने धर्म हैं, उन्हीं के पालन में ये लगे रहते हैं। इसी में इनकी मर्यादा है, इसी में इन्हें सुख है। प्रकृति व भौतिकता के ये नियम भगवान के आदेश हैं, इन्हीं से सब चलता है।

हे प्रभु, मेरी मर्यादा आपकी ही बनायी है, आप चाहो तो बदल दो

प्रभु भल कीन्ह मोहि सिख दीन्ही। मरजादा पुनि तुम्हरी कीन्ही॥ 59.5॥

प्रभु भल कीन्ह = आपने बहुत अच्छा किया है, *मोहि सिख दीन्ही* = मुझे शिक्षा दी है, *मरजादा पुनि* = किंतु हमारी मर्यादा या स्वभाव भी, *तुम्हरी कीन्ही* = आपका ही बनाया हुआ है।

समुद्र कहता है, हे प्रभु आपने हमें अच्छी शिक्षा दी। आपने धनुष पर बाण चढ़ाकर जो दंड दिया, वह हमारे लिये शिक्षा है। लेकिन हे प्रभु, आपने ही हमारा स्वभाव बनाया है। जैसा आपने बनाया है उसी प्रकार से हम हैं। अब हम जैसे हैं, वैसे रखना चाहो तो उस मर्यादा को बनाये रखो, और यदि आप कह दो कि हम बदल जायें तो हम बदल जायेंगे।

हे प्रभु, यदि आप मुझे सुखा देंगे तो इसमे मेरी महिमा समाप्त

ढोल गवाँर सूद्र पसु नारी। सकल ताड़ना के अधिकारी॥ 59.6॥
प्रभु प्रताप मैं जाब सुखाई। उतरिहि कटकु न मोरि बड़ाई॥ 59.7॥

प्रभु प्रताप मैं जाब सुखाई = प्रभु के प्रताप से मैं सूख जाऊँगा। *उतरिहि कटकु* = सेना पार उतर जायेगी, *न मोरि बड़ाई* = इसमें मेरी मर्यादा समाप्त हो जायेगी।

प्रभु यदि आप बाण चला देंगे तो मैं सूख जाऊँगा। आपकी सेना पार हो जायेगी, पर हमारी महिमा नहीं बचेगी। समुद्र जल का भंडार है, सभी प्राणियों के जीवन का आधार है। समुद्र से उठकर बादल बनते हैं, पानी बरसाते हैं, पानी जीवन देता है। आपने ही यह महिमा हमें दी है। आप महिमा को छीनना चाहें तो छीन लें।

हे प्रभु, आप जो कहें मैं वही तुरंत करूँ

प्रभु अग्या अपेल श्रुति गाई। करौं सो बेगि जो तुम्हहि सोहाई॥ 59.8॥

प्रभु अग्या अपेल = आपकी आज्ञा का उल्लंघन नहीं हो सकता, *श्रुति गाई* = वेद ऐसा कहते हैं, *करौं सो बेगि* = मैं वही तुरंत करूँगा, *जो तुम्हहि सोहाई* = जो आपको ठीक लगे।

हे प्रभु, वेदों का कहना है कि आपकी आज्ञा का उल्लंघन नहीं हो सकता। मैं वही तुरंत करूँगा जो आपको ठीक लगे।

राम मुस्कुराकर पूछते हैं, बताओ सेना समुद्र पार कैसे करे?

सुनत बिनीत बचन अति कह कृपाल मुसुकाइ।
जेहि बिधि उतरै कपि कटकु तात सो कहहु उपाइ॥ दोहा 59॥

सुनत बिनीत बचन अति = समुद्र के अत्यंत विनय भरे वचन सुनकर, *कह कृपाल मुसुकाइ* = श्रीराम मुस्कुराकर कहते हैं। *जेहि बिधि* = जिस प्रकार से, *उतरै कपि कटकु* = वानरों की सेना समुद्र पार करे, *तात* = हे तात, *सो कहहु उपाइ* = तुम वही उपाय कहो।

श्रीराम ने समुद्र के बहुत ही विनम्र वचन सुने। वे मुस्कुराकर कहते हैं, हे तात हमारी वानर सेना को समुद्र पार करना है। तुमको जो ठीक लगे वही उपाय बताओ। तुम्हारी मर्यादा बनी रही, तुम्हारा हित बना रहे और हमारी सेना भी पार हो जाये। तुम्हें सुखाने से हमारा मतलब नहीं है। प्रभु राम के मुस्कुराने के कई कारण हो सकते हैं। उन्हें लगा होगा कि कहाँ तो यह हमारी बात ही नहीं सुनता था, अब इतना विनम्र हो गया। पहले तो सुना नहीं, अब हमें ही दोष दे रहा है कि आपने जैसा बनाया वैसे ही तो हम हैं, हमारी क्या गलती? उन्हें लगा कि समुद्र का दोष भी हमारे ऊपर ही आ गया। जैसे पिता पुत्र को डाँटे और पुत्र कहे, अरे आपने जैसा हमें बनाया, वैसे ही तो हम हैं, हमारी क्या गलती?

समुद्र नल-नील के सहयोग से सेतु बनाने की सलाह देता है

नाथ नील नल कपि द्वौ भाई। लरिकाईं रिषि आसिष पाई॥ 60.1॥
तिन्ह कें परस किएँ गिरि भारे। तरिहहिं जलधि प्रताप तुम्हारे॥ 60.2॥

नाथ नील नल कपि द्वौ भाई = हे नाथ, नल नील नाम के दो भाई, *लरिकाईं* = बचपन में, *रिषि आसिष पाई* = ऋषियों का आशीर्वाद पाया था, *तिन्ह कें परस किएँ* = उनके स्पर्श मात्र से ही, *गिरि भारे* = बड़े पहाड़ भी, *तरिहहिं जलधि* = समुद्र में तैर जायेंगे, *प्रताप तुम्हारे* = आपके प्रताप से।

समुद्र कहता है, हे नाथ आपकी सेना में नल और नील नाम के दो वानर हैं, ये दोनो भाई हैं। बचपन में ऋषियों ने इन्हें आशीर्वाद दिया था कि ये भारी-से-भारी पर्वत को भी यदि स्पर्श करके समुद्र में फेंक देंगे तो वह पानी में डूबेगा नहीं, तैरता रहेगा। इस प्रकार इनके सहयोग से समुद्र पर आप सेतु बनाइये।

बचपन में नल और नील बहुत चंचल थे। समुद्र के किनारे ऋषि-मुनि पत्थर लगाकर रखते थे, उसी के ऊपर बैठकर स्नान करते थे। कुछ मुनि पत्थर की मूर्तियाँ रखकर उनकी पूजा करते थे। नल और नील शरारत में पत्थरों और मूर्तियों को उठाकर समुद्र में फेंक देते थे। ऋषि-मुनियों को बड़ी असुविधा होती थी। उन्होंने देखा, ये वानर हैं, बच्चे हैं, इन्हें क्या श्राप दें। तो उन्होंने इस प्रकार कह दिया कि नल और नील जो भी पत्थर पानी में फेंकेंगे वे डूबेंगे नहीं। अब ये लोग जब भी पत्थर फेंकते, वे डूबते नहीं, पानी में तैरते रहते। मुनि लोग उन पत्थरों या मूर्तियों को पकड़कर अपना काम चला लेते थे। यह बचपन की बात थी जिसे नल-नील भी भूल गये थे। समुद्र को यह बात पता थी। इसलिये उसने प्रभु राम को सलाह दी कि बंदर इन्हें पत्थर लाकर दें, ये समुद्र में डालते जायें। पत्थर डूबेंगे नहीं, तैरते जायेंगे, इस युक्ति से पुल बन जाएगा।

स्थिर रहकर व जीव-जंतुओं का फुटपाथ बना समुद्र ने मदद की

मैं पुनि उर धरि प्रभु प्रभुताई। करिहउँ बल अनुमान सहाई॥ 60.3॥
एहि बिधि नाथ पयोधि बँधाइअ। जेहिं यह सुजसु लोक तिहुँ गाइअ॥ 60.4॥

मैं पुनि उर धरि प्रभु प्रभुताई = मैं भी प्रभु की प्रभुता को हृदय में धारण करके, *करिहउँ बल अनुमान सहाई* = अपने बल के अनुसार सहायता करूँगा। *एहि बिधि नाथ* = हे नाथ इस प्रकार से, *पयोधि बँधाइअ* = समुद्र पर सेतु बनाइये, *जेहिं* = जिससे, *यह सुजसु* = यह सुंदर यश, *लोक तिहुँ* = तीनों लोकों में, *गाइअ* = गाया जाये।

मैं भी आपके प्रताप को हृदय में स्मरण करके अपने सामर्थ्य अनुसार सहायता करूँगा। सेतु बनने से आपका सुंदर यश तीनों लोकों में गाया जायेगा। अभी तो सेना पुल से जायेगी, फिर सब लोग भी इसका प्रयोग करेंगे। समुद्र में

यदि ज्वार-भाटा आये तो पत्थर यहाँ-वहाँ बह जायेंगे, पर यदि समुद्र शांत रहे तो पत्थर आसानी से रखे जायेंगे, पुल बन जायेगा। समुद्र ने स्थिर रहकर पुल बनाने में सहायता की। पुल बनने के बाद जीव-जंतुओं को समुद्र ने आज्ञा दी कि देखो प्रभु राम आये हैं, तुम सब उनके दर्शन करो। जीव-जंतु पुल के दोनों तरफ आ गये। वे पुल से ऐसे सट गये मानों दोनों तरफ फुटपाथ बन गये हों। आगे वर्णन आयेगा कि वानर सेना कुछ पुल से तो कुछ जीव-जंतुओं के ऊपर से समुद्र के पार गई।

समुद्र के उत्तर में रहने वाले दुष्टों का अग्नि बाण से विनाश

एहिं सर मम उत्तर तट बासी। हतहु नाथ खल नर अघ रासी॥ 60.5॥
सुनि कृपाल सागर मन पीरा। तुरतहिं हरी राम रनधीरा॥ 60.6॥
देखि राम बल पौरुष भारी। हरषि पयोनिधि भयउ सुखारी॥ 60.7॥

एहिं सर = इस बाण से, *मम* = मेरे, *उत्तर तट बासी* = उत्तर तट पर रहने वालों को, *हतहु नाथ* = हे नाथ मारिये, *खल नर अघ रासी* = जो दुष्ट मनुष्य पाप से भरे हैं। *सुनि कृपाल सागर मन पीरा* = श्रीराम ने समुद्र के मन की पीड़ा को सुनकर, *तुरतहिं हरी राम रनधीरा* = तुरंत ही दूर कर दिया। *देखि राम बल पौरुष भारी* = श्रीराम का भारी बल व पौरुष देखकर, *हरषि पयोनिधि भयउ सुखारी* = समुद्र प्रसन्न होकर सुखी हो गया।

राम ने कहा, तुम्हारी बात ठीक है, पर धनुष के ऊपर हमने जो अग्नि बाण चढ़ा दिया है, यह तो लक्ष्य तक जायेगा ही, इसका क्या करें? समुद्र ने कहा, हे नाथ, मेरे उत्तर तट पर पाप से भरपूर बहुत ही दुष्ट मनुष्य रहते हैं, उन्हें मारिये। उस समय वहाँ समुद्री डाकू रहते थे जो बहुत लूटपाट करके समुद्र में स्नान करते थे। समुद्र भी तीर्थ है, उसे बहुत कष्ट होता था। इसलिये उसने उन्हें मारने की प्रार्थना की। भगवान ने रामेश्वरम् से ही बाण चलाया जो मिसाइल की तरह गुजरात में गिरा। जब वहाँ जाकर लगा तो समुद्र के किनारे रहने वाले सब दुष्ट मारे गये। वह स्थान रेगिस्तान बन गया, समुद्र सूख गया। इस प्रकार श्रीराम ने जब देखा कि समुद्र पीड़ित है तो उसकी पीड़ा दूर कर दी। समुद्र ने अपनी आँखों से देख लिया कि श्रीराम के बाण में कितनी शक्ति है। उसे बड़ी प्रसन्नता हुई।

समुद्र देर से आने का कारण बता प्रणाम कर चला जाता है

सकल चरित कहि प्रभुहि सुनावा। चरन बंदि पाथोधि सिधावा॥ 60.8॥

सकल चरित कहि = अब समुद्र अपना सारा चरित्र, *प्रभुहि सुनावा* = प्रभु को सुनाता है, *चरन बंदि* = उनकी चरण वंदना करके, *पाथोधि सिधावा* = समुद्र चला जाता है।

तुलसीदास जी कहते हैं कि अब समुद्र अपने सभी चरित्र प्रभु श्रीराम को सुनाता है। ये चरित्र क्या हैं? जब हनुमान जी समुद्र के ऊपर से जा रहे थे, तब उसने मैनाक पर्वत से कहा, तुम ऊपर निकलकर हनुमान की सहायता करो। उस समय बड़ी उदारता से राम दूत की सहायता करने को तैयार था। अब दूत के स्वामी श्रीराम स्वयं समुद्र के सामने बैठे प्रार्थना कर रहे हैं पर वह सुन नहीं रहा है। जैसे श्रीराम जब गंगा पार करने के लिये केवट से कहते हैं, नाव लेकर आओ, वह श्रीराम के कहने से नाव नहीं लाता। कहता है, नहीं हम ऐसे नहीं जाने देंगे। उसने राम के चरण धोये, चरणोदक को स्वयं पिया, अपने पूरे परिवार को पिलाया। इस प्रकार जब वह परिवार सहित इस संसार सागर से पार उतर गया तब राम को गंगा पार उतरवाया। इसी प्रकार समुद्र ने पहले अपना काम बनवा लिया। जब राम ने अपने धनुष पर बाण चढ़ा लिया तब आया। वह जानता था कि बाण तो वापस जायेगा नहीं। प्रार्थना करके उस बाण से अपने शत्रुओं का विनाश करवायेंगे, फिर प्रभु को जाने देंगे। यही सब चरित्र उसने अपने प्रभु राम को बता दिये। समुद्र प्रभु के चरणों में वंदना करके चला गया।

16. सुंदरकाण्ड की महिमा व पाठ की विधि

रामकथा की महिमा जानकर यदि पाठ करें तो उसका फल शीघ्र ही प्राप्त होता है। कथा के बीच-बीच में उस प्रसंग की महिमा शंकर जी बताते रहते हैं। प्रत्येक काण्ड के अंत में तुलसीदास जी रामचरित्रों के पाठ से होने वाले लाभों का वर्णन करते हैं। ये चरित्र कलियुग के मल को दूर करते हैं। सुख प्रदान कर दु:खों को दूर करते हैं। ये सभी प्रकार का मंगल प्रदान करने वाले हैं। इनके पाठ की विधि तुलसीदास जी बालकाण्ड के प्रारंभ में बताते हैं '*जे एहि कथहि सनेह समेता। कहिहहिं सुनिहहिं समुझि सचेता॥*' इस कथा को स्नेह से, प्रेम

से, प्रसन्नता से, सावधानी के साथ समझ-बूझकर कहें या सुनें। अब अपने को जाँचें कि क्या हम कथा को समझ-बूझकर पढ़ रहे थे? क्या हम प्रसन्नता से पढ़ रहे थे? क्या हमारा मन सजग था? दो ही चौपाइयों का पाठ करें पर समझ कर। इस रामकथा को अपने मन को ही सुनायें, उसे ही समझायें, धीरे-धीरे उसे रास्ते पर लायें। संसार में व्यक्ति अपने को तो ठीक से समझता नहीं, दुनिया को समझाता रहता है, ऐसा करो, वैसा करो। यदि हमारा मन समझ गया तो सारी दुनिया समझ गयी।

यह चरित्र कलियुग के पापों का नाश करता है

निज भवन गवनेउ सिंधु श्रीरघुपतिहि यह मत भायऊ।
यह चरित कलि मलहर जथामति दास तुलसी गायऊ॥ छंद॥

निज भवन गवनेउ सिंधु = समुद्र अपने घर चला गया, *श्रीरघुपतिहि यह मत भायऊ* = श्रीराम को उसकी यह सलाह अच्छी लगी। *यह चरित* = यह चरित्र, *कलि मलहर* = कलियुग के सभी पापों को दूर करने वाला है, *जथामति दास तुलसी गायऊ* = यह चरित्र तुलसीदास जी अपनी बुद्धि के अनुसार कह रहे हैं।

समुद्र अपने घर चला गया, रामजी ने समुद्र की बात स्वीकार कर ली। यह चरित्र कलियुग के मल का हरण करने वाला है। तुलसीदास जी कहते हैं कि जैसी मेरी बुद्धि थी वैसा वर्णन कर दिया। वे इस प्रकार से वर्णन करते हैं कि सभी पक्ष आ जायें। इतिहास, आध्यात्मिक ज्ञान, श्रोताओं को प्रेरणा और लेखक का भी विकास होता रहे, इस तरह ग्रंथ लिखा है। तुलसीदास जी को श्रीरामचरितमानस लिखने में लगभग 30 माह का समय लगा। इस अवधि में वे भाव समाधि में ही रहे, उसी अवस्था में श्रीरामचरितमानस लिखी। श्रीराम के चरित्रों की गुणगाथा लिखना भी साधना ही है।

राम चरित्रों के गाने व सुनाने से सुख की प्राप्ति

सुख भवन संसय समन दवन बिषाद रघुपति गुन गना।
तजि सकल आस भरोस गावहि सुनहि संतत सठ मना॥ छंद॥

सुख भवन = सुख के धाम, *संसय समन* = भ्रम का नाश करने वाले, *दवन बिषाद* = दु:ख को समाप्त करने वाले, *रघुपति गुन गना* = श्रीराम के गुणों का समूह है। *सठ मना* = रे मूर्ख मन, *तजि सकल आस भरोस* = तू सभी आशाओं व भरोसों का त्याग करके, *गावहि सुनहि संतत* = निरंतर श्रीराम के गुणों को गाकर सुना और सुन।

श्रीराम के चरित्र सुख का भवन हैं, सुख प्रदान करते हैं। ये संशय व अज्ञान को मिटाने वाले हैं। ये चरित्र दु:ख को समाप्त कर देते हैं। रे मूर्ख मन, तू समस्त आशाओं और भरोसों को छोड़कर, निरंतर श्रीराम के गुणों को सुन और सुना।

मन अपनी मनमानी करता है, रे मन तू रामकथा से सुधर जा

हमारा मन अपने अनुसार कार्य करता है। हम जानते हैं क्रोध नहीं आना चाहिये पर मन में क्रोध आयेगा। व्यक्ति चाहता है, हम अच्छे से रहें पर मन में विकार आते हैं। इस मन का क्या करें? तुलसीदासजी कहते हैं कि अपने मन को समझाना पड़ता है। संसार में व्यक्ति अपने को तो ठीक से समझता नहीं और दुनिया को समझाता रहता है, ऐसा करो, वैसा करो। व्यक्ति में जब थोड़ी-सी भी समझ आती है तो वह जान जाता है कि पहले अपने मन को ही समझाओ, फिर दुनिया को समझाना। हमारा मन समझ गया तो सारी दुनिया समझ गयी। इसलिये जब तुलसीदास जी जैसे दिव्य संत, कवि, राम भक्त अपने मन को समझाते हैं तो हम भी सबसे पहले यह रामकथा अपने मन को ही सुनायें, उसे ही समझायें, धीरे-धीरे उसे रास्ते पर लायें।

राम के चरित्रों के गुणगान से सभी प्रकार के मंगल प्राप्त

सकल सुमंगल दायक रघुनायक गुन गान।
सादर सुनहिं ते तरहिं भव सिंधु बिना जलजान॥ दोहा 60॥

सकल सुमंगल दायक = संपूर्ण मंगलों को देने वाला है, *रघुनायक गुन गान* = श्रीराम के गुणों का गान। *सादर सुनहिं ते* = जो लोग इसे आदर सहित सुनते हैं, *तरहिं भव सिंधु* = इस संसार सागर को पार कर जाते हैं, *बिना जलजान* = बिना जहाज के।

श्रीराम के सुंदर चरित्रों को गाने से सभी प्रकार के मंगलों की प्राप्ति होती है। जो लोग इस कथा को आदर सहित सुनते हैं, वे इस संसार सागर को बिना जहाज की सहायता के ही पार कर जाते हैं। यह कथा ही मनुष्यों के लिये पुल का काम करती है। जब पुल रहता है तो लोग धीरे-धीरे पैदल ही चलकर नदी को या समुद्र को पार कर लेते हैं। नाव या जहाज की आवश्यकता नहीं पड़ती। इसी प्रकार रामकथा थोड़ा-थोड़ा नियमित पढ़ें, यह बहुत बड़ी साधना है। मन से असंतोष दूर होगा, शांति आयेगी, आनंद की प्राप्ति होगी।

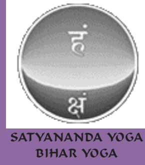


नोट



अवलोकितेश्वर (सुबोध अग्रवाल) का जन्म मध्यप्रदेश के सतना जिले में 1962 में हुआ। उन्होंने स्वामी सत्यानन्द सरस्वती से जुलाई 1983 में मंत्र दीक्षा ग्रहण की। अपने शैक्षिक जीवन को 1988 में समाप्त कर मुंगेर आश्रम में ढाई वर्ष तक गुरु सेवा में रत रहे, और गुरुदेव ने उनको अवलोकितेश्वर नाम भी प्रदान किया। वे अभी मध्यप्रदेश के सतना जिले में चार्टर्ड एकाण्टेण्ट का कार्य कर रहे हैं।

श्री गुरुदेव की प्रेरणा से भारत की अनुपम संस्कृति के प्रचार व उत्थान हेतु प्रवचनों को संग्रहित कर शीर्षकों के माध्यम से लेखन व संपादन का मंगलकारी एवं उत्तम कार्य शुरू किया। प्रथम ग्रंथ श्री हनुमान चालीसा है जिसमें चिन्मय मिशन के प्रमुख स्वामी तेजोमयानन्दजी के प्रवचनों का संग्रह है। दूसरा ग्रंथ गोस्वामी तुलसीदास कृत श्रीरामचरितमानस के सुन्दरकाण्ड पर चिन्मय मिशन के वरिष्ठ स्वामी श्री शंकरानंदजी के प्रवचनों का संग्रह है।



SATYANANDA YOGA
BIHAR YOGA

श्री स्वामी सत्यानन्द जी कहते हैं कि श्रीरामचरितमानस का शब्दानुवाद होना चाहिये। उनकी प्रेरणा व स्वामी निरंजनानंद सरस्वती के कृपापूर्ण मार्गदर्शन में श्रीरामचरितमानस के सुंदरकाण्ड का शब्दानुवाद, श्री स्वामी सत्यानन्द जी के रिखिया सत्संगों का संकलन, चिन्मय मिशन के वरिष्ठ स्वामी श्री शंकरानंद जी के प्रवचनों का संकलन व संपादन 16 मुख्य शीर्षकों व उपशीर्षकों के माध्यम से किया गया है। परमपूज्य गुरुदेव का निर्देश है कि तुलसीदास जी ने जैसा ग्रंथ लिखा है, उसे वैसा ही समझा जाये। इस बात को ध्यान में रखते हुए ही यह संकलन व संपादन कार्य किया गया है।

तुलसीदास जी ने इस काण्ड का नाम सुंदरकाण्ड दिया है, क्योंकि इसमें बड़ी सुंदर बातें कही गयी हैं और सुंदर शब्द भी अनेकों बार आया है। सबसे सुंदर बात है, हनुमान जी द्वारा अपने प्रभु के लिये किये गये सेवा कार्य का वर्णन। हनुमान जी श्रीराम की सेवा में हैं, और सेवा के लिये कैसा उत्साह, बुद्धि व बल चाहिये, वह सब इसमें वर्णित है। ईश्वर द्वारा रचित इस संसार में रहने वाले लोगों की सेवा भी भगवान की ही सेवा है। ऐसे भाव के साथ हमें इन सुंदर शिक्षाओं को आत्मसात् कर अपने जीवन को सुंदर बनाने का प्रयास करना चाहिए।

